रचना-प्रबोध

संशोधित और परिवर्द्धित संस्करण

पंजाब-यूनिवर्सिटी के Inter., F. O. L. और हिन्दी-रत्न,

पटना-यूनिवर्सिटी के Matriculation

तथा हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की

प्रथमा परीक्षा के लिये

पाठ्य-पुस्तक

अध्यापक रामरत्न

रचना-प्रबोध

संशोधित और परिवर्द्धित संस्करण

पंजाब-यूनिवर्सिटी के Inter., F. O. L. और हिन्दी-रत्न,

[illegible]-यूनिवर्सिटी के Matriculation

तथा हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की

प्रथमा परीक्षा के लिये

पाठ्य-पुस्तक

प्रकाशक—

रत्नाश्रम-आगरा

चतुर्थ संस्करण

मूल्य ।ii)

पं० सत्यव्रत शर्म्मा द्वारा शान्ति प्रेस, आगरा में मुद्रित।

रचना-प्रबोध

प्रथम अध्याय।

हिन्दी-भाषा और उसका शब्द-भंडार।

भाषा।

हृदय एक पुष्प है, भाषा उसका विकास है, और भाव गन्ध है। हृदय एक वाद्य-यन्त्र है, रसना रीड है, इच्छा उँगली है और भाषा झंकार है।

भाषा विचार का साकार रूप है।

भाषा से देश जाना जाता है, हम देश के जल, वायु, अग्नि, पृथ्वी और आकाश के संक्षिप्त रूप हैं। हम स्वयं देश हैं, भाषा हमारी कीर्ति है।

विचार भाषा का पुत्र है, कार्य पौत्र है, और सम्मति कन्या है जो प्रदान की जाती है और दूसरे घर में जाकर वृद्धि पाती है।

प्रत्येक पूरी बात को वाक्य कहते हैं। प्रत्येक वाक्य शब्दों का समूह है। प्रत्येक शब्द एक सार्थक ध्वनि है और भाषा वाक्यों का समूह है।

कविता कौमुदी।

भाषा बन्धन है। समाज विशेष को एक सूत्र में बाँधने का साधन है। एक ही भाषा बोलने वाला समाज-विशेष एक जाति है। अपनी ही जाति के व्यक्ति अपनी भाषा द्वारा अपना भाव दूसरों

को समझाते हैं और दूसरों का समझते हैं। इस प्रकार अनेक मानव-समाजों की अनेक भाषाएँ हैं। भाषा-भेद से समाज-भेद है, जाति-भेद है।

भाषाओं का आदि स्रोत।

परन्तु जब इन भिन्न २ भाषाओं का सूक्ष्म विश्लेषण करते हैं तो प्रत्येक भाषा के मुख्य २ व्यवहारिक शब्दों में एक अजीव समता पाई जाती है। भाषाविज्ञानियों ने बड़े परिश्रम से खोज बीन कर के निश्चित किया है कि संसार की सारी भाषाएँ तीन भागों में बाँटी जा सकती हैं:—

आर्य्य भाषाऐं—इस भाग में संस्कृत, प्राकृत, और उससे निकली हुई हिन्दी, बंगला, मरहठी, गुजराती आदि प्रचलित आर्य भाषाऐं तथा अँगरेज़ी फ़ारसी, यूनानी, लैटिन आदि हैं।

शामी भाषाऐं—इब्रानी, हवशी, और अरबी आदि।

तूरानी भाषाऐं—मुग़ली, चीनी, जापानी, तुर्की, और दक्षिण भारतीय भाषाएँ हैं।

आर्य-भाषाओं की शब्द समता।

संस्कृत	मीडी	फारसी	यूनानी	लैटिन	अंग्रेज़ी	हिन्दी
पितृ	पतर	पिदर	पाटेर	पेटर	फ़ादर	पिता
दुहितृ	दुग्धर	दुख़्तर	थिगाटेर	०	डाटर	धी
मातृ	मतर	मादर	माटेर	मेटर	मदर	माता
भ्रातृ	ब्रतर	बिरादर	फाटेर	प्रटेर	ब्रदर	भाई
नाम्न	नाम	नाम	ओनोमा	नामेन	नेम	नाम
अस्मि	अह्मि	अस	ऐमी	एम	ऐम	हूं
ददामि	दधामि	दिहम	डिडोमी	डो	०	देऊं

इस प्रकार के हज़ारों शब्द हैं जो सिद्ध करते हैं कि इन भाषाओं के क्रम-विकास के मूल में एक ऐसी भाषा अवश्य है जिससे इन सब का सामान्य सम्बंध है। सम्भव है वैदिक संस्कृत इन सब का उद्‌गम हो, या उससे भी परे कोई ऐसी भाषा हो जिससे इन सबका जन्म हुआ हो। इस विषय में यह निश्चित् अनुमान होता है प्रारंभ में आर्य लोग अपने आदिम स्थान से चारों ओर गये और साथ ही अपनी भाषाओं को ले गये। पश्चिम में ग्रीक, लैटिन अँगरेज़ी आदि भाषाओं की नीम पड़ी। फ़ारस में मीडी द्वारा फ़ारसी और भारत में संस्कृत का प्रचार हुआ। यूरोपीय विद्वानों का मत है कि आदिम स्थान हिन्दूकुश के पार मध्य एशिया है और भारतीय अनेक विद्वानों का विचार है कि आदिम स्थान काश्मीर या उससे उत्तरीय प्रदेश है। यहीं से आर्य लोग चारों ओर गये और अपनी सभ्यता तथा भाषा का प्रचार किया।

हिन्दी भाषा की उत्पत्ति।

हिन्दी भाषा की उत्पत्ति के सम्बंध में विद्वानों की भिन्न २ सम्मतियाँ हैं। किन्तु इसमें सब का एक ही मत है कि हिन्दी की मुख्य जननी प्राकृत भाषाएँ हैं। भेद इस बात में है कि इन परम्परागत प्राकृतों की मुख्य जननी कौनसी भाषा है। कुछ लोगों का विचार है कि वैदिक-भाषा या पुरानी संस्कृत धीरे २ प्राकृत के रूप में बदलने लगी। अर्थात् आर्य लोग जब अपने आदिम स्थान से दक्षिण-पूर्व भारत की ओर बढ़ने लगे तो यहाँ अनार्य लोगों की भाषा का उसमें संमिश्रण हुआ। वही प्राकृत भाषा कह लाई। प्राकृत के भी कई भेद थे। उन्हीं में से एक का संस्कार करके उसे परमार्जित किया। वही परमार्जित भाषा संस्कृत हुई। किन्तु प्राकृत निरन्तर बदलती हुई आगे बढ़ती गई,

जिससे पाली आदि अन्य प्राकृतों का जन्म हुआ। इन बहुत सी प्राकृतों का भी अपभ्रंश हुआ। इन्हीं अपभ्रंशों से प्राचीन हिन्दी का जन्म हुआ।

अनेक विद्वानों का मत है वैदिक संस्कृत से प्रौढ़कालीन साहित्यिक संस्कृत का विकास हुआ। उसी साहित्यिक संस्कृत से प्राकृतों का क्रम-विकास हुआ। कतिपय विद्वान यह भी कहते हैं कि एक ओर वैदिक भाषा से साहित्यिक संस्कृत, दूसरी ओर आर्ष-प्राकृत का जन्म हुआ और दोनों का प्रवाह फिर एक हो गया। जिस से अनेक प्राकृतों की जननी पाली नामक प्राकृत पैदा हुई। उससे,मागधी,शौरसेनी,महाराष्ट्री आदि प्राकृतें बनीं। शौरसेनी और मागधी के बीच में अर्द्ध-मागधी नामक प्राकृत का जन्म हुआ।

इन सब प्राकृतों से अपभ्रंश भाषाएँ बनीं। शौरसेनी मध्य-प्रदेश (व्रजमण्डल), मागधी विहार, अर्द्ध-मागधी दोंनों के बीच में बोली जाती थी। आवन्ती अवन्तिका (उज्जैन) की भाषा थी। इनसे जन्मी हुई अपभ्रंश गुजरात से लेकर विहार तक व्यापक होगई। अपभ्रंश के तीन भेद थे नागर, उपनागर और व्राचड़। सबमें मुख्य शौरसेनी प्राकृत का नागर नामक अपभ्रंश,(जो मध्य-प्रदेश में बोली जाती थी) सारे उत्तरी भारत की साहित्यिक भाषा होगई। यही शौरसेनी अपभ्रंश हमारी हिन्दी का मूल श्रोत है। कुछ लोग इसे पुरानी हिन्दी भी कहते हैं जिसकी झलक चन्द-बरदायी के रासौ में मिलती है।

अनेक लोगों का मत है कि प्राकृत स्वयं मूलभाषा है उसीसे अन्य प्राकृतों का जन्म हुआ। किन्तु यह मत अधिक युक्ति-युक्त नहीं। नीचे लिखी शब्द-तालिकाओं से पता चल जायगा कि हमारी भाषा के अधिकांश शब्द (मुख्य २ व्यवहारिक शब्द) संस्कृत के हैं जो प्राकृत बनते हुए हिन्दी में आये हैं:—

(१)

संस्कृत	पुरानी प्राकृत	पाली	प्राकृत	हिन्दी
अग्निः	अग्गि	अग्गि	अग्गी	आग
बुद्धिः	बुद्धि	बुद्धि	बुद्धी	बुद्धि
षोडस	सोलस	सोलस	सोलह	सोलह
विंशति	बीसा	बीसति बीसम्	बीसा	बीस
दधि	दहि दहिम्	दधि	दहि दहिम्	दही

(२)

संस्कृत	प्राकृत	हिन्दी
हसति	हसइ	हँसै हँसे
कंपते	कपइ	कँपइ कँपै कांपे
युध्यते	जुझइ	जूझे जूझै
रक्षति	रक्खइ	राखे रक्खे
कर्म्म	कम्म	काम
कातरः	काहल	काहिल
अन्तःपुर	अन्देउर	अन्दर
अद्य	अज्ज	आज
भगिनी	वहिणी	बहिन
दुहिता	धिया	धी
वृक्ष	रक्खो	रूख
प्रभूत	बहुत्त	बहुत
विद्युत्	बिज्जु	बिजली
शय्या	सेजा	सेज
तैलम्	तेल्ल	तेल
कृष्ण	कन्ह	कान्हा
पितृगृह	पिइघर	पीहर

संस्कृत	पाली	हिन्दी
शिथिल	सढ़िल	ढीला
एकादश	एहारह	ग्यारह
खदिर	खद्दर	खैर
स्तंभ	थम्म	थाम या खम्म
हस्त	हत्थ	हाथ
गम्भीरम्	गहिरम्	गहिरा
अहम्	अम्मि	हम, मैं
त्वम्	तुम्ह	तुम, तू
बातुलम्	बाउलो	बावला
उपाध्यायः	उपज्झओ	ओझा
मृतिका	मटिआ	मट्टी
घृतम्	घियम्	घी

इन उदाहरणों से यह सिद्ध हो जाता है कि संस्कृत, प्राकृत और हिन्दी शब्दों का कितना घनिष्ठ सम्बंध है साथही इस मत का खंडन हो जाता है कि प्राकृत मूलभाषा है। प्राकृतों के शब्द-भंडार का ही नहीं, व्याकरण का भी अनुशीलन करने से स्पष्ट हो जाता है कि इन की संस्कृत जननी है और प्राकृतों से हिन्दी का जन्म हुआ है। अतः परम्परागत सम्बंध तो है ही पर बहुत से ऐसे शब्द हैं जो सीधे संस्कृत से हिन्दी में आये हैं और आज तक उनका वही रूप प्रचलित है; जैसे:—

तनु, मन, धन, जन, शूर, वर्षा, समुद्र, बसन्त, साधु, सन्त, दिन, काम, रात्रि, राजा, कवि आदि।

हिन्दी भाषा का विकास ।

८वीं शताब्दी से लेकर १२वीं शताब्दी तक अपभ्रंशों का समय है। इसी समय में हिन्दी भाषा का अंकुर जमा है।

संधि-काल की भाषा का कोई ग्रंथ प्राप्त नहीं है। पहलेपहल इसकी झलक चंद के पृथ्वीराज रासो में मिलती है। बहुत लोगों का अनुमान है "रासो उस अपभ्रंश की हिन्दी में है जो आगे चलकर राजपूताने की भाषा बनी है।" अब भी रासो के प्रयोग राजपूताने में प्रचलित हैं। राजपूताने की कविता की भाषा डिंगल है। डिंगल-भाषा का ही कुछ लोग इसे आदि ग्रंथ मानते हैं। ऐसा मानने पर भी सन्धिकाल की हिन्दी का बहुत कुछ पता इस ग्रंथ से मिलता है। आदि में भाषा बहुत कुछ परिष्कृत होकर साहित्य निर्म्माण के योग्य बनती है। विशेष कर पद्य की भाषा बनने में तो और भी समय लगता है। रासो के साथ ही बुदेलखंड में जगनिक कवि ने आल्हा नामक ग्रंथ लिखा किन्तु असली ग्रंथ का पता नहीं चलता। प्रान्तीय-कवियों ने पीछे से यह ग्रंथ अपनी २ भाषा में कर लिया। इसके पीछे पद्य का पूर्ण विकास हुआ। यद्यपि खुसरो ने खड़ी बोली में कुछ रचनाएं कीं, जायसी ने अवधी में पद्मावत लिखा, तुलसीदास ने बैसवाड़ी में रामायण आदि ग्रंथ रचे, तथापि वैष्णव-कवियों के प्रभाव से ब्रजभाषा का पूर्ण प्राधान्य हो गया। प्रायः उत्तरी भारत में काव्य की यह प्रधान भाषा बन गई। समाज में नयी धारणा नयी शिक्षा और नये विचारों से नया उत्साह हुआ और कविता भी बोलचाल की भाषा में होने लगी। परन्तु आज भी अवधी, विहारी पंजाबी, मराठी आदि भाषाओं में कुछ प्रान्तीय-कवि रचना करते हैं और करते आये हैं किन्तु ब्रजभाषा का साम्राज्य एक दम उठ नहीं गया है। विहार, अवध, ब्रजमंडल, राजपूताने आदि में अब भी अनेक कवियों की कविता का माध्यम ब्रजभाषा है। धीरे २ खड़ी बोली के पद्यों का प्रचार बढ़ रहा है। ज़माने की रफ़्तार से आये हुए नये भावों को बोलचाल की भाषा में व्यक्त करने में अधिक सहूलियत है। यह तो रही पद्य की बात। गद्य का १३वीं शताब्दी से पहले

कोई पता नहीं चलता । मारवाड़ की कुछ सनदों में वहाँ की भाषा के नमूने मिलते हैं। १५वीं शताब्दी के प्रारंभ में बाबा गोरखनाथजी की ब्रजभाषा रचना मिलती है। १७वीं शताब्दी में गोस्वामी विट्ठलनाथ, गंगा भाट, गो० गोकुलनाथ, महात्मा नाभादास तथा जटमल आदि की गद्य रचनाएँ मिलती हैं। अधिकांश इन लोगों ने ब्रजभाषा गद्य में ही लिखा । हां, गंगाभाट और जटमल ने ब्रजभाषा गद्य में खड़ी बोली का पुट दिया । १८वीं सदी में देव, सूरति मिश्र, दास और ललितकिशोरी आदि ने भी ब्रजभाषा गद्य ही में रचना की। इसके बाद १९वीं शताब्दी के मध्य में खड़ी बोली का उदय हुआ ।

यद्यपि लल्लूलाल जी से पहले के कुछ गद्य-लेखकों का पता चलता है तथापि सर्वसाधारण में प्रकाश पहुँचाने वाली कोई रचना उनकी सामने नहीं आई। लल्लूलाल को ही यह श्रेय मिला। उन्होंने १८६० में प्रेमसागर आगरे की बोली में लिखा । उन्हीं के समकालीन सदलमिश्र हुए। ब्रजभाषा से खड़ी बोली पृथक् हो रही है, लल्लूलाल की रचना में इसका चित्र स्पष्ट दिखाई देता है । उन्होंने राजनीति आदि पुस्तकें शुद्ध ब्रजभाषा गद्य में भी लिखी हैं। इसके बाद राजा शिवप्रसाद की खड़ी बोली में अरबी फ़ारसी के विशेष शब्दों का प्रयोग हुआ। परन्तु राजा लक्ष्मणसिंह की विशुद्ध हिन्दी भाषा में एक भी अरबी, फ़ारसी का शब्द नहीं है । राजा लक्ष्मणसिंह की शकुन्तला का गद्य शुद्ध आगरे की खड़ी बोली में है। इसके बाद भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने हिन्दी को परिष्कृत किया । संस्कृत के अनेक शब्द इनकी भाषा में मिल गये, जिससे भाषाकी व्यञ्जक-शक्ति बहुत बढ़ गई। आधुनिक-हिन्दी की उन्नति का पूर्ण श्रेय हरिश्चन्द्र ही को है। बालकृष्णभट्ट अम्बिकादत्त व्यास, प्रताप नारायण मिश्र, बालमुकुंद गुप्त, तथा

महावीर प्रसाद द्विवेदी आदि अनेक महानुभावों की रचनाओं से हिन्दी गद्य का कलेवर पुष्ट हुआ। इसके पश्चात् सैकड़ों गन्य-मान्य लेखकों की लेखनी से भाषा की वृद्धि हुई और हो रही है। अनेक अनुवादक प्रान्तीय तथा विदेशी भाषा के उत्कृष्ट ग्रंथों का अनुवादक कर के उसमें नये २ मुहाविरे और प्रयोगों की वृद्धि कर रहे हैं। आये दिन उच्च शिक्षा का माध्यम हिन्दी बनाने का प्रयत्न भाषा की पूर्ण श्री-वृद्धि करेगा, ऐसा विश्वास है।

हिन्दी की व्यापकता।

यह तो निश्चय हो चुका है कि उर्दू हिन्दी ही की एक शाखा है और मरहठी, गुजराती तथा बंगाली आदि हिन्दी की बहिनें हैं।

बंगाली उसी मागधी के अपभ्रंश की प्रतिच्छाया है जिससे बिहारी हिन्दी की कुछ उप-भाषाएं निकली हैं। विद्यापति की रचना हिन्दी और बंगला का सम्बन्ध दिखाती हैं।

पुरानी गुजराती तो पुरानी हिन्दी से बहुत मिलती जुलती है। गुजराती की पुरानी कविता, व्रज भाषा की कविता से पूरा योग खाती है। गुजराती पर पारसी भाषा का जो प्रभाव पड़ा है उससे उसके रूप में कुछ विशेष परिवर्तन हुआ है।

हिन्दी, मरहठी, गुजराती और बंगला का अधिकांश शब्द-भंडार प्राकृतों और संस्कृत से भिन्न २ प्रबाहों द्वारा आया है।

अपने ही क्षेत्र में हिन्दी भी भिन्न २ रूपों में बटी हुई है। बिहार में मैथिल, भोजपुरी, मगही आदि मागधी से उत्पन्न हुई हैं। यह व्यापक हिन्दी का एक भेद ही हैं यद्यपि इनकी उत्पत्ति के साथ उड़िया और बंगला का नाम लिया जाता है क्योंकि यह भी मागधी के अपभ्रंश से बनी हैं। इधर

पुराने मध्य प्रदेश (व्रजमंडल) और उसके आस पास में व्रज-भाषा और उससे मिलती जुलती बुँदेली, बघेली, कन्नौजी आदि भाषाएँ हैं जो धीरे २ सामान्य हिन्दी में बदल रही हैं। पंजाबी भाषा को कुछ लोग स्वतंत्र भाषा मानते हैं परन्तु वह पश्चिमी हिन्दी से बहुत सम्बन्ध रखती है। हरियानी जो हिसार, करनाल और रुहतक में बोली जाती है पंजाबी, मारवाड़ी और पश्चिमी हिन्दी का संमिश्रण है। मारवाड़ी भाषा भी हिन्दी का एक उपभेद है। यह सब प्रान्तिक हिन्दी भाषाएँ अपने २ प्रान्त में बोली जाती हैं, सामान्य हिन्दी का एक भेद हैं जो दिल्ली और मेरठ तथा उसके आस पास बोली जाती है। आगरे की भाषा भी शुद्ध हिन्दी है जिसमें पहले पहल लल्लूलाल ने प्रेमसागर लिखा था। आगरे की शुद्ध बोली का ठीक रूप राजा लक्ष्मणसिंह कृत अभिज्ञान शकुन्तला नाटक के गद्य में है। यही,दिन प्रतिदिन बढ़ती हुई शुद्ध और परमार्जित हिन्दी है जिसे खड़ी बोली भी कहते हैं। साहित्यिक और शिक्षा की भाषा तो समस्त उत्तरी भारत की हो गई है पर मेरठ, दिल्ली, आगरा आदि की ही भांति, अनेक उत्तर भारतीय नगरों की बोल चाल की भाषा बन रही है।

साधारणतया इस सामान्य हिन्दी के तीन भेद हैं:—

१—विशुद्ध हिन्दी— जिसमें अधिकतर संस्कृत के तत्सम और तद्भव शब्दों का प्रयोग होता है।

२—उर्दू—जिसमें संस्कृत के तत्सम और तद्भव शब्दों का स्थान अरबी फ़ारसी के शब्दों ने ले लिया है। असल में यह हिन्दी का ही एक भेद है जिसे लोग फ़ारसी अक्षरों में लिखते हैं।

हिन्दोस्तानी—जिसमें बोलचाल के साधारण शब्दों का अधिक प्रयोग होता है यह हिन्दी उर्दू के बीच का रूप है।

हिन्दी का शब्द-भंडार।

प्राचीनकाल से ही हमारी भाषा का कोई विशेष नाम न हो कर उसे केवल **भाषा** ही कहते हैं। वैदिक और साहित्यिक संस्कृत में भी भाषा ही का प्रयोग है। हिन्दी का भी पुराना नाम भाषा ही है। तुलसीदास जी ने अपने काव्य में भाषा ही शब्द लिखा है—

"**भाषा बद्ध** करब में सोई"
"का **भाषा** का संस्कृत प्रेम चाहिये साँच"
"**भाषा** जे हरि चरित बखाने"

एक पुराना श्लोक है:—

संस्कृतं प्राकृतं चैव सूरसैनं च मागधम्।
पारसीकमपभ्रंशम् **भाषाया** लक्षणानि षट्॥

अर्थात् हिन्दी भाषा वह है जिसमें संस्कृत, प्राकृत, शौरसेनी, मागधी, अपभ्रंश और फ़ारसी के शब्द मिले हों।

कविवर भिखारीदास जी ने कहा है:—

ब्रज भाषा भाषा रुचिर कहें सुमति सब कोय।
मिले संस्कृत पारस्यो पै अति सुगम जु होय॥

अर्थात् हमारी हिन्दी का जो शब्द समुदाय है उसमें संस्कृत आदि देशीय भाषाओं के साथ फ़ारसी, अरबी आदि विदेशी भाषाओं के शब्द भी मिले हुए हैं।

कविवर भिखारीदास जी ने संस्कृत पारसी दो ही नाम गिनाये हैं। दास जी का अर्थ लक्षणापूर्ण है। उन्होंने संस्कृत से संस्कृतादि प्राकृत भाषाएं ली हैं और पारसी से पारसी, अरबी आदि भाषाएं ली हैं। किसी कवि ने कहा है:—

तुलसी गंग दोऊ भये सुकबिन के सरदार।
जिनकी काव्यन में मिली भाषा विविध प्रकार॥

आज कल इस विविध की संख्या और भी बढ़ गई है। इसमें अँगरेज़ी पौर्तगीज़ आदि के शब्द भी मिल गये हैं। इस प्रकार:—

१—संस्कृत के शब्द
२—प्राकृत के शब्द
३—अरबी के शब्द
४—फ़ारसी के शब्द
५—अँगरेज़ी आदि यूरोपियन भाषाओं के शब्द
६—प्रान्तीय भाषाओं के शब्द
७—देशज शब्द (जो न संस्कृत से उत्पन्न हुए न किसी दूसरी भाषाओं से) जिसमें अनुकरण वाचक शब्द भी सम्मिलित हैं।

संस्कृतादि से उसी रूप में आने वाले शब्द **तत्सम** कहाते हैं, जैसे–हृदय, अग्नि, आकाश।

संस्कृत से विकृत होते हुए प्राकृत के शब्द तद्भव कहाते हैं, जैसे–काम, (कार्य) हाथ (हस्त) घर (गृह)।

अरबी-फ़ारसी के शब्द भी तत्सम और तद्भव दोनों रूप में आते हैं, जैसे—

तत्सम—ग़ाफ़िल, मज़दूर, बाज़ार फ़िहरिस्त, नक़ल, दारोग़ा।
तद्भव—मजदूर बजार, फैरिस्त, नकल दरोगा आदि

अँगरेज़ी आदि के भी दोनों प्रकार के शब्द काम में आते हैं।
तत्सम—फ़िटन, रेल, होल्डर, टेबुल, चेयर
तद्भव—कलक्टर, लालटैन, अंजन लंकलाट
प्रान्तीय भाषाओं के शब्द:—
मराठी—लागू चालू, बाड़ा, आदि

बङ्गला—उपन्यास, अनुसंधान, अध्यवसाय
अनूदित गल्प, अनुशीलन, आदि

अनुकरण वाचक—जो किसी पत्ती की स्वाभाविक क्रिया, प्रकृति की किसी स्वाभाविक हरकत अथवा किसी पदार्थ की ध्वनि का अनुकरण हो; जैसे–फर फर, खटाखट, चटपट, काँवकाँव, आदि

अभ्यास।

१—भाषा और समाज में क्या सम्बन्ध है ?

२—कैसे सिद्ध होता है कि प्रारंभ में भाषाओं के बहुत थोड़े भेद थे।

३—आर्य-भाषाएं कौन २ हैं कौन कहाँ बोली जाती हैं ?

४—हिन्दी की उत्पत्ति और विकास का प्रकार लिखो ?

५—हिन्दी भाषा में किन २ भाषाओं के शब्द मिले हैं ?

५—१० संस्कृत के तत्सम और १० तद्भव शब्द लिखो ?

६—कुछ अरबी फ़ारसी तथा अँगरेज़ी के तद्भव शब्दों के नाम गिनाओ ?

७—देशज शब्द क्यों कहाते हैं। कुछ देशज शब्दों की नामावलि दिखाओ?

शब्द-व्युत्पत्ति।

हिन्दी भाषा में मुख्यतः शब्द तीन प्रकार से बनाए जाते हैं शब्दों के पूर्व उपसर्ग के योग से, शब्दों के पीछे प्रत्यय लगा कर और समास की रीति से। इनके सिवाय एक ही शब्द को दुहराने, दो समानार्थक वा विपरीतार्थक शब्दों के प्रयोग में तथा किसी पदार्थ या प्राणी की ध्वनि या बोली के अनुकरण में भी नये शब्द बनाये जाते हैं जिन्हें क्रम से पुनरुक्त अथवा अनुकरण वाचक शब्द कहते हैं।

उपसर्ग के योग में:—

कुछ अव्यय धातु के साथ मिल कर ख़ास ख़ास अर्थ प्रकाशित करते हैं; इस प्रकार के अव्ययों को 'उपसर्ग' कहते हैं।

उपसर्ग धातु के साथ मिल कर या तो किसी धातु के अर्थ को उलटा कर देते हैं; अथवा उसमें विशेषता पैदा कर देते हैं, जैसे आदान और आगमन में 'आ' उपसर्ग 'दा' और 'गम्' धातु के विपरीत अर्थ प्रकाशित करता है। परिदर्शन और परिभ्रमण से उपसर्ग द्वारा दर्शन और भ्रमण का अर्थ ही द्योतित होता है। 'प्रदान' में "प्र" उपसर्ग से किसी प्रकार का हेर-फेर नहीं होता।

पद	उपसर्ग	धातु	प्रत्यय	अर्थ
आदान	आ	दा	अन	लेना
प्रदान	प्र	दा	अन	देना
निदान	नि	दा	अन	हेतु
उपादान	उप	दा	अन	कारण

उपसर्ग	मूल	पद	अर्थ
आ	कार	आकार	सूरत
प्र	कार	प्रकार	भाँति
वि	कार	विकार	बुराई
उप	कार	उपकार	भलाई
प्रति	कार	प्रतिकार	रोक
सम्	कार	संस्कार	शोधन

'कृ' धातु से "अ" प्रत्यय के योग से कार पद बना है।
इसी भांतिः—

'भू' धातु से—संभव, विभव, पराभव, अनुभव, उद्भव प्रभव, प्रभाव,
'हृ' धातु से—आहार, प्रहार, संहार, विहार, उपहार, व्यवहार।
'पद' धातु से—सम्पदा, आपदा, विपदा, सम्पत्ति, निष्पत्ति उत्पत्ति, आपत्ति।

'स्था' धातु से--स्थान, संस्थान, अवस्थान, अनुष्ठान, संस्था, अवस्था, व्यवस्था,
'दिश्' धातु से—आदेश, प्रदेश, विदेश, उपदेश।
'कृ' धातु से—अधिकार, उपकार, प्रतिकार विकार, आकार, संस्कार दुष्कर।
'चर' धातु से—उपचार, विचार, आचार।
क्रम—धातु से-अतिक्रम, विक्रम। आक्रमण उपक्रम, पराक्रम।
ज्ञ—धातु से, आज्ञा, संज्ञा, प्रज्ञा, उपज्ञा।

कुछ अव्यय और विशेषण भी उपसर्ग का काम देते हैं।

अ—अभाव, अज्ञान, अनीति, अनेक।
अधस्—अधःपतन, अधोभाग।
पुनः— पुनर्जन्म, पुनर्विवाह, पुनरुक्त।
स—सजीव, सकल, सहित, सगोत्र।
चिर—चिरकाल, चिरजीवि।
सत्—सज्जन, सत्कर्म, सद्गुरु आदि।

हिन्दी उपसर्ग।

अ—अजान, अचेत, अलग, अबेर।
अध—अधकच्चा, अधपका, अधेड़।
औ—औगुन, औघड़।
नि—निकम्मा, निठल्ल, निडर।
सु—सुडौल, सुघर, सुजान।

उर्दू उपसर्ग।

खुश—खुशदिल, खुशबू।
ग़ैर—ग़ैरमुमकिन, ग़ैरहाज़िर।

ना—नाराज़, नापसंद नालायक।

बद्—बद्नाम, बद्माश।

बे—बेचारा, बेईमान, बेतरह।

सर—सरकार, सरदार, सरताज।

हर—हररोज, हरसाल, हरघड़ी।

प्रत्यय के योग में:—

प्रत्यय दो प्रकार के होते हैं तद्धित और कृदन्त।

कृदन्त—क्रियापद या धातु के अन्त में प्रत्यग लगा कर जो शब्द बनते हैं।

संस्कृत कृदन्त से बने विशेष्य।

'अक' प्रत्यय के योग में:—

कृ धातु से कारक, नी से नायक, पो से पावक, पच से पाचक, गे से गायक, दा से दायक, जन से जनक आदि कर्तृ वाच्य शब्द बनते हैं।

'अन' (अनट्) प्रत्यय के योग में:—

नी से नयन, लोच से लोचन, चर से चरण, कृ से करण, साध से साधन, स्था से स्थान, शी से शयन, भू से भवन, पक् से पाक, त्यग् से त्यांग आदि पद बनते हैं।

भाव वाचक धातुओं के आगे 'अन' प्रत्यय के योग में:—

गम् से गमन, भुज से भोजन, ज्ञा से ज्ञान, मा से मान, दा से दान, शी से शयन, पत् से पतन, कृ से करण, तप् से तपन, जल से जलन आदि शब्द बनते हैं।

धातु के आगे 'क्ति' प्रत्यय के योग में:—

भाववाचक शब्द—शुध् से शुद्धि, गम् से गति, मन् से मति, शम् से शान्ति, पुष् से पुष्टि, दृश् से दृष्टि, ग्लै से ग्लानि, ख्या से ख्याति, मा से मिति, स्था से स्थिति, नी से नीति, प्री से प्रीति, भी से भीति आदि शब्द बनते हैं।

संस्कृत कृदन्त से बने विशेषण।

अपहरण (हृ) से अपहृत, उपकार (कृ) से उपकृत, संतोष (तुष्) संतुष्ट, भय (भी) से भीत।

धातु	प्रत्यय	विशेषण	अर्थ
कृ	तव्य	कर्त्तव्य	करने योग्य।
दा	तव्य	दातव्य	देने योग्य।
गम्	तव्य	गन्तव्य	जाने योग्य।
पूज्	नीय	पूजनीय	पूजने योग्य।
जि	त (क्त)	जित	जीता हुआ।
मृ	त (क्त)	मृत	मरा हुआ।
पू	त (क्त)	पूत	शुद्ध हुआ।
पत्	इत (क्त)	पतित	गिरा हुआ।
वि + श्वस्	इत (क्त)	विश्वसित	विश्वास किया हुआ।
मूर्छा	इत (क्त)	मूर्च्छित	मूर्च्छाप्राप्त।
रुज्	(क्त)	रुग्ण	रोगग्रसित।
गम्	णिन्	गामी	चलने वाला।
सह	इष्णु	सहिष्णु	सहने वाला।

हिन्दी कृदन्त से बने विशेष्य।

भाव वाचक शब्दः—

मारना से मार, दौड़ना से दौड़, सोचनाविचारना से सोचविचार, उठना से उठान, उतरना से उतार, चढ़ना से चढ़ाव, हँसना से हँसी, बनना से बनाव, निकलना से निकास, पीसना से पिसान, रटना से रट, चिल्लाना से चिल्लाहट, रुकना से रुकावट, मिलना से मिलावट, बढ़ना से बाढ़, चढ़ना से चढ़ाई, लड़ना से लड़ाई, लिखना से लिखाई।

कर्म वाच्यः—

ओढ़ना से ओढ़नी, सूघना से सुँघनी।

करण वाच्यः—

कतरना से कतरनी, छानने से छननी, ढकना से ढक्कन, बुहारना से बुहारी, सुमिरना से सुमिरिनी, झूलना से झूला, ठेलना से ठेला, घेरना से घेरा, आदि।

कर्त्तृ वाच्य में—

जड़ना से जड़िया, धुनना से धुनिया।

हिन्दी कृदन्त से बने विशेषण।

टिकना से टिकाऊ, बिकना से बिकाऊ, सुहाना से सुहावना, लुभाना से लुभावना, उड़ना से उड़ाकू, हँसना से हँसने वाला, ढालना से ढलवाँ, जड़ना से जड़ाऊ, चलना से चालू, पीना से पीने योग्य, झगड़ना से झगड़ालू, समझना से समझदार, मिलना से मिलनसार, होना से होनहार, लड़ना से लड़ाकू, गाना से गवैया, खेलना से खिलाड़ी, माँगना से मँगैनू,

तैरना से तैराक, लड़ना से लड़ाकू, अड़ना से अड़ियल, सड़ना से सड़ियल।

संस्कृत तद्धित से बने विशेष्य।

अपने ही अर्थ में:—

वन्धु से वान्धव, चोर से चौर, चण्डाल से चाण्डाल, कुतूहल से कौतूहल, मरुत से मारुत, सेना से सैन्य, त्रिलोक से त्रैलोक्य, समान से सामान्य।

सन्तान के अर्थ में:—

दशरथ से दाशारथि, सुमित्रा से सौमित्र, वसुदेव से वासुदेव, अदिति से आदित्य, पृथा से पार्थ, मनु से मानव, गंगा से गांगेय, दिति से दैत्य।

दूसरे अर्थों में:—

तर्क से तार्किक, मर्म से मार्मिक, न्याय से नैयायिक, व्याकरण से वैयाकरण।

शिव से शैव, विष्णु से वैष्णव, शक्ति से शाक्त, गणपति से गाणपत्य,

हिन्दी तद्धित से विशेष्य।

लड़का से लड़काई, लड़कपन; बाप से बपोती, बूढ़ा से बुढ़ापा, गाय से गैया, खाट से खटिया, मक्खन से मखनिया, सराफ़ से सराफा, बजाज से बजाजा, भला से भलाई, बुरा से बुराई, ऊँचा से ऊँचाई, लम्बा से लम्बाई, चूरी से चुरिहारा, सोना से सुनार, मीठा से मिठास, कंठ से कंठी, खट्टा से खटास, कड़ुवा से कड़ुआहट, तेल से तेली, साँप से सँपेरा, कांसा से कसेरा, पहुँचे से पहुँची, काठ से कठौता, सेवा से सेवक, कुल से कुलीन, राष्ट्र से राष्ट्रीय।

हिन्दी तद्धित से बने विशेषण।

भूख से भूखा, प्यास से प्यासा, घर से घरेलू, अरब से अरबी, बनारस से बनारसी, भांग से भँगेड़ी, बन से बनैला,

गेरू से गेरुआ, मामा से ममेरा, धूम से धूमेला, दूध से दुधैल, दया से दयावन्त, धन से धनवन्त, मति से मतिमान, ठंड से ठंडा ।

पुनरुक्त पद ।

एक ही अर्थ वाले पदः—

आमोद-प्रमोद, हराभरा, हृष्ट-पुष्ट, देख-रेख, श्रद्धाभक्ति, चहलपहल, दानदक्षिणा, दौड़धूप, बोलचाल, घरद्वार, अनुनयविनय, जीवजन्तु, हाटबाजार, रीतिनीति, बन्धु-बांधव, चोरडाकू, आहारविहार, सेवासुश्रूषा ।

विपरीत अर्थ वाले पदः—

प्रायः विरुद्ध अर्थ वाले दो पद साथ २ आते हैंः—

घट-बड़, नीच-ऊंच, आगा-पीछा, लैंन-दैंन, सुख-दुख, पाप-पुण्य, नया-पुराना, स्वर्ग-नर्क, उत्तर-दक्षिण, पूर्व-पश्चिम, गुण-दोष, लाभ-हानि, स्थावर-जंगम, छोटे-बड़े, जन्म-मृत्यु, घटती-बढ़ती, जमा-खर्च, आना-जाना, आय-व्यय, आग-पानी ।

आगा-पीछा, आविर्भावतिरोभाव, धनीदरिद्र, उत्कृष्टअपकृष्ट, जागृत-सुप्त, उत्थानपतन, घातप्रतिघात, सुलभदुर्लभ, स्वर्गनरक, चलअचल, निन्दास्तुति, जलचर थलचर, पुण्यपाप, सुख-दुख, पंडितमूर्ख, उदयअस्त, निद्राजागृति, शुभअशुभ, क्रोध-क्षमा, संयोगवियोग, लाभहानि, हर्षविषाद, वादीप्रतिवादी, साधुअसाधु, बाहरभीतर, धनीनिर्धन, उदयअस्त, जसअपजस, सारअसार, आकाशपाताल, भूचरखेचर, जयपराजय, संधिविग्रह, संपदविपद्, आयव्यय, ह्रस्वदीर्घ, जीवनमरण ।

समास द्वारा बने हुए पद।

संस्कृत समस्त-पद।

(१) द्वन्द्व समास—माता और पिता, मातापिता।

कंद और मूल और फल, कंद-मूल-फल।
मन और क्रम और वचन, मन-क्रम-वचन।
अहन् और निशा अहर्निश, अहन् और रात्रि, अहोरात्र।

(२) तत्पुरुष—(कर्म कारक में) शरण को आगत, शरणागत।
करण—शोक से आकुल, शोलाकुल।
मोह से अंध, मोहांध।
(अपादान में)–शाप से मुक्त, शापमुक्त।
आदि से अन्त, आद्यंत।
(सम्बन्ध में)–गंगा का जल, गंगाजल।
गुरू का उपदेश, गुरोपदेश।
(अधिकरण में)–रथ में आरूढ़, रथारूढ़।
सेवा में निरत, सेवानिरत।

कर्मधारय—परम है जो ईश्वर, परमेश्वर।
परम है जो सुंदर, परमसुंदर।
दुष्टा है जो मति, दुष्टमति।
अल्प (अल्पा) है जो बुद्धि, अल्पबुद्धि।
साध्वी है जो कामना, साधुकामना।
कम्पित्त है जो लता, कम्पितलता।

बहुब्रीहि— अल्प है बुद्धि जिसकी, अल्पबुद्धि।
स्वच्छ है तोय जिसका, स्वच्छतोया।
नष्ट है मति जिसकी, नष्टमति।

हत होगई आशा जिसकी, हताश।
नत हुई है शाखा जिसकी, नतशाख।
नहीं है भय जिसे, निर्भय।
कमल से नयन हैं जिसके, कमलनयन।

क्रिया विशेषण के भाव में समस्त-पद

अव्ययी भाव—कूल के उप (समीप में) उपकूल (समीपता के अर्थ में)
गृह गृह में, प्रति गृह; प्रतिदिन; अनुकूल।
धर्म के अभाव में अधर्म, इसी प्रकार अपाप, असुर, निर्विघ्न, दुर्भिक्ष।
विधि को यथा (अतिक्रम न करके) यथाविधि, इसी प्रकार यथायोग, यथासाध्य।
अक्षि के प्रति (सामने) प्रत्यक्ष।

द्विगु—(संख्या-पूर्वक कर्मधारय)
त्रि हैं जो भुवन, त्रिभुवन।
चतुः हैं पद जो, चतुष्पदी।
चार हैं जो युग, चतुर्युग

हिन्दी समास

आम का रस,	अमरस,	(तत्पुरुष),
फूली हुई बरी	फुलौरी	(कर्मधारय)
कान फटे हैं जिसके	कनफटा	(बहुव्रीहि)
आँख फोड़ने की शक्ति है जिसमें	अँखफोड़ा	(बहुव्रीहि)
माता और पिता	मातपिता	द्वन्द्व
डर के अभाव में	निडर	(अव्ययीभाव)
धड़क के अभाव में	निधड़क,	”

जानने के अभाव में	अनजान	(अव्ययीभाव)
पेट भरने के भाव में	भरपेट	"
ठीक बीच के भावमें	बीचोंबीच	"
नीली है जो गाय,	नीलगाय	(कर्मधारय)
दही की हाँडी	दहेंडी	(तत्पुरुष) ×
दई (दैव) से मारा	दईमारा	(तत्पुरुष)
बनका मानुष	बनमानुष	(तत्पुरुष)
राजा का पूत,	राजपूत	(तत्पुरुष)
मीठा है बोल जिसका	मिठबोला	(बहुव्रीहि) ×

अनुकरण वाचक ।

खट् खट् होने से	खटाखट्	खड़ावूं पहन कर खट खटाहट करते हुए पहाड़ पर चढ़ गये
पड़ पड़ होने से	पड़ पड़ाहट	थोड़ी ही देर में बादल हो आया पड़पड़ाहट मचगई ।
चटपट होने से	चटपटाहट	तमाचों की चटपटाहट सुनाई देती थी ।
सन सन होने से	सन्सनाहट	कुनैन खाने से कानों में सनसनाहट मच गई ।
चहचहाने से	चहचहाहट	चिडियों का चहचहाना कैसा मनोहर है ।
कुहू कुहू		कोयल कुहू कुहू करती है
काँव काँव		कौआ की काँव २ किसे भाती है
भूं भूं		भूं भूं करते हुए भौंरे उड़ रहे थे
फुर फुर		चिड़िया फुरफुर करती हुई उड़ गई ।
धड़धड़ करना	धड़धड़ाना	एक दम तोपें धड़ धड़ाने लगीं

अभ्यास ।

१—हिन्दी में शब्द कितने प्रकार से बनते हैं ।

२—बताइये नीचे लिखे शब्द किस प्रकार के हैं और किस प्रकार बने हैं:—

शैशव, भ्रान्त पैतृक, नैतिक, क्रोधित धुमैला, पार्थ, बनारसी, दिहलवी, मौसेरा, मार्मिक, धनी, विहार, उतार, आचार, अजान, अचेत, निडर, औघट, उपकार, भोजन, साधन, पतन, मानव, दैत्व, ढलवाँ, लुभावना, रथारूढ़, संधिविग्रह, पुण्यपाप, साधुअसाधु, शोकाकुल, चतुष्पदी, त्रिभुवन, कनफटा, हतकंडे, अनजान आदि ।

३—हर प्रकार के ५-५ शब्द बताओ:—

संस्कृत कृदन्त से बने हुए, हिन्दी कृदन्त से बने हुए, संस्कृत तद्धित से बने हुए, हिन्दी तद्धित से बने हुए, उपसर्ग से बने हुए, दो शब्दों के योग से बने हुए, तथा अनुकरण से बने हुए ।

हिन्दी में तत्सम प्रयोग

यों तो सहस्रों रूप हिन्दी में तद्भव रूप में प्रयुक्त होते हैं हिन्दी की खास सम्पत्ति हैं गृह के स्थान पर घर ही अधिक मौजूं है । "हिये माथे" की फूट गई की जगह "हृदय और मस्तिष्क" की फूट गई लिखना कैसा जंजाल मालूम पड़ता है । किन्तु जो शब्द तत्सम रूप में प्रचलित हैं उनको उसी रूप में लिखना चाहिये ।

तत्सम शब्दों के प्रायः समास और संधिगत प्रयोगों में भूलें रहती हैं । शब्द योजना के समय इन बातों का ध्यान रखना चाहिये । जहां तक हो, शब्दों का प्रयोग सरल रीति पर होना चाहिये । तद्धितान्त शब्दों में जब तक ठीक निश्चय न हो उसे सरल रीति पर लिखना चाहिये । शक्ति के उपासक शाक्त कहलाते हैं—जब तक लेखक को ठीक २ निश्चय न हो जाय तब 'शाक्त' के बजाय 'शक्ति के उपासक' ही लिखें तो हानि नहीं, परन्तु 'शाक्तय' इत्यादि लिखना

ठीक नहीं। वैधव्य की जगह विधव्य या वैधव न लिखकर विधवा पन हिन्दी में बुरा न रहेगा। **पारिश्रम** ठीक न हो सके तो **परिश्रम का फल ही** लिखना काफ़ी होगा। सुजन का भाव सौजन्य है। कोई **ता** प्रत्यय का असह्य बोझ भी सुजन की पीठ पर लादकर अपनी योग्यता का परिचय देते हैं। सौज्यन्यता की जगह सुजनता अधिक ठीक रहेगा। इसके सिवाय, श, स, ष के प्रयोगों व और ब प्रयोगों में बड़ी भूल रहती हैं। नीचे की तालिका में साधारण भूलों का दिग्दर्शन कराते हैं।

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
शूद्रानी	शूद्रा	निर्दोषी	निर्दोष
निर्धनी	निर्धन	राजागण	राजगण
अहोरात्रि	अहोरात्र	दुरावस्था	दुरवस्था
निरर्थ	निरर्थक	अधीनस्थ	अधीन
महाराजा	महाराज	एकत्रित	एकत्र
वर्षारात्रि	वर्षारात्र	सन्मान	सम्मान
विश्वमित्र	विश्वामित्र	सम्वत्	संवत्
सलज्जित	सलज्ज वा लज्जित		
उपरोक्त	उपर्य्युक्त	वाढ	बाढ़
दरिद्रता	दारिद्र्य	बाण	वाण
सावधान पूर्वक	सावधान	बानर	वानर
पार्वतीय	पर्वतीय	बामदेव	वामदेव
असहनीय	असह्य	बायु	वायु
ज्ञानमान	ज्ञानवान	वासर	बासर
कृतघ्नी	कृतघ्न	बिघ्न	विघ्न

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
घनिष्ट	घनिष्ठ	बिज्ञ	विज्ञ
दुश्तर	दुस्तर	बिद्या	विद्या
दुस्कर	दुष्कर	बिराट	विराट
ख्रीष्ट	ख्रीस्ट	बिष	विष
उच्छ्रास	उच्छ्वास	विषेष	विशेष
अत्योक्ति	अत्युक्ति	फाल्गुण	फाल्गुन
पैत्रिक	पैतृक	शंस्कार	संस्कार
प्रथक्	पृथक्	सम्वाद	संवाद
विद्यमान्	विद्यमान	सस्य	शस्य
		साख	शाख
भुजंगी	भुजङ्ग	सल्य	शल्य
व्याकुलित	व्याकुल	सर	शर
व्रह्म	व्रह्म	सनिश्चर	शनिश्चर
व्राह्मण	व्राह्मण	सकुन	शकुन
वहुधा	वहुधा	सकट	शकट
वन्धु	बंधु	व्रहत	वृहत्
वालक्र	बालक	वलि	वलि
बर्सा	वर्षा	बसन्त	वसन्त
बसन	वसन	वस्त्र	वस्त्र
बह्नि	वह्नि	वाक्दान	वाग्दान
अभिसेक	अभिषेक	निसिद्ध	निषिद्ध
विसम	विषम	सुसुप्ति	सुषुप्ति
बनोवास	वनवास	पितृमति	पित्रनुमति
प्रत्योपकार	प्रत्युपकार	किम्वा	किंवा
संघार	संहार	सम्वत्	संवत्

नोट—जहां पर ठीक तत्सम शब्दों का व्यवहार हो वहां 'व', 'ब' और 'श', 'ष', 'स' के प्रयोगों का ध्यान रखना चाहिये। पुराने पद्यों में तो अधिकांश 'व' की जगह 'ब' और 'श' की जगह 'स' का प्रयोग है। उच्चारण की सुविधा के विचार से ही उनका प्रयोग बढ़ा है "दसमुख मैं न बसीठी आयो। शीटी युक्त 'श' के बजाय दन्त्य 'स' का उच्चारण अति सहज है।

साधारण प्रयोग

अकार, इकार और यकार

एक ही उच्चारण के शब्द प्रायः कई प्रकार से लिखते हैं,जैसेः— लिये लिए, आई आयी, गये गए, सोए सोये, खाये गये, खाए गये, खाये गए, खाए गये; आओ आवो, गाओ गावो। भाये भाए, किये किए आदि।

ऐसे अनेक प्रयोग जिसे मनुष्य कई २ प्रकार से लिखते हैं। हिन्दी इतिहास के रचयिता प्रसिद्ध साहित्य सेवी श्री मिश्र बंधुओं की सम्मति तो यह है कि अभी हिन्दी का विकास काल है इसमें जो जिस प्रकार से लिखे लिखने दीजिए, ठीक है।

कुछ लोगों की राय है कि जब स्वर से ही काम निकल जाय व्यञ्जन की आवश्यकता नहीं है।

अनेक लोगों का मत है कि जब **गया** होता है तो **गये** जरूर होना चाहिये। **खाया खाये, पाया पाये, पिया पिये,** परन्तु खायी, पियी, गयी, में पियी का क्या हो ? मेरी समझ में।

हुआ	हुए	हुई
गया	गये	गयी
आया	आये	आयी

सोया	सोये	सोयीं
पिश्रा	पिए	पी

आदि का प्रयोग एक ही ढंग से इस प्रकार हो तो ठीक है।

अरबी फ़ारसी के शब्द।

जब से हिन्दी-भाषा का विकास शुरू हुआ, अरबी फ़ारसी के शब्द भी उसमें आते गये। 'भाषाया लक्षणानि षट्' तथा 'मिले संस्कृत पारस्यौ' उसी समय का लक्षण है। परन्तु उन भाषाओं के शब्दों के अधिकांश प्रयोग अपभ्रंश हैं। बोलने की सुविधा के अनुसार प्रारम्भ में चन्द आदि कवियों ने उसी रूप में उनका प्रयोग किया जिस रूप में साधारण लोगों की बोली में आ गये थे। फ़ारसी का एक प्रयोग है जाय (ए) ज़रूर अर्थात् ज़रूरी जा, आवश्यक जगह, आवश्यकता पूरी करने की जगह, पाख़ाना। जाय की 'य' विभक्ति (इजाफ़त) लुप्त हो गई। ज़रूर के ज़ का खराद होने पर 'ज' रहा; अर्थात् 'जाजरूर'। एक कवि ने इसका प्रयोग इस प्रकार किया है—"अपनी जरूर जाजरूर जाइयतु है।" प्रारंभ में ठीक जिस प्रकार सर्व-साधारण में प्रयोग चल पड़े वैसे ही लोग बोलने लिखने लगे। कवियों ने उन प्रयोगों को और माँज दिया। एक बानगी और देखिये:—

"देखि देखि **कागद तबीयत समादी** भई,।
सादी कहा भई **बरवादी** भई घर की।"

इस पद्य में कागद (काग़ज़) तबीयत (तबीअ़त) समादी (सो+मादी) सो (पाद मूर्ति) मादी (बीमार) सादी (शादी)

भूषण की रचना देखिये:—

मारिकर **पातशाही खाकशाही** कीन्ही जिन,
जेर कीन्हों **जोर** सों लै **हद्द** सब मारे की।

इस प्रकार एक ओर लोक-भाषा, शब्दों को मांज मूँज करके अपने अनुकूल बनाती गई। दूसरी ओर फ़ारसी अरबी के बोलने वाले शासकों की छत्र-छाया में अरबी फ़ारसी की शिक्षा का क्रम जारी हुआ। फ़ारसी को अदालतों में आश्रय मिला। शासकों से सम्बंधित शिक्षित-समुदाय की भाषा फ़ारसी हुई। तत्सम रूप में अरबी फ़ारसी के शब्द बोले और लिखे जाने लगे। इधर अपभ्रंश लोक-भाषा को तालीमयाफ़्ता (शिक्षित) गँवारू-या गँवारी ज़ुबान कहने लगे और शीन काफ़ की दुरुस्ती को सभ्यता का चिन्ह समझने लगे। यहां तक हिन्दी-पद-योजना का ढांचा "फ़करेक़ौम', 'अय्यामेगर्दिश' 'दास्तानेहज़ारबुलबुल' 'शाहे जहाँ', 'क़लामेआज़ाद', 'अज़दफ्तर डिस्किक्टबोर्डआगरा' में बदल गया। हज़ारों अरबी फ़ारसी के तत्सम शब्द हिन्दी में भर गये। शायस्ता कहलाने वाले लोग ठीक अरब की तरह उच्चारण करने में सफल हुए या न हुए, किन्तु उसे ऊँचा आदर्श अवश्य ही समझने लगे। इस प्रकार ठीक गँवारू और शायस्ता लोगों के बीच में एक और भाषा हुई जिसे बाजारू बोली समझिये। आज भी क़म ख्वाह की जगह क़ीमख्वाव। ख्वाहमख्वाह की जगह खांमखां आदि बाज़ार में अपभ्रंशरूप बोले जाते हैं—आदमी, आदत (आ़दत), अरजी (अ़र्ज़ी), आराजी (आ़राज़ी), अलवत्ता, ईजा (ईज़ा), इस्तहार (इश्तहार), क़सूर (कु़सूर), उजर (उज़्र.), बायदा (वअ़दा), वारिस, वालिद, कदरदान (क़दरदाँ, क़द्रदां), कैद (क़ैद), कलम (क़लम), कानून (क़ानून), काबिज (क़ाबिज़), किता (कितअ़), खबर, (ख़बर), खातिर (ख़ातिर), जुम्मा महजत (जामअ़ मसजिद), खारिज (ख़ारिज़), गाफिल (ग़ाफ़िल), जल्दी (जलद), जुलम (ज़ुल्म), तसदीक (तसदीक़) तदारुक (तदारुक़), तमस्सुक, तमाम, तरजुमा, तरफ़, तहसील, तारीफ़ (तअ़रीफ़),

तालीम (तअ़लीम), दफा (दफ़अ़), दावा (दअ़वा), दुनिया, नकल (नक़्ल), नजर (नज़र), नजीर (नज़ीर,) नमूना, नाबालिग, (नाबालिग़), नामजूर (ना मंज़ूर), नायब, नाराज (नाराज़), फतै (फ़तह), फायदा (फ़ायदा), फुरसत, (फ़ुरसत) फौजदार, (फ़ौजदार), बकसीस (बख़्शिश), बाकी (बाक़ी), बैनामा (बअ़नामा), बेईमानी, मस्गूल (मशग़ूल), माफ (मुआ़फ़), मामूली (मअ़मूली), माल, मालगुजारी, (मालगुज़ारी) म्यादी (मिआ़दी), सांम (शाम) बयान, बेगम (बेग़म), बेचारा, बेजा (बेज़ा), बराबर, मगज (मग़्ज़), मुहल्ला, बुनियाद, मुनाफा (मुनाफ़ा), रग, रसद, रफा (रफ़अ़) राजीनामा, (राज़ीनामा), रोज (रोज़), रोजगार (रोज़गार), रोजनामचा (रोज़नामचा) शैतान, शादी, मजा (मज़ा) हाजिर (हाज़िर), हिस्सा, मुलतवी, मुसाफिर, (मुसाफ़िर) मुहर्रिर, मौजा (मौज़अ़), मौरूसी, रद, राय, लायक (लायक़), स्यात् (शायद), सरीक (शरीक़), सामिल (शामिल), सरनामा, सुलहनामा, हक़दार, हलफ (हलफ़), हासिल, अफसोस (अफ़सोस), आबरू, आमदनी, यार, इमारत (अ़िमारत), इलाका (इलाक़ा), इजाफा (इज़ाफ़ा) कबूल (क़ुबूल), काबू (क़ाबू) कायम (क़ायम), कारखाना (कारख़ाना), कारीगर, किस्मत (क़िस्मत) कुस्ती, किताब, खरीद (ख़रीद), खांमखा (ख़्वाहमख़्वाह), खूब (ख़ूब), खुराक (ख़ुराक), गुंबज (गुंबद) गैर हाजिरी (ग़ैर-हाज़िर), गुस्सा (ग़ुस्सा), चश्म, चश्मा; चाकू (चाक़ू), चीज (चीज़), चिराग (चिराग़), चहरा, जबरदस्त (ज़बरदस्त), जमाबन्दी (ज़मअ़बन्दी)

जागीर, जाहिर, (ज़ाहिर) जेरबार (ज़ेरबार), तकिया, तखत (तख़्त) तलाश, ताज्जुब (तअ़ज्जुब), ताजा (ताज़ा), तिजारत, दरकार, दस्तूर, दुश्मन, दिमाग, (दिमाग़) दिल, पैदा, परवाना, पोशाक, बन्दोबस्त।

इन प्रयोगों में अधिकांश तद्भव हैं तत्सम उनके साथ कोष्टक में दिये हुए हैं। कचहरी के मुंशी, वकील, मक़तबों के आस पास का वायु-मंडल, अरबी फ़ारसी की शिक्षा पाये हुए नागरिक, मुसलमानी शासन से जिनका अधिक सम्बन्ध रह चुका है ऐसे ख़ास घराने; लखनऊ आगरा, दिहली आदि शहरों के विशेष निवासी तत्सम् शब्द अधिक बोलते हैं, नागरी-प्रचारिणी-सभा काशी ने तो अधिकांश फ़ारसी और अरबी के शब्दों के नीचे से बिन्दी उड़ा दी है। जरूरत फरियाद, फतह, फरद फरमाइश फरमान आदि बिना बिन्दी के लिखे पढ़े जाने लगे हैं। सच बात तो यह है कि अरबी फारसी के साहित्यिक और उनसे सम्पर्क रखने वाले लोग भले ही तत्सम प्रयोगों के आदी हों परन्तु साधारण हिन्दी-भाषी जनता प्रकृति नियमानुसार इसके लिये वाध्य नहीं है।

अंग्रेज़ी आदि भाषाओं के शब्द।

यही हाल यूरोपियन भाषा के प्रयोगों का है। पहलेपहल जब पुर्तगाल और फ्रांस वालों से काम पड़ा तो उनके भाषा के अपभ्रंश शब्द हिन्दी में आने लगे। अंगरेज़ी ऐंजिन का रूप हिन्दी में अंजन 'समन' का सम्मन 'लोंगक्लाथ' का लंकलाठ, 'लैनटर्न' का लालटेन, 'फ्लैनिल' का फलालैन, 'टिकिट' का टिकट, 'मिल' का मील, बौटल का बोतल, टरपेन्टाइन का तार-पीन, थियेटर का थेटर, वैस्टकोट का वास्कट, बेंक का बंक, बौक्स

का बक्स, डौक्टर का डाक्टर, गोडाउन से गोदाम आदि तद्भव और नोटिस, रेल, स्कूल, बटन, बेंच, कलक्टर, इंच, हारमोनियम, स्टेशन, टाइम, इन्सपेक्टर, फार्म, इन्जीनीयर, स्लेट, मास्टर, पेंसिल, टिन, पिन बूट, सूट, चेन, ग्लास, स्लीपर आदि २ तत्सम रूप में बोले जाते हैं।

पोर्तुगीज़ शब्द।

पादरी, गिरिजा, ईस्पात, कमीज, कमरा, आलमारी, नीलाम, आदि शब्द पोर्तगीज़ भाषा के हिन्दी में काम आते हैं।

आज कल अङ्गरेजी के शिक्षित समुदाय के द्वारा हज़ारों शब्द हिन्दी में प्रवेश कर रहे हैं। कौलेज स्कूल के वायुमंडल की भाषा के वाक्य तो बिना अंगरेज़ी शब्दों की सहायता से पूरे ही नहीं हो सकते। ठीक उर्दू की ही भाँति एक बाबू-हिन्दी भी बन रही है परन्तु उसका वृत्त अभी अधिक नहीं है। अच्छी रचना के लिये आवश्यक है विदेशी भाषा के वही शब्द काम में लिये जाँय जो अपनी भाषा में तत्सम या तद्भव रूप में प्रचलित हो गये हों या जिनकी सहायता बिना हम अपना भाव ही व्यक्त न कर सकते हों।

शब्दों में अर्थ शक्ति।

शब्दों में तीन प्रकार की शक्ति है, उन्हीं शक्तियों के द्वारा पद व्रा वाक्य आदि का अर्थ जाना जाता है, प्रथम '**अभिधा**' दूसरी **लक्षणा** तीसरी **व्यंजना** है। जिस शक्ति से शब्दों का मुख्य (सीधा सादा) अर्थ जाना जाता है, उसको **अभिधा** कहते हैं। अभिधा द्वारा जिस अर्थ का ज्ञान हो उसे **वाच्यार्थ** कहते हैं।

पर्य्याय या प्रतिशब्द तथा शब्द-व्युत्पत्ति, वाच्यार्थ जानने के प्रधान साधन हैं।

पर्य्याय या प्रतिशब्द।

एक शब्द के परिवर्त्तन में अन्य शब्द का प्रयोग करना 'प्रति-शब्द' कहलाता है। 'प्रति-शब्द' द्वारा किसी शब्द का अर्थ करना बड़ा सुगम है, किन्तु जिस शब्द का पर्य्याय लिखना हो उससे सहज शब्द लिखना चाहिये; जैसे :—

अश्व के लिये घोड़ा और गज के लिये हाथी।

व्युत्पत्ति द्वारा।

धातु के साथ प्रत्यय के योग में, वा रूढ़ि-रूप धातु के अर्थ में अथवा समासों में आये हुए शब्दों में, जो अर्थ होता है, उसे व्युत्पत्त्यार्थ कहते हैं। यौगिक और योगरूढ़ पदों के व्युत्पत्त्यार्थ का बहुत शीघ्र बोध होता है; जैसे :—

मेघ के समान नाद है जिसकी, सो मेघनाद; लम्बी है हनू (ठोड़ी) जिसकी, सो हनूमान; शर का आसन है जिस पर, सो शरासन; नहीं रोग है जिसे, सो नीरोग; तरंग उठती है जिसमें सो तरंगिनी (नदी); शिव हैं इष्टदेव जिसके, सो शैव।

लक्षणा।

जहाँ शब्दों का सीधासादा अर्थ न लगा कर प्रयोजन की रूढ़ि के कारण कोई निकट सम्बन्ध रखने वाला दूसरा अर्थ लिया जाय वहाँ 'लक्षणा' होती है। लक्षणा के द्वारा जो २ अर्थ जाना जाय वह 'लक्ष्यार्थ' कहलाता है। जैसे—गंगावासी पद में 'गंगा' पद का वाच्यार्थ जल-प्रवाह है, उसमें वास करना असम्भव है इसलिये गंगा-तीर-वासी अर्थ होगा। जिस लक्षणा द्वारा वाच्यार्थ का विपरीत अर्थ समझा जाय उसे 'विपरीत लक्षणा' कहेंगे; जैसे-किसी क्षीणकाय व्यक्ति को देख कर कहा जाय कि, 'कितना मोटा आदमी है?'

व्यंजना।

वाच्यार्थ वा लक्ष्यार्थ को छोड़ कर जिसके द्वारा एक और अर्थ जाना जाय उसे 'व्यंजना' कहते हैं। व्यंजना द्वारा जो अर्थ घटित होता है, 'व्यंगार्थ' कहलाता है।

गेंद खेलने में किसी खिलाड़ी ने कहा,'अब तो अँधेरा होगया,' इसका अर्थ यह है कि, खेल बन्द कर देना चाहिये।

सुनने वालों की पृथकता के कारण एक वाक्य के कई व्यंगार्थ हो सकते हैं।

कभी एक ही शब्द के अनेक वाच्यार्थ होते हैं—

पत्र—पत्ता, चिट्ठी।

पृष्ठ—पीठ, सफ़ा।

पय—पानी, दूध, अमृत।

तात—माता, पिता, भाई, मित्र, कोई भी आत्मीय।

गुण—रस्सी, हुनर, सतोगुणरजोगुणतमोगुण, ज्ञान, विनय, सत्त्व, लाभ (गुण नहीं किया) ज्या, महत्त्व।

रस—कडुआ, खट्टा, आदि छै रस; करुणा आदि ९ रस, पारा स्वर्ण आदि की भस्म।

छन्द—इच्छा, पद्य।

बेला—कटोरा, एक बाजा, समय, फूल।

कर—हाथ, किरण, सूंड़।

अक्षर—ब्रह्म, तपस्या, मोक्ष, नित्य, ककारादि वर्ण।

अङ्क—चिह्न, गोद, रेखा, संख्यासूचकचिह्न, नाटक का परिच्छेद।

अचल—गति हीन, दृढ़, स्थिर, अविचलित, क्रियाहीन, पर्वत, अचला (पृथिवी)।

अच्युत—कृष्ण, विष्णु स्थिर, अविनाशी।
अज—ईश्वर, ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर, राजा दशरथ के पिता, बकरी, मेढ़ा।
अनन्त—विष्णु, सर्पों का राजा, ब्रह्म, आकाश, अनश्वर अन्तहीन।
अनन्तर—अवकाश, मध्य, छिद्र, अवसर, अवधि, अन्तर्द्धान, व्यवधान, तारतम्य।
अमर—देवता, पारा, वटवृक्ष।
अमृत—जल, पारा, दूध अन्न, स्वर्ण, (अमृता) गिलोय।
अरुण—सूर्य्य, सूर्य्य का सारथी, रक्त वर्ण।
अर्क—आक का पौधा, सूर्य्य, ताम्र, इन्द्र, विष्णु-ज्येष्ठ भ्राता।
आत्मा—स्वरूप, ब्रह्म, परमात्मा, सूर्य्य, अग्नि।
उदय—उदयाचल पहाड़, उत्पत्ति, उद्भव, उत्थान लाभ, फलसिद्धि।
धर्म्म—पुण्य, स्वभाव, रीति, शास्त्र के अनुसार आचार विचार।
अर्थ—अभिप्राय, प्रयोजन, धन।
हरि—विष्णु, वानर, सर्प, किरण, सिंह।

एक से वाच्यार्थों का सूक्ष्म भेद।

बहुत से ऐसे शब्द हैं जिनका मोटी रीति से एक सा अर्थ प्रतीत होता है; परन्तु उनके अर्थों में वास्तव में अन्तर होता है; जैसेः—मूर्ख और अज्ञ।

मूर्ख—जड़ बुद्धि।

अज्ञ—जिसे कुछ ज्ञान न हो।

दया और कृपा—

दया—पर-दुःख दूर करने की स्वाभाविक इच्छा।

कृपा—छोटों के प्रति दया प्रकाशन।

अलौकिक और अस्वाभाविक।

अलौकिक—लोक और समाज में पहिले न देखा गया हो। अस्वाभाविक—जो सृष्टि-नियम के विरुद्ध हो।

अलौकिक, अस्वाभाविक हो सकता है; किन्तु अस्वाभाविक अलौकिक नहीं हो सकता।

भ्रम और प्रमाद—

भ्रम—असावधानी से जहाँ भ्रान्ति हो।

प्रमाद—मूर्खता और मत्तता से जहाँ भ्रान्ति हो।

अज्ञान और अनभिज्ञ।

अज्ञान—जिसमें स्वाभाविक बुद्धि ही न हो।

अनभिज्ञ—जिसे समझने का अवसर ही न प्राप्त हुआ हो।

द्वेष और ईर्षा—

द्वेष—किसी कारण से एक मनुष्य दूसरे से घृणा करने लगे।

ईर्षा—निष्कारण दूसरे की बढ़ती पर जलन। धनी से निर्धन और ज्ञानी स मूर्ख ईर्षा करता है।

आयास, श्रम, परिश्रम, व्यायाम—

शरीर के अङ्गों (हाथ पाँव आदि) से काम करने को **श्रम,** कहते हैं। मन की शक्ति लगाने में **आयास,** श्रम की विशेषता **परिश्रम** है, श्रम से शान्ति परिश्रम से क्लान्ति होती है।

उत्साह, उद्योग, उद्यम, प्रयास—

कार्य करने की उमंग होना **उत्साह** है। काम में लग पड़ने का नाम **उद्योग** है। उद्योग की स्थिरता **उद्यम** है। सफलता के समीप उद्यम का नाम **प्रयास** है। किसी कार्य का बाहिरी प्रयत्न **चेष्टा** है।

युक्ति, तर्क, वाद, गल्प, वितण्डा—

कार्य का हेतु दिखलाना **युक्ति** है, युक्ति की कसौटी **तर्क** है, किसी निर्णय पर पहुँचने के लिये युक्ति-प्रत्युक्ति **वाद** है, स्वपक्ष स्थापन और परपक्षनिराकरण कथाविशेष **वितण्डा** और **गल्प** है।

प्रेम, भक्ति, श्रद्धा, स्नेह, प्रणय—

साधारणतः हृदय के आकर्षण का भाव **प्रेम** है।

बड़ों में जो प्रेम हो वह **श्रद्धा** है, देवता में जो प्रेम हो वह **भक्ति** है। छोटों में जो प्रेम है वह **स्नेह** है। स्त्री में जो प्रेम हो उसका नाम **प्रणय** है।

ज्ञान, बुद्धि, धी, मति—

किसी विषय का भली प्रकार जानना **ज्ञान** है, मन की ठीक वृत्ति का नाम **बुद्धि** है; विचारने की शक्ति **धी** है; इच्छा करने की शक्ति **मति** है।

मन, चित्त, मानस, हृदय, अंतःकरण—

स्मरण रखने की शक्ति (ज्ञानेन्द्रिय) का नाम **मन** है; जानने वाली (चेतन) ज्ञानेन्द्रिय को **चित्त** कहते हैं। इच्छा मय ज्ञानेन्द्रिय का नाम **मानस** है। अनुभव करने वाली ज्ञानेन्द्रिय का नाम **हृदय** है। वाह्य इन्द्रियों से सम्बन्ध न रहने पर **अन्तःकरण** है।

दुःख, शोक, क्षोभ, खेद, विषाद—

मन में **दुःख** होता है; चित्त की व्याकुलता **शोक** है; इष्ट लाभ न होने पर **क्षोभ** होता है; निराशा में **खेद** होता है; दुःख की विशेषता में कर्त्तव्य-ज्ञान नष्ट होना **विषाद** है।

अभ्यास ।

१—तत्सम और तद्भव शब्द किसे कहते हैं ?

२—नीचे लिखे शब्दों में बताइये कौन तद्भव है और कौन तत्सम। तद्भव शब्दों के तत्सम, तत्सम के तद्भव रूप बताओः—

३—हृदय, कोमल, करुणा, सिंघ, हाथी, पानी, सूखा, पितृ, गृहणी, धरनि, बिरछ, दुति, जोगी, पीठ, घी, धी, पट्टी, प्रान्त, शान्ति, पीहर, उपहार, थान, गाय, भैंस, स्वभाव, मर्जाद।

४—१० तद्भव और १० तत्सम शब्द बतलाओ ?

५—अरबी, फ़ारसी और अंगरेजी के १०-१० ऐसे शब्द लिखो जो तद्भव रूप में हिन्दी में बोले और लिखे जाते हैं ?

६—अरबी, फ़ारसी और अँगरेज़ी के शब्दों का प्रयोग तत्सम रूप में होना चाहिये या तद्भव में, युक्ति सहित लिखो ?

७—इन भाषाओं के कुछ ऐसे शब्दों के नाम बताओ जो तत्सम रूप में प्रयुक्त हैं।

८—शब्दों में कै प्रकार की अर्थ शक्ति है, कुछ ऐसे शब्द लिखो जिनका अर्थ लक्षणा से जाना जाय ?

९—व्यङ्गार्थ और वाच्यार्थ में क्या भेद है। वाच्यार्थ जानने के कौन २ प्रधान साधन हैं।

शब्दों का वर्गीकरण

व्युत्पत्ति की दृष्टि से शब्दों के तीन भेद हैं:—'रूढ़'! 'यौगिक' और 'योगरूढ़'। 'रूढ़' वह शब्द हैं जो दूसरे शब्दों के योग से न बने हों; जैसे—नाक, हाथ रात, पानी, रोटी, हाथी आदि।

यौगिक वह शब्द हैं जो दो शब्दों के योग से अथवा किसी शब्द में प्रत्यय लगाकर बनाये जाते हैं; जैसे—गुणी, त्यागी, राजकोष, विश्वामित्र आदि।

योगरूढ़ वह शब्द हैं जो बने तो यौगिक शब्दों की भाँति हों परन्तु वह रूढ़ शब्दों ही की भाँति किसी विशेष अर्थ में प्रयुक्त होते हों; जैसे—पंक + ज (पंक से जन्म जिसका) व्युत्पत्ति के अनुसार पंक (कीच) से पैदा होने वाली सब वस्तुओं को पंकज कह सकते हैं. परन्तु केवल 'कमल' के अर्थ ही में उसका प्रयोग होता है।

वाक्यों में प्रयोग के अनुसार शब्दों के आठ भेद हैं:—

वस्तुओं या प्राणियों के नाम बताने वाले शब्द संज्ञा

संज्ञाओं का कुछ होना या उनका करना बताने वाले शब्द, क्रिया।

संज्ञाओं की विशेषता बताने वाले शब्द विशेषण।

क्रियाओं की विशेषता बताने वाले शब्द क्रिया विशेषण।

संज्ञाओं के बदले में आने वाले शब्द सर्वनाम।

क्रिया से नामार्थक शब्दों का सम्बंध सूचित करने वाले शब्द। सम्बंध सूचक।

दो शब्दों या वाक्यों को मिलाने वाले शब्द समुच्चय बोधक।

मनोविकार सूचित करने वाले शब्द विस्मयादि बोधक।

१—अरे दैव, तेरी लीला अपार है।

अरे—विस्मयादि बोधक अव्यय इस से मनोविकार प्रगट होता है।

दैव—संज्ञा (विशेष्य), एक नाम सूचित होता है।

तेरी—सर्वनाम, दैव संज्ञा के बदले में आया है।

लीला—संज्ञा, दैव के कर्त्तव्य का नाम है।

अपार—क्रिया विशेषण 'है' क्रिया का है।

है—क्रिया, यह दैव की लीला का होना बताती है।

२—राम और लक्ष्मण एक सुंदर पहाड़ी पर चढ़ कर दक्षिण की ओर बड़ी गंभीर दृष्टि से देखने लगे।

'राम' 'लक्ष्मण' संज्ञाओं का जोड़ने वाला 'और' पद।
'समुच्चयबोधक है'

'एक' और 'सुंदर' दोनों पद पहाड़ी के विशेषण हैं।

'पर' पहाड़ी संज्ञा का प्रत्यय है।

'चढ़कर' क्रिया है, राम लक्ष्मण का चढ़ना बताती है।

'दक्षिण' संज्ञा है, क्योंकि एक दिशा का नाम है

'की' प्रत्यय है

'चारों' ओर का विशेषण है

'ओर' सम्बन्ध-वाचक पद है क्योंकि वाक्य के दक्षिण पद से क्रिया का सम्बन्ध दिखाता है

'बड़ी' और 'गंभीर' दृष्टि के विशेषण हैं

'बड़ी गंभीर दृष्टि से' क्रियाविशेषण है क्योंकि देखा क्रिया की विशेषता बताता है

'देखा' क्रिया है, क्योंकि राम लक्ष्मण ने उसे किया

इनमें संज्ञा, क्रिया सर्वनाम और विशेषण का वाक्य में रूपान्तर होता है। इसलिये इन्हें विकारी कहते हैं और 'क्रिया विशेषण' 'सम्बंध वाचक', समुच्चय बोधक' और 'विस्मयादिबोधक' के रूप सदैव एक से रहते हैं इसलिये इन्हें अविकारी अथवा अव्यय कहते हैं।

संज्ञा का, लिङ्ग वचन और कारक के कारण रूपान्तर होता है

सर्व नाम में वचन और कारक से विकार होता है

क्रिया में काल, वचन और लिङ्ग के कारण विकार होता है।

विशेषण जब अकेला संज्ञा की भाँति आता है तो संज्ञा की तरह विकृत होता है।

जब विशेषण संज्ञा अर्थात् अपने विशेष्य के साथ आता है तो केवल लिङ्ग और कहीं २ वचन का उसमें विकार होता है।

कारक।

संज्ञाओं की उस अवस्था को कारक कहते हैं जिससे वाक्य में संज्ञाओं का क्रिया या दूसरी संज्ञाओं से सम्बंध जाना जाता है।

संज्ञाओं की अवस्था अर्थात् कारकों के आठ भेद हैं।

(१) कर्त्ता--संज्ञा के जिस रूप से क्रिया का होना या करना पाया जाय, उस रूप को कर्त्ता कहते हैं; जैसे-हरि खेलता है।

(२) कर्म--जिस पर क्रिया का फल रहे, जैसे-हरि को बुलाओ

(३) करण--जिसके द्वारा कर्त्ता क्रिया को सिद्ध करे, जैसे-हरि से भिजवाया।

(४) सम्प्रदान--जिसके लिये क्रिया की जाय अथवा जिस को कुछ दिया जाय, जैसे-हरि के लिये लाया।

(५) अपादान—क्रिया के विभाग की अवधि को अपादान कहते हैं; जैसे-हरि से लाया।

(६) सम्बन्ध—वाक्य में किसी संज्ञा का किसी संज्ञा से ठीक २ सम्बंध प्रतीत हो, जैसे—हरि का घोड़ा है।

(७) अधिकरण—क्रिया के आधार को अधिकरण कहते हैं; जैसे—हरि में गुण हैं।

(८) सम्बोधन—जिसमें पुकारा या चिताया जाय, जैसे-हे हरि!

कारकों अर्थात् संज्ञाओं के रूपान्तरों का प्रयोग 'कारक और विभक्ति' वाले शीर्षक में देखिये।

अभ्यास

१—नीचे लिखे वाक्यों के शब्दों का वर्गीकरण करोः—

मैं धर्म के लिये प्राण दे सकता हूं। घोड़ा से बढ़कर कोई सवारी नहीं।
' हानि लाभ जीवन मरन जस अप जस विधि हाथ '
'पामर प्रान न जाँय अभागे'।

२—कौन २ से पद विकारी हैं और कौन से अविकारी और क्यों ?

३—कारक के भेद बताओ और ऐसे कौन से कारक हैं जिसका क्रिया से सम्बन्ध नहीं होता।

४—क्या इन कारकों में कोई ऐसा भी है जिसका वाक्य में किसी दूसरे पद से सम्बन्ध नहीं होता (सम्बोधन)



द्वितीय अध्याय।

वाक्य-विचार।

वाक्य।

परस्पर अपेक्षा रखने वाले पद-समूह को 'वाक्य' कहते हैं। जिस पद-समूह के योग से कोई पूरा भाव प्रकाशित हो जाय, उसे 'वाक्य' कहते हैं। किसी भाव को प्रकाशित करने के लिये व्यवहृत-पद-समूह में परस्पर सम्बन्ध होना चाहिये, नहीं तो वाक्य का अर्थ समझमें न आवेगा। वाक्य के अन्तर्गत पदों के सम्बन्ध को 'आकांक्षा' 'योग्यता' और 'आसक्ति' कहते हैं।

आकांक्षा—मतलव समझने के लिये एक पद को सुन कर दूसरे पद के सुनने की इच्छा होती है, उसे 'आकांक्षा' कहते हैं; जैसे 'पेड़ से' इसके पीछे यह सुनने की इच्छा होती है "पत्ते गिरते हैं"। 'वह सब चले गये' इसके पीछे यह कहना पड़ेगा—'जो रात को यहां ठहरे थे'।

योग्यता—वाक्य के पदों का अन्वय करने के समय अर्थ-सम्बन्धी वाधा न हो; जैसे–'रेत पर तैरने लगा।' यहाँ योग्यता के अनुसार पद-विन्यास नहीं है; रेत पर कोई नहीं तैरता, पानी पर तैरते हैं।

आसक्ति—योग्यता और आकांक्षा-युक्त पदों के ठीक रीति से स्थापन करने को 'आसक्ति' कहते हैं; जैसे:—'पानी' इसके पीछे ही 'बरसता है' लिखना पड़ेगा।
'पिता की, बड़ा धर्म है, आज्ञा मानना'
इसमें आसक्ति नहीं है, अतः वाक्य नहीं है।

वाक्य यह है 'पिता की आज्ञा मानना बड़ा धर्म है'। अतः अब वाक्य की परिभाषा इस प्रकार हुई—'किसी आकांक्षा योग्यता, आसक्ति सहित पद-समूह को 'वाक्य' कहते हैं'।

अभ्यास

(१) वाक्य किसे कहते हैं ?

(२) वाक्यों में किन बातों का ध्यान रखना चाहिये ?

(३) नीचे लिखे वाक्यों में क्या दोष हैं। उन्हें दूर करके शुद्ध वाक्य बनाओ।

(अ)—बढ़ई वसूले से कपड़ा सीता है। (ब)—मैं जाता हूँ रोटी खा कर आगरे को। (स)—आम से गिरता है पेड़। (द)—नदी में आग बहती है।

(४) नीचे लिखे वाक्यों में आकांक्षा मिलाकर वाक्य बनाओः—

नदी पार करने के लिये………। क़लम……………।
काग़ज़ मैला……………। छतरी की तान………।
रेल की पटरी……। मेरी पुस्तक……। घोड़े की टाँग……।
दूकान………। प्रचण्ड वायु………। निर्मल आकाश………।

वाक्यांश

जिन सब पदों से मन का पूरा भाव प्रकाशित न होकर, केवल भाव का कुछ भाग प्रकाशित हो, उसे 'वाक्यांश' कहते हैं; जैसे—'महाराज बड़ौदा ने कहा', 'कल रात को महात्मा गांधी'।

कहीं २ एक पद भी वाक्यांश हो जाता है; जैसे 'राम गये' में दोनों पद वाक्यांश हैं। 'वह कार्य करना है, जो कल कहा था।' इसमें दोनों वाक्य, वाक्यांश हैं।

अभ्यास ।

नीचे लिखे वाक्यांशों में शेष पद मिला कर पूरे वाक्य मिलाओ:—

१—पुस्तक रक्खी रक्खी ·········।
२—मैं ठोकर खाकर ·········।
३—मनोहर वाटिका में जाते ही·········।
४—कोयल की मधुर ध्वनि सुनते ही···।
५—बादल ·········।
६—सूर्य को प्रचण्ड तापसे·········
७—सोहन कैसा सुन्दर·········।
८—हरिहर ने ·········।

वाक्य खंड ।

वायु वेग से वह रही है । पुष्प खिल रहे हैं । भारतवर्ष सुहावना प्रदेश है । मोहन परोपकारी बालक है ।

इन वाक्यों में 'पुष्प' 'वायु' 'भारतवर्ष' और 'मोहन' के नाम हैं । हरएक वाक्य में किसी नाम के सम्बंध में कुछ न कुछ कहा गया है ।

वाक्य में जिस पदार्थ अथवा प्राणी के सम्बंध में कुछ चर्चा की जाती है उसे **उद्देश्य** कहते हैं । किसी पदार्थ या प्राणी के बारे में जो कुछ वर्णन होता है उसे **विधेय** कहते हैं; ऊपर के वाक्यों की उद्देश्य-विधेय-तालिका नीचे दी जाती है:—

उद्देश्य	विधेय
पुष्प	खिल रहे हैं
वायु	वेग से वहती है
भारतवर्ष	सुहावना प्रदेश है
मोहन	परोपकारी बालक है

उद्देश्य विधेय मिल कर पूरा वाक्य होता है ।

अभ्यास ।

नीचे के वाक्यों में से उद्देश्य विधेय पृथक् २ करो:—

यमुना मंद मंद वह रही है । वर्षा होने की संभावना है ।

सत्य ही सबसे बड़ा धर्म है। अन्याय नहीं करना चाहिये।
भारत कृषि-प्रधान देश है। विज्ञान की शिक्षा का प्रबंध नहीं।
नीचे लिखे उद्देश्य के साथ विधेय मिलाओ:—

हिमालय,............। परमात्मा,..............।
दया,...............। प्रेम,...................।
उपकार..............। स्वास्थ्य.................।

नीचे के विधेयों के साथ उद्देश्य जोड़ो।

.................शक्ति बढ़ती है।
.................गाया जाता है।
.................सच्चा हितैषी है।

वाक्य भेद।

सरल वाक्य।

सरल वाक्य में एक उद्देश्य वा कर्त्ता और एक विधेय वा समापिका क्रिया अवश्य होती है; प्राय: उद्देश्य और विधेय अन्य नाना प्रकार के पदों के मिलने से बढ़ जाता है, इसलिये एक वाक्य में दो से अधिक पद होते हैं। सरल वाक्य में जितने पद होते हैं वह उन्हीं दो प्रधान भागों के अन्तर्गत होते हैं। वाक्य में उद्देश्य और विधेय के अतिरिक्त जितने पद हों उनमें से कुछ तो उद्देश्य के सहकारी होंगे और कुछ विधेय के। सहकारी पद सहित मुख्यउद्देश्य, उद्देश्य के अन्तर्गत और सहकारी पद सहित प्रकृतविधेय, विधेय अंश के अन्तर्गत समझे जाते हैं। यदि क्रिया सकर्मक होगी तो उसका कर्म भी विधेय-वाच्य होगा; 'जैसे-घोड़ा घास खाता है'—इसमें घास सहित खाता है पद विधेय होगा। उद्देश्य और विधेय जिस प्रकार सहकारी पदों के मिलने से बढ़ जाते हैं; उसी प्रकार कर्मादि भी अन्य पदों से बढ़ते हैं; जैसे:— "मुझे एक पका फल मिला" इसमें 'फल' कर्म 'एक' और 'पका' दो विशेषणों द्वारा बढ़ा हुआ है। विशेष्य,(संज्ञा)

सर्व नाम, और विशेष्य रूप व्यवहृत वाक्यांश, विशेषण और क्रियार्थक संज्ञा यह, उद्देश्य और कर्म रूप में व्यवहृत होते हैं; जैसे:—

विशेष्य—यथा—राम प्रदर्शिनी देखता है।

सर्वनाम—वह मुझको प्यार करता है।

विशेष्य रूप में व्यवहृत विशेषण-शिक्षित, अशिक्षितों को घृणा से देखते हैं।

क्रिया वाचक विशेष्य-यथा-खाना कहने से भोजन करना समझा जाता है।

क्रियार्थक संज्ञा—दिन में सोना अच्छा नहीं होता।

वाक्यांश—बिना पूछे ले जाना चोरी करना कहाता है।

जिन पदों के नीचे रेखा है वह उद्देश्य और जिनके ऊपर रेखा है वह कर्म हैं।

विशेषण, विशेषण भाव वाले विशेष्यादि पद और वाक्यांश के मिलने से उद्देश्य वा कर्म परिवर्द्धित होता है; यथा—

विशेषण द्वारा—सुन्दर बालक उत्तम पुस्तक पढ़ता है।

सम्बंध पद द्वारा—राम का मित्र हमारी बात सुनता था।

विशेष्य द्वारा—राजा रामचन्द्र पुरोहित वशिष्ठ से कहने लगे।

असमापिका क्रिया द्वारा-राम ने 'आकर' उसको 'कार्य्य करते' देखा।

वाक्यांश द्वारा-मंत्री ने विद्रोह का संवाद पाकर, उसमें लिप्त सबको पकड़वा लिया।

नीचे की रेखा वाले पदों से विशेष्य और ऊपर की रेखा वाले पदों से कर्म बढ़ाया गया है।

उक्त प्रकार के दो वा बहुत से पदों की सहायता से भी उद्देश्य और कर्म बढ़ाया जा सकता है; यथा—

बीस वर्ष की आयु वाला राम का पुत्र मोहन, अत्यन्त लाभदायक दो सौ पृष्ठ की पुस्तक लिख रहा है।

विधेय।

सम्पूर्ण अर्थ प्रकाशक क्रिया को 'सरल विधेय' कहते हैं;

यथा—मैं पुस्तक लिखता हूँ। इस वाक्य में 'लिखता हूँ' क्रिया के द्वारा वक्ता का सम्पूर्ण आशय प्रकाशित हो जाता है, इसलिये यह सरल-विधेय है।

विधेय यदि असम्पूर्ण अर्थप्रकाशक क्रिया हो और उसके साथ पूर्ण अर्थप्रकाशक सहकारी पद हो तो, उस विधेय को 'जटिल-विधेय' कहते हैं; जैसे—आकाश परिष्कृत हुआ, सूर्य्य उदय हुआ, यहाँ परिष्कृत और उदय पद न होने से केवल 'हुआ' से पूरा अर्थ प्रकाशित नहीं होता इसलिये 'उदय' और 'परिष्कृत' 'हुआ' सहित जटिल विधेय हैं।

क्रिया विशेषण वा तद्भावापन्न पद वा वाक्यांश द्वारा विधेय परिवर्द्धित होता है; यथा—राम शीघ्र आया है, उसने बहुत समय बिता दिया, तुम स्पष्ट करके कहो, यत्नपूर्वक कार्य करो।

करण, अपादान और अधिकरण पद भी विधेय को परिवर्द्धित करते हैं; यथा—मैं आखों से देखता हूं। हृदय से चाहता हूं। लाठी से मारता हूं। आकाश से पानी गिरता है। पक्षी आकाश में उड़ता है। वह कल रात्रि को आया था। सूर्योदय से अंधकार दूर हुआ।

असमापिका क्रिया द्वारा भी विधेय परिवर्द्धित होता है; यथा:—राम दौड़ते २ कहने लगा, सुन्दर दृश्य देखते देखते अवाक् रह गया।

अर्थ के विचार से विधेय वर्द्धक के छः भेद होते हैं; जैसे:—

कालवाचक—कल आऊंगा। उसका उत्तर आने तक ठहरूंगा।

रीतिवाचक—धीरे २ ज्ञान होता है। शान्ति से सोचो।

परिमाणवाचक—थोड़ा सोचना भी चाहिये—दिल्ली आगरे से बड़ी है।

कारण वाचक—तुम्हारे दर्शन से प्राण बच गये।

कार्य वाचक—मेरे लिये ऐसा क्यों करते हो।

स्थान वाचक—मेरे पास वह आया, यहां से चला गया।

जटिल वाक्य।

जिस वाक्य में एक उद्देश्य और एक विधेय को प्रधानता प्राप्त हो और उसके आनुषङ्गिक (सहायक) एक वा कई क्रिया हों उसको **जटिल वाक्य** कहते हैं; यथा—'मैं जानता हूं, उसने बड़ा अन्याय किया है।' 'किस प्रकार ऐसा हुआ यह मैं नहीं समझ सकता'।

जटिलवाक्य का जो अंश प्रधान उद्देश्य और प्रधान विधेय है, उसको प्रधान अंश; और अन्य भाग को आनुषङ्गिक कहते हैं। पहले उदाहरण में 'मैं जानता हूं' प्रधान अंश और 'उसने बड़ा अन्याय किया' यह इस अंश का आनुषङ्गिक है। आनुषङ्गिक अंश दो प्रकार का होता है—विशेष्य भाव प्राप्त दूसरा विशेषण भाव प्राप्त।

जो आनुषङ्गिक वाक्य विशेष्य का परिवर्त्ती हो उसे 'विशेष्य भावापन्न वाक्य' कहते हैं; जैसे:—उसने जो साहस का काम

किया था, मुझे सब मालूम है; अर्थात्, उसका साहसकार्य मुझे मालूम है। 'मैं देख कर आया हूं, उसकी कैसी दशा है; अर्थात्, मैं उसकी दशा देख कर आया हूँ। 'मैं इच्छा करता हूँ कि, सब सुखी हों' अर्थात्, मैं सब के सुख की इच्छा करता हूं।

जटिल वाक्य में "विशेष्य भावापन्न आनुषङ्गिक अंश" उद्देश्य और कर्म दोनों हो सकते हैं। पहले उदाहरण में आनुषङ्गिक अंश उद्देश्य और दूसरे व तीसरे में कर्म रूप से व्यवहृत हुआ है।

जो आनुषङ्गिक वाक्य किसी विशेष्य व सर्वनाम की क्रिया का गुण प्रकाश करे उसे 'विशेषण-भावापन्न-वाक्य' कहते हैं; 'जो मनुष्य केवल स्वार्थ देखता है सो प्रकृत-सुखी नहीं होता;' अर्थात्, स्वार्थपर मनुष्य प्रकृतसुखी नहीं होता। 'उन्होंने जो बात कही थी मुझे भली प्रकार याद है;' अर्थात्, उनकी कही हुई बात मुझे भली प्रकार याद है।

आनुषङ्गिक-विशेषण-भावापन्न-वाक्य, उद्देश्य और कर्म और विधेय-विशेषण भी हो सकता है; यथा—'आज जो वृष्टि हुई है, उससे विशेष उपकार होगा;' अर्थात्, आज की वृष्टि से विशेष उपकार होगा। 'उन्होंने जो रुपया भेजा था, मुझे मिल गया;' अर्थात्, उनका भेजा हुआ रुपया मुझे मिल गया। इस औषध को जब तुम खाओगे तभी लाभ पहुँचायगी;' अर्थात्, यह औषध खाते ही लाभ पहुँचायगी। प्रथम उदाहरण वाक्य में, आनुषङ्गिक-वाक्य उद्देश्य का, दूसरे में कर्म का, तीसरे में विधेय का विशेषण है। इसलिये प्रथम दो 'विशेषण' और अन्तिम आनुषङ्गिक-वाक्य क्रिया-विशेषण भावापन्न है।

यौगिक वाक्य।

जिस में अनेक वा कुछ सरल और कुछ जटिल वाक्यों का मेल हो उसे 'यौगिक वाक्य' कहते हैं; जैसे—राम तो आये हैं पर, हरि नहीं आवेंगे। राम जाँयगे अथवा हरि जाँयगे। यहाँ भिन्न २ सरल वाक्य 'और' 'अथवा' 'किन्तु' योजकों द्वारा मिल कर यौगिक वाक्य होते हैं।

जो सब वाक्य इस प्रकार मिलते हैं उनके अंतर्गत उद्देश्य, विधेय अथवा और कोई पद परस्पर मिलते हों उनका बार २ उल्लेख करना उचित नहीं है; जैसे—

'मैं तुम्हें प्रेम से स्मरण करता हूँ,' 'मैं तुम्हें भक्ति से स्मरण करता हूं' न लिख कर 'मैं तुम्हें भक्ति और प्रेम से स्मरण करता हूँ'। 'राम आया,' 'हरि आया,' 'लक्ष्मण आया,' 'गोविन्द आया' न कह कर, यह कहेंगे—राम, हरि, लक्ष्मण और गोविन्द आये।

अभ्यास।

१—नीचे लिखे वाक्यों के कारण सहित प्रकार बताओ।

मुझे तुमसे यह कहना था कि कभी पत्र तो भेज दिया करो। शीतल-मंद-सुगंध वायु बहती है। पीली गाय को देख कर मेरा चित्त प्रसन्न हुआ। मुझे हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की बैठक में सम्मिलित होना है। जीवन-पथ-प्रदीप जैसा अच्छा छपा है, रचना-प्रबोध भी वैसा ही छपा है। भाषा के द्वारा मनुष्य अपने विचार दूसरों पर प्रगट करता है और दूसरों के समझता है। वही भाग्यवान है जिसे सब प्यार करते हैं। स्वास्थ्य को खोकर विद्या प्राप्त करने से क्या होता है। धर्म्म ही मनुष्य का सच्चा मित्र है। जो क्रियाशील हैं वही सब कुछ कर सकते हैं।

२—सरल-वाक्य और जटिल-वाक्य में क्या अन्तर है दोनों प्रकार के पाँच २ वाक्य लिखो।

३—उद्देश्य और विधेय किन २ पदों द्वारा बढ़ सकते हैं नीचे लिखे वाक्यों के उद्देश्य और विधेय को उचित प्रकार से बढ़ाओ।

"मोहन ने पारतोषिक पाया"

'मोहन' कर्त्ता को, विशेषण द्वारा, विशेष्य द्वारा, समकारक द्वारा और सर्वनाम द्वारा बढ़ाओ।

'पारतोषिक पाया' विधेय को, करण, अधिकरण, सम्बन्ध अपादान द्वारा बढ़ाओ।

वाक्य विश्लेषण।

सरल वाक्यों का विश्लेषण इस प्रकार होगा—

१—उद्देश्य-पद निर्देश करिये।

२—जिन २ पदों के द्वारा उद्देश्य बढ़ाया है उन का निर्देश करना पड़ेगा।

३—विधेय पद का निर्देश। यदि विधेय पद पूर्ण अर्थ प्रकाशक नहीं है तो पूर्ण-अर्थ-प्रकाशक अंश भी उसी के साथ निर्देश करना पड़ेगा।

४—यदि विधेय सकर्मक क्रिया है तो उसका कर्म निर्देश करना पड़ेगा।

५—कर्म-पद जिन पदों के द्वारा बढ़ाया गया है उनका निर्देश करना पड़ेगा।

६—विधेय पद जिन सब पदों के द्वारा बढ़ाया गया है कि उन का सब का निर्देश करना पड़ेगा।

विश्लेषण चित्र।

(१) बंदर की टांगे मज़बूत होती हैं।

(२) कल से पानी बरस रहा है।

(३) धीरजवान मनुष्य कठिनाइयों से नहीं घबड़ाता है।
(४) चरित्र ही मनुष्य का सब से बढ़ कर गहना है।
(५) हिन्दी भाषा का इतिहास अभी तक नहीं मिला।
(६) राम ने सुन्दर पुस्तक दान की।

वा. सं.	उद्देश्य अंश		विधेय अंश				
	मुख्य उद्देश्य	उद्देश्य विस्तार	विधेय	विधेय-पूरक	कर्म: कर्म	कर्म: विशेषण	विधेय विस्तार
१	टागें	बन्दर की	होती हैं	मजबूत			
२	पानी		रहा है	बरस			कल से (काल)
३	मनुष्य	धीरजवान	घबड़ाता है	नहीं			कठिनाइयों से (कारणवाचक) (सम्बन्ध)
४	चरित्र ही		है	गहना			मनुष्य का सबसे बढ़कर (परि.)
५	इतिहास	हिन्दी भाषा का	मिला	नहीं			अभी तक (काल)
६	रामने		की	दान	पुस्तक	सुन्दर	

जटिल वाक्य।

पहले जटिल वाक्य में कौन अंश प्रधान है और कौन आनुषङ्गिक है, यह ढूँढना पड़ेगा। फिर आनुषङ्गिक वाक्य को 'पद विशेष' समझ कर, समग्र वाक्य का विश्लेषण करना पड़ेगा। फिर आनुषङ्गिक वाक्य का पृथक् रूप से विश्लेषण करना पड़ेगा; यथा —

वाक्य—आज वह न आवेंगे, मैंने पहिले ही कहा था।

इस जटिल वाक्य में "मैंने पहिले ही कहा था यह प्रधान अंश और 'वह आज नहीं आवेंगे' आनुषङ्गिक अंश है"।

(१) उद्देश्य— मैंने
उद्देश्य विस्तार
विधेय कहा था
कर्म रूप वाक्य आज हरि नहीं आवेंगे
विधेय विस्तार पहिले ही (काल वाचक)

(२) 'आज हरि नहीं आवेंगे' इस वाक्य में--
उद्देश्य—हरि
विधेय—नहीं आवेंगे
विधेय विस्तार—आज (काल०)

यौगिक वाक्य।

जिन सब वाक्यों से मिलकर 'यौगिक वाक्य बना है, उन का अलग २ विश्लेषण करके पीछे जिन योजकों द्वारा वह मिले हैं उन को दिखाना चाहिये। और यदि यौगिक वाक्य सरल-वाक्यों से बना हो तो सरलवाक्य की रीति के अनुसार और यदि जटिल हों तो, जटिल वाक्य की रीत्यानुसार विश्लेषण करना चाहिये।

अभ्यास

नीचे लिखे वाक्यों का विश्लेषण करो।

(१) राजा महानन्द एक दिन हँसते हँसते जनाने में आ रहे थे।

(२) "शकटार शूद्र और राक्षस ब्राह्मण था जो दोनों अत्यन्त बुद्धि-मान् और महा प्रतिभा-संपन्न थे।"

(३) अन्त में कारागार की पीड़ा से एक एक करके उसके परिवार के सब लोग मर गये।

"किसी कर्त्तव्य के न करने अथवा किसी अनुचित कार्य्य के करने के पश्चात् जो हृदय में वेदना होती है उसे पश्चात्ताप कहते हैं।"

"जो सदा अपराध करते रहते हैं उनको भी किसी समय 'हार्दिक-वेदना' अपने अपने अनुचित कार्य्यों पर होती है।"

"पश्चात्ताप केवल बाहरी ही नहीं; किन्तु हार्दिक होना चाहिये।"

"यह पहले ही कहा जा चुका है कि सर्वांश में कहावतों का हर पहलू ठीक नहीं होता।'

कारक और उनकी विभक्तियां।

पद-स्थापन-प्रणाली समझाने से पहले कारक और उनकी विभक्तियों के व्यवहार का पूरा ज्ञान हो जाना चाहिये। संस्कृत व्याकरण में विभक्तियों और कारकों को पृथक् २ माना है किन्तु हिन्दी के वैयाकरणों ने प्रायः कारक और उनकी विभक्तियों को एक ही रूप दिया है। संस्कृत में एक ही विभक्ति में कई कारकों का प्रयोग होता है। हिन्दी में भी यह बात है परन्तु बहुत कम। संस्कृत में ७ विभक्तियाँ और छः कारक माने जाते हैं। सबम्ध को कारक नहीं मानते, क्योंकि क्रिया से उसका कोई सीधा सम्बंध नहीं है। और सम्बोधन में प्रथमा विभक्ति मानते हैं। किन्तु हिन्दी में आठ कारक हैं और उनकी ८ विभक्तियाँ हैं। हिन्दी विभक्तियाँ स्वतंत्र नहीं हैं।

कर्त्ता के अधिकांश प्रयोगों में कोई विभक्ति नहीं होती। हिन्दी आकारान्त पुल्लिङ्ग शब्दों को छोड़, शेष पुल्लिङ्ग शब्दों का मूल रूप ही उस कारक के दोनों वचनों में आता है। पर स्त्री-लिङ्ग शब्दों और आकारान्त पुल्लिङ्ग शब्दों के बहु वचन में रूपान्तर होता है। हिन्दी में कर्त्ता कारक की जो 'ने' विभक्ति आती है वह कर्त्तृ वाच्य के अप्रधान कर्त्ता के साथ आती है।

कर्म और सम्प्रदान की विभक्ति 'को' है परन्तु बहुधा कर्म में 'को' लोप हो जाता है। कहीं २ सर्वनामों में 'ए' 'एं' रूपान्तर हो जाता है।

कर्ण और अपादन की विभक्ति 'से' है अर्थ के बल से इनके रूप का निश्चय किया जाता है।

सम्बन्ध की विभक्ति 'का' 'के' 'की', जो सर्व नामों में 'ना', 'ने' 'नी' व 'रा' 'रे' 'री' हो जाती हैं।

सम्बोधन का चिह्न 'हे' 'अरे' आदि हैं जो सम्बोधन पद के पूर्व आते हैं। कभी २ सम्वोधन का चिह्न लुप्त रहता है।

उदाहरणों के लिये कारकों में संज्ञा और सर्वनाम का प्रयोग नीचे दिया जाता है।

कर्त्ता (प्रथम कारक) में।

'विद्यार्थी' पढ़ता है।
'बात' कही जाती है।
'गीत' गाया गया।
'घर' बन गया।
'घड़ा भर' दूध है।
'आध सेर' 'घी' है।
'ज्ञान' सबसे उत्तम धन है।
'मोहन' 'घोड़ा'

'अश्विनी' 'भरणी' आदि नक्षत्र हैं।
हरि 'पागल' होगया है।
मैं तुम्हें विद्वान् समझता था।
'कहन' 'सुनन' होगईं।
हमारा 'जीवन' वृथा है।
यह 'संसार' मिथ्या है।
दशरथ नाम का 'राजा' था।
तुमको 'भाई' समझता हूँ।

कर्मकारक।

'विद्यार्थी' को समझाया।
'गीता' पढ़ी।
'तुम्हें' (तुमको) क्या हुआ।

'उसे' (उसको) बुलाओ।
'दो पहर को' छुट्टी होजावेगी।
'तुमको' ज्ञान प्राप्त होगा।

'खेलने को' चला गया।
हरि 'आगरे को' गया।
'नहाने को' देर हो रही है।
'कितनों को' ठगा है।
'साथियों को' भगा दिया।
'गुरु को' दयालु होना चाहिये।
'कहनी' कहे तो 'करनी' करै।
'मोहन को' बुलाया।
'गाय को' दाना खिलाया।
'लड़कों को' पुस्तक नहीं मिली।
'कहने को' पण्डित हैं।
'स्नान' 'संध्या' 'पूजा' करो।
'गोकुल को' पुकारो।
'मुझे' जाना होगा।
'तुमको' धन्य है।

करण कारक में

'पैरों से' चलते हैं।
'खड्ग से' प्राण लिये।
'विद्या से' धन मिलता है।
उसने 'क्रोध से' देखा।
सारी 'शक्ति से' सहायता की
'अन्त:करण से' कहा।
'किस भाव से' बेचते हो।
'चाव से' पढ़ा
भगवां 'पहनने से' साधु समझा
'बाल काल से ही' यह दशा है
मुझसे किया 'नहीं जाता'
पांच सौ 'रुपयों से' क्या होगा।
'रुई से' वस्त्र बनते हैं।
'प्रयत्न से' फल मिलता है।
'चाल से' पहचान लिये।
'कानों' सुनी 'आँखों' देखी बात है
'खिड़की से' झांक रहा था।
'मोहन से' बैर हो गया।
'धन से' प्रयोजन है।
'रोने धोने से' क्या हुआ ?
'शरीर से' स्वस्थ हैं।
'आदि से' अन्त तक।
अगले 'दिन से ही' सही।
थोड़े से उठा नहीं जाता।

सम्प्रदान में।

राजाने 'दरिद्रियों को भोजनदिया
मैं 'स्नान को' जाता हूँ।
'राम को' यह योग्य नहीं था।
(योग्यता)

'आपको' यह उचित है। (उपयुक्तता)
'शिष्यों को' गुरू जी की आज्ञा माननी चाहिये। (औचित्य)
अब 'उसको' पढ़ना है। (ताकीद)
'राजा को' स्वस्ति हो।
'पण्डित जी को' नमस्कार।
'युद्ध को' चल दिया।
'भेट को' लाया हूं।
'उनको' क्या भेजना चाहिये?
उसे भोजन दो।
उन्हें क्या हुआ?

अपादान

राम 'घोड़े से' गिर पड़ा।
गिरीश आज 'दिल्ली से' आया है
'उससे' यह ढंग ही जुदा है।
यह पुस्तक 'उससे' भिन्न है।
उन्हें 'राम से' परिचय है।
श्रीमान् गिरधर 'शर्मा से' मेरा साक्षात् हुआ।
'धन से' विद्या उत्तम है।
दिल्ली से आगरा दूर है।
हैदराबाद 'मध्य प्रान्त से' परे है।
यह व्यक्ति 'बुद्धि से' हीन है।
बुढ़ापे में मनुष्य 'चलने फिरने से' रहित हो जाता है।
मूर्ख 'विद्या से' अनभिज्ञ होते हैं।
माता 'पिता से' अधिक पूज्य है।
हिमालय 'भारत से' उत्तर ओर है
'मथुरा से' वृन्दावन ५ मील है।
'तन-मन-धन से' सेवा करो।
जाड़े के दिनों में '१० बजे से' ४ बजे तक स्कूल खुला करते हैं।
वह सिंह से डर गया।

सम्बन्ध कारक

'महात्मा का' उपदेश है।
'पण्डित का' पाण्डित्व नहीं रहा।
'बालू की' भीति है (कार्य, कारण)
'सुवर्ण के' आभूषण बने हैं।
'राजा के समान' मंत्री दयालु नहीं
'काम के सदृश' फल नहीं।
'राजा की' 'आज्ञा के' अनुसार चलो।
'भाई की' प्रतीक्षा की।
सिर के बाल, सफ़ेद हो गये।
काठ की नाव बनाओ।
'विहारी की' सतसई पढ़ो।
'राजा की' पुत्री गई।
तीन 'हाथ का डंडा' लाओ।
'जमुना का' पाट बढ़ गया।
'दश कोस का' फ़र्क़ है।

बीस वर्ष का पुत्र हो गया।
दो वर्ष की बात है।
यह कहने के योग्य है।
'खेत का' खेत नाश हो गया।
'घर के' समीप।
'सब के' सब चले आये।
'रोटी का' खाना।
'गाँव की' सड़क।

'बीस की' गाय।
एक 'आने का' चाकू लाओ।
उसको 'टपके का' डर है।
सुदामा 'जन्म के' दरिद्री थे।
मैं कसम 'खाने का' नहीं।
मैं 'उनके' साथ घर जाता हूँ।
'मेरा' काम 'उसका' नाम।
'तुम्हारा' रुपया 'ईश्वर' का ध्यान

नोटः—समास में सम्बन्ध की विभक्ति लोप हो जाती है।

अधिकरण।

'जल में' मछली रहती हैं।
'नदी के तीर पर' वृक्ष।
वह 'कम्बल पर' सोता है।
उसकी प्रवृत्ति 'ज्ञान में' लगी है।
वह अपनी 'ध्वनि में' मस्त है।
ईश्वर 'सब में' व्याप्त है।
'धातुओं में' स्वर्ण श्रेष्ठ है।
ऐसा करो 'जिसमें' वह कार्य सिद्ध हो।
दुशाला 'देखने में' सुन्दर है।

'चैत्र में' गुलाबी जाड़े पड़ते हैं।
'रस्सी में' गाँठ लगी है।
राधे मेरे 'कहने में' नहीं।
दश 'रुपये में' गाय बेची।
चिड़िया 'हाथ' न आई।
दिन-भर प्रयत्न किया परन्तु टका 'हाथ' आया।
हमारे निकट पुस्तक रक्खी है।
तुम्हें एक समय न एक समय इसका फल मिलेगा।
वह पुस्तक देखने में लगा है।

अभ्यास

१—नीचे लिखे वाक्योंमें बड़े अक्षरोंके पद किन२ कारकों में प्रयुक्त हैं:—

हाथ से रुपया दिया था। **बुद्धि से** काम नहीं किया। **मुझ से** नहीं होता। **तुम्हें** प्रणाम है। मेरे **पास से** निकल गया।

सुधार से क्या अर्थ है। **तुम्हारी** बात नहीं समझा। **दूध** है न **दही**। **दूध** बेचा जाता है। **रात** होने को है। **न्यायालय** क्या है? आदर्श प्रेस एक बात में तो **आदर्श** ही है। **मोहन** की अपेक्षा **सोहन** चतुर है। **घर** ऊंचा है। **उसका** नामकरण **संस्कार** होगा। कारन कवन **नाथ मोहि** मारा।

२—नीचे लिखे हुए पदों को वाक्य में प्रयुक्त करोः—

हरि,	प्रभाव,	गान—	कर्म और अधिकरण में
शान्ति,	दया,	प्रेम	अपादान और करण में
धृष्टता,	विद्वता	धैर्य	कर्त्ता और सम्प्रदान में

३—कुछ ऐसे वाक्य लिखो जिसमें अधिक से अधिक कई कारकों का प्रयोग हो सके।

वाक्य रचना।

भाषा की रीति के अनुसार वाक्य के पद-समूह जोड़ने का नाम 'वाक्य रचना' है।

वाक्य, गद्य और पद्य भेद से, दो प्रकार के होते हैं।

छन्दोबद्ध-वाक्य को पद्य कहते हैं।

जिसमें कारक और क्रिया आदि का नियमपूर्वक स्थापन हो, उसे गद्य कहते हैं।

इस पुस्तक में 'गद्य-वाक्य-रचना' पर ही विचार किया जायगा। वाक्य-रचना के साधारण और स्थूल नियम:—

कर्त्ता और समापिकाक्रिया-वाक्य के प्रधान अंग हैं, इसलिये 'वाक्य-रचना' में पहले कर्त्ता और पीछे समापिका क्रिया लाते हैं; जैसे फूल खिला है; धूप पड़ती है।

यदि क्रिया सकर्मक हो तो, कर्म पद क्रिया के पूर्व आता है, द्विकर्मक होने से पहले गौण-कर्म और पीछे मुख्य-कर्म रहता है; जैसेः—वह पुस्तक पढ़ता है; वह श्यामा को खेल दिखाता है।

पूर्वकालिक-क्रिया समापिका-क्रिया के पहिले आवेगी, जब कि दोनों का कर्त्ता एक होगा। और जिस क्रिया के जो कर्म, करण आदि पद होंगे वह उस से प्रथम आवेंगे; जैसे:—उसने हाथ से हार बना कर, गले में पहना दिया।

प्राय: विशेषण पद अपने विशेष्य से प्रथम रहता है। यदि दो वा अधिक विशेषण पद एक साथ आवें, तो उनके बीच में संयोजक अव्यय नहीं रहता; जैसे:—

कर्मवीर गोखले की मृत्यु से भारत की बहुत बड़ी हानि हुई।

सर्व नाम पदों के विशेषण–प्राय: पीछे आते हैं; जैसे:—
वह बुद्धिमान कहने लगा–'अभी ठहरो'।

जिस स्थान पर दो वा अधिक विशेष्य पद उद्देश्य-विधेयभाव से जुड़े हों, उस स्थान पर विधेय पद पीछे और उद्देश्य पद पहले लिखा जायगा; जैसे:—धर्म ही सच्चा मित्र है; विद्या अमूल्य रत्न है; भारतवर्ष हमारी जन्मभूमि है।

विशेषणी-भूत सर्वनाम अपने विशेष्य से पूर्व रहता है; जैसे:–

जो मनुष्य अपना कर्त्तव्य पालन करता है, वह पूजनीय है। जो स्वार्थवश दूसरों को दु:ख पहुँचाते हैं, वे मनुष्य घृणित हैं।

सम्बोधन पद, वाक्य के प्रारम्भ में रहता है और उसके चिह्न 'हे' 'अरे' 'हो' अव्यय, ठीक सम्बोधन पद के पूर्व रहते हैं। कभी २ ये चिह्न लुप्त भी रहते हैं; जैसे:—सीते तुम कहां हो; अरे अभागियो! तुम अब तक सोये पड़े हो, वसन्त की कुछ खबर ही नहीं।

सम्बोधन-पद के ठीक पीछे मध्यम-पुरुष सर्वनाम रहता है। सम्बोधन-पद जिस वचन का हो, उससे पीछे आने वाला सर्वनाम भी उसी वचन का होगा। आदर व गौरव-स्थल पर सम्बोधन से

परे 'आप', समानता, बन्धुता और स्नेहादिस्थल पर "तुम" और अनादर आदि के स्थल पर 'तू' यह सर्वनाम आता है। कहीं 'तू' को भी बराबर वाले और छोटे लोगों के लिये बोलते हैं कहीं २ भक्त लोग ईश्वर के लिये भी 'तू' कहते हैं; जैसेः—

हे ईश्वर! आप हमारी रक्षा करो; हे नीच! तू क्या करता है? चन्द्र, तुम कहाँ जाओगे?

विलापादि के समय, 'हा' 'हे' अव्यय बोले जाते हैं; जैसेः— "हा ईश्वर! तेरी क्या मर्ज़ी है? हे सती साध्वी जानकी! तुमने संसार के सामने पतिव्रत धर्म का कितना बड़ा आदर्श खड़ा किया है।"

सम्बन्ध-पद से परे उसके सम्बन्धी-पद का प्रयोग होता है; जैसेः—"यह राम की पुस्तक है।" यदि सम्बन्धी-पद का कोई विशेषण हो तो वह सम्बन्धी-पद से पूर्व ही रहता है; जैसेः—उस का निर्बल हृदय चार २ हो गया।"

जहां सम्बन्धी-पद का उद्देश्य-विधेय रूप से अन्वय हो, वहाँ विधेय-पद वाक्य में पहले ही आता है; जैसेः—"दूसरों को हानि पहुँचाना ही दुष्टों का काम है।" "देश की भलाई करना ही सज्जनों का धर्म है।"

प्रश्नोत्तर के सिलसिले में कभी २ सम्बन्ध-पद पीछे आता है; जैसेः—यह पवित्र काम किसका है।

करणपद कर्तृपद के पीछे और कर्म से प्रथम आता है, और उसका विशेषण उससे पूर्व रहता है; जैसेः—उन्होंने बड़े परिश्रम से इस कार्य्य का साधन किया; उसने दृढ़ और पवित्र प्रेम द्वारा अपने हृदय को विकसित किया।

जिस सम्पूर्ण अर्थ में अपादान कारक होता है उसी सम्पूर्ण अर्थ-बोधक पद से पूर्व, अपादान-पद रहता है; जैसेः—"वह

तुम्हारे इस काम से असन्तुष्ट हैं, वह कल दो पहर घर से चल खड़ा हुआ; वह अपने पापों से भयभीत होकर त्राहि २ करने लगा"।

विशेषण सहित कर्म, और अधिकरण पद अपादान से पीछे आते हैं; किन्तु करण और क्रिया-विशेषण अपादान से पहिले ही आते हैं; जैसे:—

"उसने हमारे कन्धे से दुशाला उतार लिया; अभाग्य-वश हमारे देश से एक समुज्ज्वल रत्न उठ गया।"

मैंने मातृभूमि के वक्षस्थल से रज उठा कर सिर पर धारण की; उन्होंने अपने पवित्र उपदेश द्वारा भक्तों के हृदय से अन्धकार दूर किया; वह यत्नपूर्वक अपने मार्ग से विघ्नों को दूर करता गया।

प्रायः अधिकरण-पद अपने आधेय के पूर्व स्थापित होता है। जैसे:—"स्वार्थ त्याग ही में अमरत्त्व है; उसने हमारी छाती पर ही यह अनर्थ किया।"

प्रायः कालवाचक अधिकरण वाक्य से पूर्व रहता है; जैसे:— "रात में बड़ी ओस पड़ती है; निशीथ में निस्तब्धता का साम्राज्य स्थापित होता है।"

जहाँ पर कालवाचक और स्थानवाचक दोनों एक काल में अधिकरण हों, वहां पहिले कालवाचक पीछे स्थान वाचक पद आते हैं; जैसे:—"ईश्वर प्रति समय प्रति स्थान में है।"

एक शब्द के दो बार साथ २ आने को वीप्सा कहते हैं। वीप्सा द्वारा सम्पूर्णता, वहुत्त्व, प्रकार, एक-कालीनता, निकटता, केवलता, आदि अर्थ प्रकाशित होते हैं; जैसे:—

घर २ में यह चर्चा फैल गई; हमारे जंगल में बड़े २ वृक्ष हैं।

वह धीरे २ जा रहा था; गीता पढ़ते २ उसके प्राण पखेरू उड़ गये; कानोंकान यह ख़बर चारों ओर फैल गई।

बहुत से आपेक्षक-अव्यय वाक्यों में साथ २ आते हैं; जैसे:- जब तक, तब तक; यद्यपि तथापि; जो और तो; आदि २।

प्रश्न-वाचक सर्वनाम उस पद से प्रथम आता है, जिसके विषय में प्रश्न हो; जैसे:—यह कौन पुस्तक है?

यदि पूरा वाक्य ही प्रश्न हो तो वह वाक्य में पहिले ही आता है; जैसे:-क्या आप वह पुस्तक पढ़ेंगे, जो कल लाये थे?

कभी २ वाक्य में प्रश्न-वाचक सर्वनाम नहीं होता, केवल प्रश्न-वाचक-चिह्न ही अन्त में रहता है; जैसे:- वह गया?

क्रिया-पदों का व्यवहार।

यदि सकर्मक धातु की क्रिया है तो अपूर्ण और हेतु-हेतु-मद्भूत को छोड़ कर शेष भूतों में कर्त्ता का 'ने' चिह्न आता है। परन्तु बकना, भूलना, बोलना, लाना, आदि सकर्मक क्रियाओं में 'ने' नहीं आता है; जैसे:—"नाई बोला, धोबी लाया।"

और जो संयुक्त-क्रिया किसी सकर्मक धातु और लगना, बैठना, जाना, चुकना, सकना आदि धातुओं के योग से बने तो उसमें 'ने' नहीं आता; जैसे:—राम सुन गया, वह खा चुका।

वाक्य में कर्त्ता और कर्म में से जिस की विभक्ति न हो, क्रिया के लिङ्ग वचन उसी के अनुसार होंगे; यदि दोनों में किसी की विभक्ति न हो तो, कर्त्ता के अनुसार; और दोनों की हो तो क्रिया एक-वचनान्त सामान्य-भूत के रूप में स्वतन्त्र होगी; जैसे:—

राम ने रोटी खाई, राम रोटी खाता है।
राम रोटी खाता है, राम ने रोटी को खाया है।

जब एक ही क्रिया के असमान लिङ्गों के अनेक कर्त्ता हों तो क्रिया बहुवचनान्त होगी और लिङ्ग अन्तिम कर्त्ता के अनुसार होगा; जैसे:—श्याम, राम और शान्ता खेलती हैं।

आदि में अनेक लिङ्गों के भिन्न २ कर्त्ता हों और अन्त में कोई सामुदायिक-पद हो, तो क्रिया प्रायः बहुवचन और पुल्लिङ्ग होगी; जैसे:—सरोवर में कुमोदिनी और कुमुद आदि सम्पूर्ण खिल रहे हैं।

पद-परिचय।

वाक्य के पदों का पारस्परिक सम्बन्ध तथा व्याकरण-संबंधी विशेषताओं का जहाँ कथन किया जाय, उसे पद-परिचय, पद-व्याख्या वा पदान्वय कहते हैं।

अनेक वैयाकरण वाक्य में ५ प्रकार के पद मानते हैं, विशेष्य (संज्ञा), विशेषण, सर्वनाम, क्रिया और अव्यय।

विशेष्य के परिचय में—प्रकार, भेद—जाति-वाचक आदि, लिङ्ग, वचन, पुरुष, कारक, विभक्ति, किस क्रिया के साथ अन्वय है। क्रिया-वाचक विशेष्य में लिङ्ग, वचन, पुरुष नहीं लिखा जाता।

सर्वनाम—किस विशेष्य का है, उसी विशेष्य के अनुसार लिङ्ग-वचन होता है, पुरुष और कारक में भेद हो सकता है।

विशेषण—प्रकार भेद, और किसका विशेषण है।

क्रिया—पूर्वकालिक या समापिका, सकर्मक, अकर्मक वा द्विकर्मक, कर्तृवाच्य वा भाववाच्य, काल, पुरुष, वचन, कर्त्ता, यदि सकर्मक हो तो कर्म।

पद-सम्बन्धी कुछ बातें।

'विशेष्य'—दो प्रकार का होता है—साधारण और विशेष।

साधारण—चिन्ता, शोक, सज्जनता आदि।

विशेष—पेड़, हाथी, गंगा, चलना और पंडित आदि।

विशेष-विशेष्य ५ प्रकार का होता है। नाम-वाचक, द्रव्य-वाचक, क्रिया-वाचक, गुण-वाचक और जाति-वाचक।

विशेषण तीन प्रकार का होता है--विशेष्य-विशेषण, क्रिया-विशेषण और विशेषण का विशेषण। जो विशेष्य का विशेषण विशेष्य के पीछे आवे तो वह विधेय-विशेषण होता है।

एक ही शब्द का भिन्न २ पदों में प्रयोग

कभी २ विशेषण-पद स्वतन्त्ररूप से विशेष्य की भाँति आते हैं और उसमें विशेष्य के लिङ्ग वचन होते हैं, जैसे:—पंडितों को बुलाया है।

कुछ गुणवाचक-विशेष्य कभी विशेष्य और कभी विशेषण हो जाते हैं। सुवर्ण-मंदिर में 'सुवर्ण' विशेषण है और मंदिर विशेष्य।

कुछ संख्या-वाचक शब्द जब केवल १०, १२, १५ संख्या हों, तो, संख्या-वाचक विशेष्य, और अन्य पद के संख्या-बोधक हों तो, संख्या-वाचक विशेषण होते हैं। जैसे:—३ घोड़े, ४ गाय।

कभी जाति-वाचक शब्द विशेष्य और कभी विशेषण होता है। विद्या पढ़ना ब्राह्मण का धर्म है। यहाँ ब्राह्मण विशेष्य है और "ब्राह्मण-कुल में जन्म लेकर"—यहाँ ब्राह्मण विशेषण है।

सर्वनाम भी विशेष्य-रूप में आता है—यह वही रणक्षेत्र है। यहाँ "यह" सर्वनाम-विशेष्य-रूप में आया है। सर्वनाम कभी कभी विशेषण-रूप में आता है; जैसे:—"यह मनुष्य देशभक्त है"

कभी २ क्रिया-पद भी विशेष्य-रूप में आता है; जैसे:— 'खा' धातु के आगे 'ता' प्रत्यय लगाने से 'खाता' पद बनता है। यहाँ 'खाता' विशेष्य है।

परिचय करते समय गद्य का एक २ पद लेते हैं और पद्य का गद्य-क्रम (अन्वय) कर लेते हैं। फिर यथाक्रम परिचय करते जाते हैं।

उदाहरण

कुवलय-कुल में से, तो अभी तू कढ़ा है,
बहु-विकसित प्यारे पुष्प में भी रमा है।
अलि, अब मत जा तू, कुंज में मालती की,
सुन मुझ अकुलाती ऊवती की व्यथायें।

[हे] अलि, तू कुवलय कुल में से तो अभी निकला है [और] बहु विकसित प्यारे पुष्प में भी रमा है [इसलिये] अब तू मालती की कुञ्ज में मत जा [और] मुझ अकुलाती ऊवती की व्यथायें सुन।

अलि—जाति-वाचक, संज्ञापद, पुल्लिङ्ग, एक वचन, मध्यम-पुरुष, सम्बोधन कारक।

तू—सर्वनाम पुरुषवाची, मध्यम पुरुष, पुल्लिङ्ग, एक वचन, कर्त्ता, मिश्रित वाक्य की दो क्रियाएं "निकला है" और "रमा है" का।

कुवलय—जाति वा०, संज्ञापद, एक वचन, पुल्लिङ्ग, अन्य पुरुष, कुल का सम्बन्ध-बोधक विशेषण।

कुल में से—जाति-वाचक संज्ञापद, एक वचन, पुल्लिङ्ग, अपादान कारक।

अभी—कालवाचक-क्रिया-विशेषण "निकला है क्रिया का"। निकला है—क्रियापद, अकर्मक, कर्तृ प्रधान, आसन्न-भूत काल, पुल्लिग, एक वचन, निकला से बना है, इसका कर्त्ता तू।

और—समुच्चायिक अव्यय पद "तू कुवलय-कुल में से अभी निकला है और [तू अभी] बहु-विकसित प्यारे पुष्पों में भी रमा है"। इन दो सरल वाक्यों का योजक है।

बहु—विशेषण (विकसित विशेषण का।)

विकसित—विशेषण (पुष्प विशेष्य का।)

पुष्प में—जाति वाचक विशेष्य-[संज्ञा] पद, एक वचन, पुल्लिग, अन्य पुरुष, अधिकरण [व्याप्ताधिकरण] रमा है क्रिया का आधार।

भी—निश्चय-बोधक अव्यय।

रमा है—क्रिया-पद, अकर्मक, कर्तृ प्रधान, आसन्नभूतकाल, पुल्लिग, एक वचन, रमना धातु की, इसका कर्त्ता तू इसका आधार पुष्प।

तू—उपर्युक्त सम्पूर्ण तू का परिचय; [मत] जा और सुन क्रियाओं का कर्त्ता।

अब—क्रिया-विशेषण, कालवाचक [मत] जा क्रिया का।

मालती की—जाति-वाचक संज्ञा-पद, एक वचन, स्त्रीलिंग, अन्य पुरुष, सम्बन्ध पद, कुञ्ज से सम्बन्ध, [सम्बन्ध बोधक-विशेषण] (कुञ्ज है विशेष्य का)

कुञ्ज में—जाति-वाचक संज्ञापद, एक वचन, स्त्रीलिंग अन्य पुरुष, अधिकरण कारक, (मत) जा क्रिया का आधार।

मत—भाव-वाचक क्रिया-विशेषण, [जा क्रिया का]

जा—क्रिया पद, अकर्मक, कर्तृ वाच्य, विधि एक व० पुल्लिग, कर्त्ता 'तू'

सम्बन्ध-पद

मुझ—सर्वनाम, उत्तम पुरुष. एक वचन, स्त्रीलिङ्ग, क्योंकि राधिका का कथन है।

अकुलाती—[अकुलाती हुई] क्रिया-द्योतक संज्ञा। अकुलाना, ऊबना, क्रियाओं की द्योतक।

ऊबती की—क्रियाद्योतक-संज्ञा।

व्यथायें—भाववाचकसंज्ञापद, बहुवचन, स्त्रीलिंग, अन्य-पुरुष, कर्म कारक की अवस्था, सुन क्रिया का कर्म।

सुन—क्रिया-पद, सकर्मक, कर्तृवाच्य, विधिक्रिया, इसका कर्म 'व्यथाऐं' कर्त्ता 'तू'।

अभ्यास

१—नीचे लिखे हुए शब्दों को यथा स्थान रखकर वाक्य बनाओः—

(क) मैंने सदा के मेरी लिये बहिन धारण ब्रह्मचर्य्य व्रत 'है' किया

(ख) 'देवव्रत' 'सन्यासी को' 'आज' 'भूल जाओ' 'देवि',

(ग) क्या परन्तु महाव्रत मेरे त्याग का धक्के से पहली परीक्षा के ही चूर हो जायगा।

(घ) 'पुस्तक' 'मनोहर' 'मोहन', 'लिखकर' पहुँचा देना प्रेस में

(ङ) 'सुख है' 'शान्ति ही में' 'मत भूलो' 'इसे' 'भाई' 'कि'

(च) 'उठ गया है' 'सौभाग्य' 'इस संसार से' 'एक दम'

(छ) 'हर घड़ी' 'हर जगह' 'उत्पन्न करने वालेको' 'याद रक्खो' 'अपने'

२—नीचे लिखे आपेक्षक पदों का वाक्यों में प्रयोग करो:—

'जो' 'सो', 'यद्यपि' तथापि, 'यदि तो' 'जहां' 'वहां' 'जो' 'वही'

३—नीचे लिखे वाक्य में प्रश्न, आधेय, सम्बंध और सम्बोधन पद जोड़ोः—

·········तुम·····मक्खन रक्खा है उसे·········घर दे आओ

विशेषण जोड़ो:—

वह······बोला हे······मनुष्य······तू कैसा······काम कर रहा है

नीचे लिखे वाक्यों का पद-परिचय करोः—

१—जैसी अधिक शान्ति और आराम की निद्रा आती है वैसी ही अधिक शक्ति मालूम पड़ती है।

२—कब खाना, क्या खाना, किस प्रकार से खाना—अब हम इन पर विचार करेंगे।

रिक्त-पदों का पूरा करना

पद-स्थापन-प्रणाली के नियम और अर्थ की अपेक्षा ध्यान में रखकर रिक्त-पदों को पूरा करना चाहिये। रिक्त-पद-पूर्ति के लिये कोई मुख्य नियम नहीं है। साधारणतः विशेष्य से पूर्व विशेषण और क्रिया से पूर्व क्रियाविशेषण व अधिकरण, और आपेक्षक पदों में सहयोगी पद यथा स्थान पर आते हैं:—

(धनुर्धारी) अर्जुन ने जिस गांडीव (धनुष) से (अनेक) राक्षसों का प्राणान्त हुआ, (वह) बेकाम हुआ।

अभ्यास

रीते स्थानों को पूरा करोः—

१—तप से ( ) शुद्ध होता है।

२—सत्य से जीवन ( ) होता है।

३—व्यायाम से स्वास्थ्य·········है।

४—शिक्षा वह है जिससे ( ) हो।

५—लोक-परलोक बनाने वाले ( ) की वृद्धि हो।

६—हमारे देशी भाषा के अध्यापकों में (······)-पत्र पढ़ने में रुचि बहुत कम (······) जाती है।

७—हमारे देश ( ) जनता ( ) अभी संवाद-पत्रों का उतना ······नहीं है जितना ( ) चाहिये।

८—भूख (······) या अधिक गर्मी लगने से उससे बचने की इच्छा हमारे······हो जाती है।

विराम-चिह्न ।

पद, वाक्यांश वा वाक्य बोलते समय बीच २ में कुछ देर के लिये ठहरना पड़ता है; इसी ठहराव को विराम कहते हैं। जब हम पद, वाक्यांश व वाक्य लिखते हैं तो विराम की जगहों पर कुछ चिह्न लगाते हैं, उन्हें विराम-चिह्न कहते हैं। विराम-चिह्नों के बिना लगाये हमारे कहे हुए वाक्यों के अर्थ समझने में सुविधा नहीं होती। वाक्य-रचना के अभ्यास के साथ ही विराम-चिह्नों के लगाने का अभ्यास करना चाहिये। आजकल साधारणतः हिन्दी में नीचे लिखे हुए विराम-चिह्नों का प्रयोग करते हैं:—

अल्प-विराम या कौमा	(,)
अर्द्ध-विराम या सेमीकोलन	(;)
पूर्ण-विराम या पाई	(।)
प्रश्न-सूचक	?
विस्मयादि-बोधक	!
उद्धरण	"......"
कोलन और डैस	:—
सम्बोधन	, !
विभाजन	(-)

अल्प-विराम

वाक्य पढ़ते समय जिस स्थान पर थोड़ी देर ठहरना पड़े, वहाँ अल्प-विराम लगाते हैं; जैसे :—

१—चतुर कारीगर, मोती, पुखराज,नीलम, हीरा, मूंगा आदि की जाँच करते हैं।

२—इसके लिये प्राण जांय तो हर्ज नहीं, क्योंकि आत्मा अमर है।

३—वह जानता है, मैं पास हो जाऊँगा।

४—मैं कलमदान को देखूँगा, जो घर रक्खा है।

अर्द्ध-विराम।

अल्प-विराम से जहां कुछ अधिक ठहरते हैं और जहां पर दो वाक्यों के अर्थों में पास २ का सम्बंध होता है उनको पृथक् करने के लिये अर्द्ध-विराम लगाते हैं; जैसे :—

"हम अपने शरीर को किस तरह रक्खें; हम अपने मन को किस तरह रक्खे; हम अपने कारोवार का किस तरह प्रबंध करें; हम अपने बाल बच्चों का किस तरह पालन करें; यह सब बातें जानना जरूरी हैं।

पूर्ण-विराम।

जहाँ पर एक वाक्य पूरा हो जाता है वहाँ पूर्ण विराम (।) लगाते हैं; जैसे :—

एक और दिल्लगी सुनिये। आपके एक मात्र हैं मास्टर उमाप्रसाद। वे संयुक्त प्रदेश के लखनऊ नगर में मास्टर थे। आगरे को अपनी तवदीली चाहते थे।

एक पूर्ण-वाक्य के बीच में अल्प-विराम, अर्द्ध-विराम आदि चिह्न भी यथावसर आया करते हैं :—

इसी तरह इस दुनियां की जुदी २ ऋतुओं का जुदा असर तो होता ही, और जुदे २ आदमियों का जुदा २ स्वभाव तो रहेगा ही; ये सब हमारे लिये अभी के अभी बदलने के नहीं।

अभ्यास

नीचे लिखे वाक्यों में जहाँ जहाँ कौमा आना आवश्यक है, लगाओ:—

"सुदामा जी के पैर विवाइयों से फट रहे हैं उनके पैरों में दो चार दस-बीस काँटे नहीं बल्कि काँटों के जाल-के-जाल गड़े हुए हैं।"

"जहाँ शब्दों का सीधासादा अर्थ न लगाकर प्रयोजन की रूढ़ि के कारण कोई निकट-सम्बंधी अर्थ लगाते हैं वहाँ लक्षणा होती है।"

"प्रत्यय चार प्रकार के होते हैं विभक्ति पृत्यय, तद्धित पृत्यय, क्रिया-प्रत्यय और कृत पृत्यय।"

नीचे लिखे हुए अंश में जहां २ अल्प-विराम, अर्द्ध-विराम, पूर्ण-विराम आदि चिह्नों की जरूरत हो, लगाओः—

तत्सम वा संस्कृत शब्द ( ) संस्कृत की पृथमा विभक्ति के एक वचन के ही रूप होते हैं ( ) जैसे ( ) राजा ( ) माता ( ) तद्भव शब्द संस्कृत शब्दों से उत्पन्न होते हैं ( ) जैसे ( ) मेह ( ) भगत ( ) देशी-शब्द प्रदेश विशेष के हैं ( ) जैसे ( ) डोंगी ( ) डाभ ( ) विदेशी-शब्द अन्य भाषाओं के हैं ( ) जैसे ( ) खरगोश ( ) शेर ( ) ट्रेन ( ) गिरजा।

प्रश्न बोधक चिह्नः—

जहाँ पर किसी से कोई प्रश्न किया जाता है वहाँ यह(?)चिह्न प्रश्न सूचक वाक्य के पीछे लगाते हैं:—तुम क्या कर रहे हो ?

विस्मय-सूचक चिह्न:—

हर्ष, आश्चर्य, भय आदि मनोविकारों के प्रकाशित करते समय पद या वाक्य के अन्त में यह (!) चिह्न लगाते हैं; जैसे:-धन्य धन्य ! वाह वाह ! मूर्ख तुम क्या करते हो !

उद्धरण-चिह्न:—

दूसरे के वाक्य को उद्धरण करते समय यह " " चिह्न लगाते हैं, इसे उद्धरण-चिह्न कहते हैं:—

कहावत है—"साँच न लागे आँच।"

आप लिखते हैं—"मैं फिकर न किया करूं"।

आदेशकः—

किसी विषय के समझाने के लिये उदाहरण देते हैं वा व्याख्या करते हैं तो यह (:—) चिन्ह काम में लाते हैं। इसे कोलनडैस कहते हैं। कहीं २ खाली डैस (—) ही काम में लाते हैं:—

तुलसी के दो भेद हैं:—रामा और श्यामा।

वाक्य तीन तरह के होते हैं:—सरल, यौगिक और जटिल।

सम्बोधन—

किसी को चिताकर या बुलाकर जब कोई बात कही जाती है तो साधारणतः कौमा लगाते हैं। जब चिताना और बुलाना विशेष मनोविकार के साथ हो तो विस्मय का चिह्न लगाते हैं:—

मोहन, तुम स्कूल क्यों न गये? हे हरि, गंगा-स्नान के लिये कब जाओगे? अरे मूर्ख! सावधान। दुष्ट! तुझे अपने कुकर्मों का शीघ्र ही फल मिलेगा।

दो वा दो से अधिक पदों के योग से जब एक पद बनता है तो बीच में (-) लगाते हैं इसे विभाजन-चिह्न कहते हैं; जैसे:—

"**रघुवंश-मणि** भगवान रामचन्द्र जब **सुर-सरि** के पवित्र तट पर पहुंचे तो अनेक **ऋषि-मुनि** इस **आनन्द-समाचार** को पाकर वहाँ उपस्थित हुए।",

"अनुकूल-सुन्दर-जतन भय नित-विरह-दुख अपनोद* में।
बहु धीर-नासन-जनित अदभुत वीर-भाव विनोद में॥
"उत्तर-राम-चरित-नाटक"

---

* मिटाने में

अभ्यास

नीचे लिखे वाक्यों में 'पृश्न', 'उद्धरण', 'आदेशक', 'विस्मय' और 'विभाजन'-चिह्न यथा स्थानों पर लगाओ।

"जैसा प्रसाद ( ) गुण कालिदास के काव्य में भरा पड़ा है वैसी ही ओज ( ) गुण ( ) पूर्ण ध्वन्यात्मक नई नई उक्ति ( ) युक्ति भवभूति की कविता में अधिकतर उत्तर ( ) रामचरित में हैं।"

"हे पतित पावनी ( ) माता सुरधनी ( ) भागीरथ किस पुण्य-बल से तुमको ( ) स्वर्ग की मंदाकिनी को ( ) मर्त्यलोक में खींच लाये थे ( ) इस मरु ( ) हृदय में उसी भक्ति का उच्छ्वास ( ) हे मा ( ) एक बार उत्पन्न कर दो।"

भगवति वसुन्धरे ( ) दो टूक हो जाओ ( ) ब्राह्मण ( ) जड़ तुल्य खड़ा हुआ और क्या देख रहा है ( ) संसार तेरी हँसी करता है ( ) ऐश्वर्य्य वालों के द्वारों पर भिक्षा माँगते हुए तुझे लज्जा नहीं आती ( ) यदि शक्ति हो तो उठ ( ) कपिल के तेज की अग्नि वर्षा करके नीच का घमंड-चूर कर दे ( ) और यदि यह नहीं हो सकता तो क्षुद्र ( ) ओ घृणित ( ) अरे पद दलित ( ) अरे महत्त्व के कंकाल ( ) अब उजेले में मुँह न दिखलाना ( ) रसातल को चला जा।

वाक्यों के आकार भेद।

१. विधि वाचक—जिस से किसी बात का विधान पाया जाय जैसे:—'आगरा एक शहर है'। 'पत्थर एक धातु है'। वह शान्त पुरुष है।

२. निषेध वाचक—जिसमें किसी विषय का अभाव प्रगट हो; जैसे यदि तुलसीदास जी रामायण न लिखते

---

* मिटाने में।

तो आजकल धर्म नाम को भी नहीं रहता। 'धर्म बिना सखा कोई नहीं'।

३. आज्ञार्थक—जिसमें आज्ञा, निवेदन, उपदेश अनुमति आदि हो; जैसे:—'गुरु की आज्ञा मानना शिष्य का परम कर्त्तव्य है'। प्रातः सायं घूमना चाहिये। मेरा निवेदन है कि इसको आप दंड दें।

४. प्रश्नार्थक—जिसमें किसी प्रकार का प्रश्न किया गया हो; जैसे:–ऐसा आपने क्यों किया ? क्या आप इसको लिख सकते हैं ? मैं इस अवस्था में क्या करूँ ?

५. विस्मयादिबोधक—जिसमें आश्चर्य, कौतुक आदि भाव सूचित हों; जैसे–'मोटर कितनी बढ़िया है !' 'अहा मोर कैसा नाचता है !'

६. इच्छाबोधक—जिसमें इच्छा व आशीर्वाद का बोध हो; जैसे–ईश्वर इस दुखीभारत को भी सुने। भगवान् आपको चिरस्थायी बनावें।

७. सन्देहसूचक—जिसमें सन्देह पाया जाय; जैसे–कदाचित् आज पिता जी मथुरा से आ जावें। दीवार न गिर जाय।

८. संकेतार्थक—जिसमें संकेत या शर्त पाई जाय; जैसे:–यदि आज मेरे पास विद्या होती तो मैं इस प्रकार भटकता न फिरता। यदि पानी वर्षा तो धान पैदा होंगे।

परिश्रम से सुख मिलता है। (विधि वाचक)
क्या परिश्रम से सुख मिलता है ? (प्रश्न वाचक)
मुमकिन है परिश्रम से भी सुख नहीं मिले। (संदेह वाचक)
(क्या कहा–) परिश्रम से सुख नहीं मिले ! (विस्मय बोधक)

मैं परिश्रम करूँगा सुख मिलेगा। (इच्छा बोधक)
जो परिश्रम नहीं करता उसे सुख नहीं मिलता (निषेध वाचक)
परिश्रम करो सुख मिलेगा। (आज्ञा बोधक)
यदि परिश्रम करोगे तो सुख मिलेगा। (संकेत वाचक)

अभ्यास

नीचे के वाक्यों को यथा शक्ति अनेक प्रकार के वाक्यों में बदलो।

१. ज्ञान से बुद्धि निर्म्मल होती है।

२. सभ्यता से अपना समय मेल-जोल और आनन्द में व्यतीत होता है।



तृतीय अध्याय ।

वाक्य-रचना का अभ्यास ।

(१)

वाक्यों का विस्तार और संकोचन ।

कर्त्ता कर्म और क्रिया-पदों से बने हुए छोटे २ वाक्यों को, सम्बोधन विशेषण, निर्द्धारण (निश्चय) हेतु, सम्बन्ध, अधिकरण, अपादान, करण, असमापिका क्रिया, आदि द्वारा बढ़ा सकते हैं ।

कर्त्ता कर्म क्रिया—राम ने लङ्का को विजय किया ।

करण—राम ने 'वीरता से' लङ्का को विजय किया ।

सम्प्रदान—राम ने 'सीता के लिये' वीरता से लङ्का को विजय किया

पूर्वकालिक क्रिया—राम ने सीता के लिये वीरता से 'चढ़ाई करके' लङ्का को विजय किया ।

अपादान—राम ने सीता के लिये वीरता से चढ़ाई करके 'समुद्र से पार' लङ्का को विजय किया ।

अधिकरण—राम ने सीता के लिये वीरता से चढ़ाई करके समुद्र से पार लङ्का को 'युद्ध में' विजय किया ।

सम्बन्ध—राम ने सीताके लिये वीरता से चढ़ाई करके 'दैत्यों की' लङ्का को युद्ध में विजय किया ।

सम्बोधन-'हे पार्वती', राम ने सीता के लिये वीरता से चढ़ाई करके समुद्र से पार लङ्का को युद्ध में विजय किया ।

कर्त्ता विशेषण—'सूर्य्यवंशावतंश' 'भगवान्' राम ने........।
कर्म विशेषण—'सुदृढ़' लङ्का को........।
करण विशेषण—'अपूर्व' वीरता से........।
सम्प्रदान विशेषण—'सती-साध्वी' सीता के लिये........।
अपादान विशेषण—'अगम्य' समुद्र से पार।
अधिकरण विशेषण—'भीषण' युद्ध में........।
सम्बन्ध विशेषण—'दुर्जेय' दैत्यों की लङ्का........।
क्रिया विशेषण—'दृढ़ता-पूर्वक' विजय किया........।

अन्त में वाक्य हुआ।

हे पार्व्वती,

सूर्य्यवंशावतंश भगवान् राम "ने" सती-साध्वी सीता के लिये अपूर्व-वीरता से चढ़ाई करके अगम्य-समुद्र से पार दुर्जेय-दैत्यों की सुदृढ़-लङ्का को भीषण-युद्ध में दृढ़ता-पूर्वक विजय किया।

अर्थ की अपेक्षा रखते हुए वाक्य में आये हुए पद और वाक्यांश को बढ़ाकर वाक्य-विस्तार करते हैं।

ज्ञानी मनुष्य ही सच्चा सुखी है।

जिसने ज्ञान प्राप्त किया है वही मनुष्य सच्चा सुखी है।

नीति धर्म-पालक मनुष्य ही चारों फल प्राप्त करता है।

जिसने नीति और धर्म का पालन किया है वही मनुष्य, धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष नामक चारों फल प्राप्त करता है।

वाक्य के उद्देश्य तथा विधेय अंशों को विशेषण और गुण-वाचक पदों के योग से बढ़ा सकते हैं:—

महाराणा प्रताप ने प्रण पालन किया।

'परम-प्रतापान्वित भारत-केशरी मेवाड़ाधिपति' महाराणा प्रताप ने 'पवित्र वीरोचित' प्रण का 'सम्यक् प्रकार से' पालन किया।

संकोचन।

किसी विस्तीर्ण वाक्य के अर्थ की रक्षा करते हुए उसके भीतर दो एक समापिका क्रियाओं को असमापिका बनाकर और विशेष्य-अर्थ-बोधक वाक्यांश को विशेष्य-अर्थ-बोधक पद, तथा विशेषण-अर्थ-बोधक वाक्यांश को विशेषण-पद बनाकर वाक्य का आकार संकुचित किया जाता है; जैसे:—

१—जिसने ज्ञान और भक्ति को प्राप्त किया है, जिसने कर्त्तव्य-कर्म का चिन्तन किया है, जिसने संयम सहित विराग धारण किया है; वही जीवन सफल कर सकता है।

कर्त्तव्य-कर्म का चिन्तक, ज्ञानी और भक्त विरक्त ही जीवन सफल कर सकता है।

२—दर्शन को समझने वाले, विज्ञान को जानने वाले, सच्चे विष्णु के उपासक, ऐसा नहीं हो सकता कि किये हुये को न मानें।

दार्शनिक, विज्ञानी और सच्चे वैष्णव कृतघ्न नहीं हो सकते।

३-जिन्हें नीति का ज्ञान है, जिनके हृदय में साहस है, अयोध्या के राज्य पर जिनका अधिकार है, जानुतक जिनकी लम्बी वाहु हैं; ऐसे राम इन्द्र के जीतने वाले दैत्य पर क्यों न विजय प्राप्त करें।

नीतज्ञ 'साहसी' और आजानुवाहु अयोध्याधिपति राम, दैत्य इन्द्रजीत पर क्यों न विजय प्राप्त करें।

४—मैंने स्वामी जी को देखा और आनन्द में डूब गया। कहने लगा कि, धन्य है वह माता, जिसने ऐसा पुत्र पैदा किया।

मैं स्वामी जी को देखते ही आनन्द में मग्न हो कर कहने लगा "स्वामी के सदृश पुत्र पैदा करने वाली माता को धन्य है"।

५—मैं बाज़ार गया, इधर उधर घूमा और धोती लाया।

इधर उधर घूम कर बाज़ार से धोती लाया।

६—जहाँ वाक्य वा वाक्य-समूह में उद्देश्य अनेक प्रकार के हों और विधेय एक प्रकार का हो, तो उद्देश्यों को संयोजक-अव्यय द्वारा मिला देते हैं और क्रिया का एक ही बार उल्लेख करते हैं; जैसे:—

"पं० श्रीकृष्णदत्त जी का व्याख्यान होगा, चतुर्वेदी विश्वेश्वर दयालु बोलेंगे और स्वामी डालचन्द की वक्तृता होगी" जिस के बदले में—'पं० श्रीकृष्णदत्त, चतुर्वेदी विश्वेश्वर दयालु और स्वामी डालचन्द के व्याख्यान होंगे,,—कर सकते हैं।

कभी २ अर्थ की ओर दृष्टि रखकर वाक्य का संकोचन किया जाता है; जैसे:—"जिस प्रकार पं० रामप्रसाद सरल स्वभाव हैं उसी प्रकार ठा० लालसिंह भी सरल स्वभाव हैं। इसका संकोच इस प्रकार होगा।

पं० रामप्रसाद की भाँति ही ठा० लालसिंह भी सरल स्वभाव हैं।

अलंकृत-वाक्यों में से अलंकार निकाल कर साधारण वाक्य-रचना में उसका संकोचन हो जाता है।

वाक्यरचना का अभ्यास।

(२)

वाक्य-परिवर्त्तन।

वाक्य-रचना के अभ्यास के लिये एक प्रकारके वाक्य को दूसरे प्रकार के वाक्य में बदल लेना चाहिये।

सरल-वाक्य से जटिल-वाक्य बनाना।

विधेय-पूरक और विशेषण-बोधक वाक्यांश को वाक्य बना कर अथवा विधेय बढ़ाने वाले पद को वाक्य बना कर अथवा उद्देश्य-वर्द्धक विशेषण-पद को वाक्य बना कर 'जो, वह' 'यदि, तो', आदि नित्य-सम्बंधी अव्ययों द्वारा जोड़ देते हैं कहीं नित्य-सम्बंधी पद लुप्त रहते हैं।

६

सरल-वाक्य—भारतवासियों के सम्राट् आज हमारे बीच में नहीं हैं।

जटिल—'जो' भारत सम्राट् थे, 'वह' आज हमारे बीच में नहीं हैं।

सरल—उसके दुराचारों को तुमने कैसे जान लिया।

जटिल—उसके जो दुराचार थे, उन्हें तुमने कैसे जान लिया।

सरल—सज्जन मनुष्य कटु वचन नहीं कहते।

जटिल—'जो' सज्जन मनुष्य हैं, वे कटु वचन नहीं कहते।

सरल—उसकी नीति को मैं जानता हूँ।

जटिल—उसकी 'जो' नीति है, 'उसे' मैं जानता हूँ।

जटिल-वाक्य को सरल-वाक्य करना

किसी जटिल-वाक्य के अन्तर्गत सहायक-वाक्य को पद वा वाक्यांश के रूप में लाकर सम्बन्ध-बोधक दोनों पदों को हटा देना चाहिये, सरल-वाक्य बन जायगा, इसमें अर्थ और काल का विशेष ध्यान रखना चाहिये।

जटिल-वाक्य—जब तक मैं अपना कार्य्य साधन न कर लूंगा तब तक विवाह न करूंगा।

सरल वाक्य—अपना कार्य्य साधन न करने तक विवाह न करूंगा।

जटिल—तुमने मुझसे 'जिस प्रकार' कहा था, उसी के अनुसार कार्य्य कर रहा हूँ।

सरल—तुम्हारे कथनानुसार कार्य्य कर रहा हूँ।

जटिल—तुमने 'ऐसी' बात कही 'जो' सर्वथा असम्भव है।

सरल—तुमने सर्वथा असंभव बात कही।

इन दोनों प्रकार के परिवर्त्तनों में वाक्य-संकोचन के नियमों का विशेष ध्यान रखना चाहिये।

सरल-वाक्यों को यौगिक-वाक्य बनाना

सरल-वाक्य के किसी वाक्यांश को स्वतन्त्र-वाक्य बना कर 'एवं' 'अथवा' 'किन्तु','इसलिये' आदि अव्ययों के प्रयोग से यौगिक-वाक्य बना लेना चाहिये। कहीं कहीं पूर्वकालिक-क्रिया को समापिका क्रिया कर लेने से यौगिक-वाक्य बन जाता है।

सरल—स्नानादि से निवृत्त होकर, गीता-रहस्य का अध्ययन किया।

यौगिक—स्नानादि से निवृत्त हुआ और गीता रहस्य का अध्ययन किया।

सरल वाक्य के "स्नानादि से निवृत्त होकर" इस वाक्यांश को यौगिक-वाक्य का "स्नानादि से निवृत्त हुआ" यह स्वतन्त्र वाक्य बना लिया।

सरल—पढ़ने में शिथिलता करने से दुःख होता है।

यौगिक—पढ़ने में शिथिलता मत करो, इससे दुःख होता है।

सरल—दुर्व्वलता वश उपस्थित नहीं हो सका।

यौगिक—वह दुर्वल था इसलिये उपस्थित नहीं हो सका।

यौगिक-वाक्य को सरल-वाक्य में बदलना

यौगिक-वाक्य के एक स्वतन्त्र-वाक्य को वाक्यांश में बदल कर कहीं २ समापिका-क्रिया को पूर्वकालिक-क्रिया करने से यौगिक-वाक्य से सरल-वाक्य हो जाता है। यौगिक-वाक्यों के अव्यय-पद सरल-वाक्य हो जाने पर लुप्त हो जाते हैं।

यौगिक-वाक्य—हरि आया और चला गया।

सरल-वाक्य—हरि आकर चला गया।

यौगिक-वाक्य—आम पका लिये और खा लिये।

सरल-वाक्य—आम पका कर खा लिये।

यौगिक—अपने दोष को मुक्त-कंठ से स्वीकार करो नहीं तो निस्तार नहीं होता।

सरल—अपने दोष को मुक्तकंठ से स्वीकार किये बिना निस्तार नहीं होगा।

यौगिक—भगवान् रामचन्द्र जी को लोकापवाद का भय था इसलिये उन्होंने सतीसाध्वी सीता का परित्याग कर दिया।

सरल—भगवान् राम ने लोकापवाद के भय से सती-साध्वी सीता का परित्याग कर दिया।

जटिल-वाक्य से यौगिक-वाक्य

जटिल-वाक्य के अप्रधान-वाक्य को स्वतन्त्र-वाक्य बनाना पड़ता है और उसके नित्य-सम्बन्धी दोनों पदों को छोड़कर, नहीं 'तो', 'किन्तु', 'अथवा', और आदि संयोजक वा विभाजक अव्यय पद लाने पड़ते है।

जटिल-वाक्य—उसने जो कहा था, वह नहीं किया।

यौगिक-वाक्य—उसने कह तो दिया परन्तु किया नहीं।

जटिल-वाक्य—यद्यपि वह विद्वान् है, तथापि समझता नहीं।

यौगिक-वाक्य—वह विद्वान है परन्तु समझदार नहीं।

यौगिक-वाक्य से जटिल-वाक्य

यौगिक-वाक्य के दो स्वतन्त्र-वाक्यों में से पहिले वाक्य के प्रारम्भ में 'यदि' आदि अव्यय और संयोजककादि अव्यय के स्थान में नित्य-सम्बन्धी-पदों के प्रयोग करने से जटिल-वाक्य बन जाता है।

यौगिक-वाक्य—निष्काम-कर्म करो, तुम्हारा मन पवित्रता से भर जायगा।

जटिल-वाक्य:—यदि निष्काम-कर्म करोगे तो तुम्हारा मन पवित्रता से भर जायगा।

यौगिक-वाक्य—वह विद्वान नहीं है परन्तु बुद्धिमान है।

जटिल-वाक्य—यद्यपि वह विद्वान नहीं है, तथापि बुद्धिमान है।

अभ्यास

नीचे लिखे वाक्यों में बतलाओ किस प्रकार के वाक्य हैं और क्यों? अर्थ की रक्षा करते हुए यथासंभव उन्हें दूसरे प्रकार के वाक्यों में परिवर्त्तित करो:—

१—"आपको यह समझ लेना चाहिये कि आपके ऊपर केवल आपके और आपके परिवार के कामों का ही भार नहीं है, परन्तु उस जननी-जन्म-भूमि के प्रति भी आपके बहुत से कर्त्तव्य हैं।"

२—"आपके पढ़-लिख जाने पर मातृभूमि आपसे बहुत कुछ आशा करती है।"

३—"वह दिन भी निकट हैं जब आप उच्च-शिक्षा पाकर नागरिकों का भार और जवाब देही अपने ऊपर लेंगे।"

४—"कर्त्तव्य-कर्म का पालन करना ही मनुष्य का धर्म है।"

५—"आज कल प्रायः सब नवयुवकों में जो बुरी आदतें पाई जाती हैं उनसे शरीर के सम्पूर्ण अवयवों का बल ही नष्ट नहीं होता बल्कि उनसे मानसिक-बल का भी ह्रास होता है।"

६—"मित्र और साथी अच्छे होने चाहिये" यदि अच्छे साथी न मिलें तो बुरों का साथ न करना चाहिये। युवक को शुद्ध वाणी बोलना चाहिये। यदि उसके सामने कोई दूषित-बात कहे तो उससे घृणा करनी चाहिये।"

वाक्य रचना का अभ्यास ।

(३)

वाच्य और वाच्यान्तर

वाक्य के तीन भेद हैं, कर्त्तृ, कर्म और भाव

जिस वाक्य में कर्त्ता, अपनी अवस्था (प्रथमा) में हो और कर्म अपनी अवस्था (द्वितीया) में क्रिया-पद स्वतंत्र न हो उसे कर्त्तृ वाच्य कहते हैं; जैसे:—

बालक रामायण पढ़ता है, लड़का गीत गाता है ।

जिस वाक्य में कर्त्ता करण की अवस्था (तृतीया) में. कर्म (करता की अवस्था) प्रथमा में प्रयुक्त हो और क्रिया कर्म के अनुसार हो, उसे कर्म-वाच्य कहते हैं; जैसे:—लड़के से गीत गाया जाता है 'कपड़ा सींया जाता है ।'

जिस वाक्य में कर्म नहीं होता कर्त्ता तृतीया में होता है, क्रिया स्वयं प्रधान होती है, इसे भाव-वाच्य कहते हैं; जैसे श्याम से पढ़ा नहीं जाता ।

कर्म-कर्त्तृवाच्य—जिस वाच्य में कर्म-पद ही कर्त्ता की भाँति हो अर्थात् बिना कर्त्ता के स्वयम् सिद्ध हो उसको कर्म-कर्त्तृ-वाच्य कहेंगे; जैसे:—

'दीवार बन रही हैं ।' घड़ी ठीक हो रही हैं ।

सकर्मक-क्रिया के प्रयोग में कर्त्तृवाच्य से कर्मवाच्य और कर्मवाच्य से कर्त्तृवाच्य और अकर्मक क्रिया में कर्त्तृवाच्य से भाववाच्य और भाववाच्य से कर्त्तृवाच्य में परिवर्तन करने का नाम **वाच्य परिवर्तन है ।**

कर्त्तृवाच्य में कर्म होता भी है और नहीं भी । कर्मवाच्य में कर्म अवश्य होता है किन्तु, भाववाच्य में कर्म नहीं होता ।

उदाहरण

कर्त्तृ०—मोहन ने मेरी क़लम चुराली।
कर्म०—मोहन से मेरी क़लम चुराई गई।
कर्त्तृ०—पं० अयोध्यानाथ ने कांग्रेस स्थापित की।
कर्म०—पं० अयोध्यानाथ द्वारा कांग्रेस स्थापित की गई।
कर्त्तृ०—महात्मा ऐण्ड्रूज़ ने अकाल-पीड़ितों की सहायता की।
कर्म०—महात्मा ऐण्ड्रूज़ द्वारा अकाल-पीड़ितों को सहायता की गई।
कर्त्तृवाच्य—पं० गोविन्दसहाय ने फ़िजी की रिपोर्ट लिखी।
कर्मवाच्य—पं० गोविन्दसहाय द्वारा फ़िजी की रिपोर्ट लिखी गई।
कर्त्तृवाच्य—चौकीदार ने चोर पकड़ लिया।
कर्मवाच्य—चौकीदार से चोर पकड़ा गया।

कर्मवाच्य से कर्त्तृवाच्य

कर्मवाच्य—साधू से कैसा गाया जाता है।
कर्त्तृवाच्य—साधू कैसा गाना गाता है।
कर्मवाच्य—भगवान कृष्ण द्वारा उपदेश दिया गया।
कर्त्तृवाच्य—भगवान कृष्ण ने उपदेश दिया।
कर्मवाच्य—वेदव्यास द्वारा महाभारत रचा गया।
कर्त्तृवाच्य—वेदव्यास ने महाभारत रचा।
कर्मवाच्य—मुझ से पुस्तक पढ़ी जाती है।
कर्त्तृवाच्य—मैं पुस्तक पढ़ता हूँ।

कर्त्तृवाच्य से भाववाचक

कर्त्तृ०—मैं नहीं उठता हूँ।
भाव०—मुझ से नहीं उठा जाता।
क०र्त्तृ—मैं रात भर नहीं सो सकता।
भाव०—मुझ से रात भर नहीं सोया जाता।

कर्त्तृ०--रात भर कोई नहीं जागा।
भाव०--रात भर किसी से नहीं जागा गया।

भाववाच्य से कर्त्तृवाच्य

भाववाच्य--गाय से चला नहीं जाता।
कर्त्तृवाच्य--गाय नहीं चलती।
भाववाच्य--तुमसे खाया जायगा।
कर्त्तृवाच्य--तुम खाओगे।
भाववाच्य--राम से सोया नहीं जाता।
कर्त्तृवाच्य--राम नहीं सोते।

अभ्यास

नीचे लिखे वाक्यों में उनका भेद बताकर वाच्य-परिवर्त्तन करो--
बढ़ई ने किवाड़ बनाये हैं। राम ने व्रत लिया है। दर्जी से कपड़ा काटा गया। घोड़े से चला नहीं जाता। मैं रात को नहीं पढ़ूँगा। वह कल नहीं आ सकता। तुम हिन्दी में कई विज्ञान के ग्रन्थ लिखोगे। तुम सच नहीं बोले।

वाक्य रचना का अभ्यास।

(४)

अलंकृत वाक्य-रचना।

अच्छी रचना के लिए वर्णनीय विषय का परिमार्जित-ज्ञान, कल्पना-शक्ति की सजीवता और भाषा पर पूर्ण अधिकार होने की परम आवश्यकता है। जिस भाषा में अलंकारों का प्रयोग किया जाता है उसे अलंकृत-रचना कहते हैं। हिन्दी में अलंकारों के दो विभाग किए हैं--शब्दालंकार और अर्थालंकार। जब रचना में शब्द-संबंधी-चमत्कार होता है तो उसे **शब्दालंकार** कहते हैं। "उस सहज सौंदर्य को देख कर मन-मयूर-मत्त हो कर नृत्य करने लगा" इस वाक्य में स और म के प्रयोगों में शब्द-चमत्कार है।

शव्दालंकारों के कई भेद हैं:—

एक से अक्षरों की आवृत्ति में **अनुप्रास** होता है;जैसे:—मन-मयूर-मत्त में 'म' की, चतुर चितेरे में 'च' और 'त'की, बोध और सोध में 'ध'की समता है। और एक ही अर्थ में पद व पद-समूहों की समता में **लाटानुप्रास** होता है, जैसे:–'करि करुणा करुणा-यतन' में करुणा की आवृत्ति एक ही अर्थ में है। जब पद खगड, पद या पद-समूह की आवृत्ति भिन्न २ अर्थों में होती है, वहां **यमक** अलंकार होता है। जैसे–'असरन सरन चरन गनपति के'में **रन** की आवृत्ति भिन्न २ अर्थों में है। जब एक ही शव्द दो या दो से अधिक अर्थों में आता है तो **श्लेष** होता है। जैसे–'मत-वाले आपस में लड़ते हैं।' यहाँ 'मतवाले' के दो अर्थ हैं–उन्मत्त और मत के (मज़हवी) लोग।

जहाँ अर्थ-संबंधी-चमत्कार होता है, वहाँ **अर्थालंकार** होता है।

अर्थालंकार १०० से ऊपर हैं। हर एक के अनेक सूक्ष्म भेद हैं। उपमा (तुलना) सब में मुख्य है।

उपमायें–किसी के सौन्दर्यादि का परिचय देने के लिए किसी ऐसी वस्तु से तुलना करनी पड़ती है जिसके सौन्दर्यादि गुण की लोक में प्रसिद्धि हो। जिस वस्तु को समता दी जाती है वह उपमेय और जिस वस्तु से समता दी जाती है उसे उपमान कहते हैं। वह गुण जिससे दोनों में समता हो जाती है समान धर्म कहलाता है।

उपमा—उपमान और उपमेय का एक ही धर्म कथन किया जाता है; जैसे:— मुख चन्द्रमा के समान उज्जवल है।

रूपक—समान-धर्मी उपमेय उपमानों का अभेद कहा जाता है; जैसे-मुख चन्द्र है।

उत्प्रेक्षा—उपमेय में उपमान की संभावना की जाती है; जैसे-मुख मानों चन्द्र है।

प्रतीप—उपमान की उपमेय से समता की जाती है; जैसे-मुख सा चन्द्र है।

अपह्नुति—उपमेय का निषेध करके उपमान का आरोप किया जाता है; जैसे-मुख नहीं चन्द्र है।

परिमाण—उपमेय उपमान मिल कर काम करते हैं; जैसे-मुख चन्द्र आनन्द देता है।

स्मरण—उपमान को देख कर उपमेय याद आता है; जैसे-चन्द्रमा को देख कर मुख याद आता है।

सन्देह—उपमेय उपमान में सन्देह रहता है; जैसे-मुख है या चन्द्र आदि।

इन्हीं भिन्न २ अलंकारों को गद्य और पद्य के वाक्यों में प्रयोग करते हैं तो उस रचना को अलंकृत कहते हैं।

अभ्यास के लिए साधारण वाक्यों को अलंकृत करना चाहिए और अलंकृत वाक्यों को साधारण भाषा में लिखना चाहिये।

साधारण वाक्य	अलंकृत वाक्य
(अ) सवार आता है,	विद्युत-समान चञ्चल घोड़े पर चकाचोंध सा करता हुआ सवार आता है (उपमा अलंकार)

(ब) राम शरासन की ओर चले	दिनकर-कुल-कमल-दिवाकर राम शिव-शरासन की ओर मत्त-गज-गति से चले (रूपकअलंकार)
(स) संध्या हो गई	सूर्य भगवान् ने अस्ताचल की शिखरों पर आरोहन किया। भगवान् पद्मिनी-नायक ने दिन भर के परिश्रम से व्याकुल हो विश्राम के लिये अस्ताचल पर्वत का आश्रय लिया।
रामचन्द्र ने शिव धनुष चढ़ा कर सीताजी को मोहित कर लिया।	सूर्यवंशावतंश रामचन्द्र ने अनायास ही शिव-धनु पर, ज्या रोपण कर वैदेही के हृदय को सहसा आकर्षित कर लिया।
यह पक्षी उनको देने आई हूँ।	यह पक्षि-रत्न उनके चरण कमल में अर्पण करने आई हूँ।
सूर्योदय से आकाश में लाली छा गई और अंधेरा दूर होगया।	सूर्य के उदय से गगन-मण्डल रक्त-वर्ण हो रहा था और आकाश स्थित अन्धकार रूपी धूल, सूर्य की किरण-रूप झाडू से परिष्कृत हो गई। (रूपक अलंकार)
उनका रूप बड़ा भयंकर था।	उनको देख कर साक्षात् भूत-मध्यस्थ-भैरव अथवा दूत-संयुक्त-कालान्तक स्मरण होता था। (स्मरण)

वाक्य-रचना का अभ्यास ।

(५)

वाक्यों के रूपान्तर

सरल वाक्यों को विशेषणों, अलंकारों तथा दूसरी भाँति के विविध कौशलों द्वारा रूपान्तरित कर सकते हैं:—

सबेरा हो गया ।

प्रभात हो गया। सूर्योदय होगया। रात्रिका अवसान हो गया। रात बीत गई। भगवान् कमलिनी-वल्लभ उदयाचल पर अपनी प्रभा दिखाने लगे। भगवान् सूर्य्य ने संसार का अंधकार दूर कर दिया। भगवान् भास्कर भासमान हुए। उषा की किरणें प्रस्फुटित हुईं। अरुणोदय हुआ। भगवान् अंशुमाली ने रश्मि-राशि फैला दी।

सुख हुआ ।

हृदय में आनन्द भर गया। हृदय की कली खिल गईं। हृदय-कलिका प्रस्फुटित हुई। आनन्द-तरंगों में गोते लगाने लगा। आनन्द-समुद्र उमड़ पड़ा। सुख-समुद्र में उत्ताल-तरंगे उठने लगीं। आनन्द का पारावार नहीं रहा। सुख की सीमा न रही।

चन्द्रमा उदय हुआ ।

चन्द्रोदय हुआ। चन्द्रमा ने अपनी किरण फैला दीं। सुखद चन्द्रिका छिटक गई। चाँदनी फैल गई। चन्द्र दर्शन हुए। कुमुदिनी वल्लभ की आभा प्रस्फुटित हुई। मन-कुरंग को फँसाने के लिये-शशि-किरण-जाल विस्तृत हुआ।

ज्ञान होगया।

ज्ञानोदय हुआ। अज्ञान दूर हो गया। माया का परदा हट गया। मोहतम टल गया। अज्ञानांधकार मिट गया। हृदय में प्रकाश हो गया। ज्ञान-रूपी-सूर्य्य की किरणों से अज्ञानांधकार विलीन हो गया।

पतित हो गया।

पथभ्रष्ट हो गया। उद्देश्य से गिर गया। लक्ष चूक गया। स्थिर न रह सका। अपने को सम्हाल न सका।

दिन काटता हूँ।

कालक्षेप करता हूँ। दिन व्यतीत करता हूँ। समय को धक्का देता हूँ। दिन काटता हूँ। दिन निकालता हूँ।

दुखी हुए।

शोकान्वित हुए। शोक-सागर उमड़ पड़ा। शोकभिभूत हुए। शोक में मग्न हो गये। शोक में अधीर हो गये। शोकातुर हो गये। शोकाकुल हुए। शोक से हृदय अधीर हो गया। दुख का वारापार न रहा।

मर गया।

"परलोक-वास हो गया" "कैलास-वास हो गया" "स्वर्ग सिधारे" "पञ्चत्त्व प्राप्त किया" "असार संसार को छोड़ दिया" "यहां से चल बसे" "हम से चिर विदा ली" "भव-बंधन से छूट गये" "संसार परित्याग किया" "उनके प्राण पखेरू उड़ गये" "जीवन-प्रदीप निर्वाण हुआ" "काल कवल हुए" "मानव-लीला संवरण की" "अमर लोक सिधारे" आदि।

किसी से कहना है '**चले जाओ**' 'लम्बे पड़ो' 'पीठ दिखाओ' 'हवा खाओ' 'काम देखो' रस्ता पकड़ो, रास्ता लो आदि।

'जमना' क्रिया-पद का व्यवहार साधारणतः द्रव वस्तु के ठोस रूप होने के अर्थ में आता है; जैसे:—पानी जम गया। परन्तु जब अन्य स्थान पर लाते हैं तो विशेष चमत्कार हो जाता है; "दूकान जम गई। हाथ जमा दूंगा। कैसा रंग जमा है। रौब नहीं जमा। मामला जमता नहीं नज़र आता। जड़ जमती जाती है। बड़ी भीड़ जमी। जूआ डट के जमा हुआ है"।

यह पक्षी उनको देने आई हूं।

यह पक्षी उनकी भेंट के लिये लाई हूं, यह पक्षि-रत्न उनकी भेंट के लिये लाई हूँ। यह पक्षी उनके कर-कमलों में समर्पण करने के लिये लाई हूं। यह पक्षि-रत्न उनके चरण-कमल में अर्पण करने के लिये लाई हूं।

वाक्य रचना का अभ्यास।

(६)

वाक्य का कोई पद अथवा अंश दिया हुआ हो तो वाक्य पूरा करना

'स्वास्थ्य है'—उसका अच्छा स्वास्थ्य है।

'परोपकार से'—मनुष्य की परोपकार से बड़ी कीर्ति फैलती है।

'धन्य है'—तुम्हारी करनी को धन्य है।

'पुल पर से'—मैंने पुल पर से नगर को देखा।

गीति काव्य—मिश्र जी की गीति-काव्य अच्छी रचना है।

'मानव-जीवन'—मानव-जीवन पवित्र होना चाहिये।

'भगवद्भक्ति'—भगवद्भक्ति ही मनुष्य जीवन का सार है।

ज्ञान और भक्ति—ज्ञान और भक्ति दोनों कल्याणकारी हैं।

'राम और कृष्ण'—राम कृष्ण के उपापकों की यह दशा है।

सत-संगति—सत्संगति से बढ़ कर कौन सा लाभ है!

धन और धर्म—अभिमान से धन और धर्म दोनों नष्ट होते हैं।

आहार-विहार—उचित आहार-विहार ही स्वास्थ्य लाभ के मूल हैं।

दीन-दुखी—दीन दुखी को देखकर उनकी उपेक्षा न करो।

अभ्यास

नीचे लिखे पद वा पद समूहों को वाक्य में लाओ।

'हिमालय के'…,'शक्तिहीन', 'चिरवियोग' 'धर्म हीन', 'कर्त्तव्य च्युत' 'प्राणपन से' 'क्रोध पूर्वक' 'मान मर्य्यादा छोड़ कर'।

'क्षण भर के लिये', 'मरा रे-बाप कहकर' 'हे महा महिम'।

'मैं माता हूँ और तुम……।' 'नदी की लहरों का……।' 'हृदय में साहस…… ।'

'नस नस में शूरता……।' परम प्रतापी राणा प्रताप……।

वसुंधरा वीरों के…… । गंगा हिमालय के…… ।

कन्या कुमारी अन्तरीप……… ।

सूर्य्योदय होते ही……। शरद चन्द्र मनोहारिणी कौमुदी……।

वाक्य-रचना का अभ्यास।

(८)

मुहाविरों पर वाक्य-रचना।

मुहाविरा—ऐसे पद वा वाक्यांश का जहाँ प्रयोग हो, जिस में शब्दार्थ न ले कर, लाक्षणिक अथवा कोई और ही अर्थ लिया

जाता हो, उसे मुहाविरा कहते हैं। मुहाविरेदार भाषा वह भाषा है, जिसमें मुहाविरों का प्रयोग हो।

मुहाविरों का वाक्यों में योग।

मुहाविरा — अर्थ — उनका वाक्यों में प्रयोग।

हाथ धो बैठना- खो देना, वह पुस्तक से हाथ धो बैठा।

हाथ डालना- काम छेड़ना, इस काम में हाथ नहीं डालूंगा।

हाथ खींच लिया-सम्बंध नहीं रक्खा, मैंने उधर से हाथ खींच लिया।

हाथ उठाना=मारना, बच्चों पर हाथ उठाना अच्छा नहीं।

हाथ मारना=शर्त करना, हाथ मार कर कहे देता हूँ।

हाथ चलाना=छेड़ना, हाथ चलाना अच्छा नहीं।

हाथ धोना=कृपा होना, उसके ऊपर राजा का हाथ है।

हाथ कटाना=काबू न रखना, वह अपने हाथ कटा बैठा।

हाथ पर हाथ धरे बैठे रहना=कुछ न करना, वह हाथ पर हाथ रख कर बैठा है।

हाथ खाली होना=कुछ न रहना, मैं खाली हाथ जाकर क्या करूँगा ?

हथियाना=लेना, उसने मेरी पुस्तक हथियाली।

हाथ धो कर पीछे पड़ना=लगातार पीछे पड़ना, वह हाथ धोकर मेरे पीछे पड़ा है।

हाथ दवा है=क़ाबू है, मेरा हाथ दवा है।

हाथ निकालना=क़ाबू निकलना, अब क्या है हाथ निकल गया।

हाथ मलना=पछताना, हाथ मल रहा है।

हाथ आना=मिलना, तुम्हारे क्या हाथ आवेगा।

मुँह मारना=मुँह में जाना, मक्खी ने मुँह मारा।
मुँह की खाना=कड़ा जवाब पाना, उसने मुँह की खाई।
मुँह चलाना=बकना, क्यों मुँह चलाते हो।
सिर पड़ना=नाम लगाना, जानें किसने किया और मेरे सिर पड़ा।
सिर कटाना=मरना, तुम्हारे लिये सिर थोड़े ही कटाऊंगा।
सिर कटना=मारा जाना, वहां सिर थोड़ा ही कटता है।
सिर चिराना=हठात् किसी से कुछ लेना, दूसरे पर सिर चिराना अच्छा नहीं।
सिर मूड़ना=ठगना, किसका सिर मूड़ा।
सिर लेना=ज़िम्मेवरी लेना, उसे अपने सिर क्यों लेते हो।
सिर हिलाना=मने करना, उसने तो सिर हिला दिया।
सिर देना=बलिदान होना, धर्म पर उसने अपना सिर दे दिया।
सिर पर चढ़ाना=आदत बिगाड़ना, उसे सिर पर चढ़ा लिया है।
सिर पटकना=किसी दूसरे पर डालना, उसने मेरे सिर पटक दिया।
सिर डालना=हठात् सौंपना, राम के सिर डाल दी।
पानी उड़ना=आब बिगड़ना, तलवार पर पानी नहीं रहा।
पानी पड़ना=शर्म आना, लाखों मन पानी पड़ा।
पानी ढलना=बेशर्म होना, उसकी आँखों का पानी ढल गया।
पानी पी जाति पूछना=काम करके पीछे सोचना।
ख़ाक उड़ना=बरबाद होना, उसकी ख़ाक उड़ गई।
ख़ाक उड़ाना=बदनामी करना, किसी की ख़ाक उड़ाना अच्छा नहीं।
ख़ाक डालना=छिपाना, खैर हुआ सो हुआ अब ख़ाक डालो।
ख़ाक चाटना=तबाह होना, वह ख़ाक चाट गया।
ख़ाक छानना=बहुत ढूंढ़ना, तुम्हारे पीछे ख़ाक छान डाली।
ख़ाक में मिलना=बरबाद होना, वह ख़ाक में मिल गया।
ख़ाक बरसाना=नाश होना, वहां ख़ाक बरसती है।

ख़ून सूखना=डरना, देखते ही मेरा ख़ून सूख गया।
ख़ून बिगड़ना=कोढ़ या और कोई ख़ून का रोग होना, उसका ख़ून बिगड़ गया।
ख़ून बहाना=मार डालना; उसका ख़ून बहा दूंगा।
ख़ून उबलना=क्रोध आना, एक दम ख़ून उबल आया।
ख़ून का प्यासा=मारने की इच्छा करना, वह मेरे ख़ून का प्यासा है।
मुँह फिरना=घमण्ड होना, उसके मुँह फिर गया।
मुँह फटना=लोभी होना, आज कल उसका मुँह फटा है।
मुँह ही मुँह देना=जवाब पर जवाब देना, क्यों मुंह ही मुंह देते हो?
मुँह बनाना= चेष्टा विशेष करना, कैसा मुँह बनाया है।
मुँह बिगाड़ना=उलटा जवाब देना, उसका मुँह बिगाड़ दिया।
मुँह फाड़ना=हँसना, क्यों मुँह फाड़ता है?
मुँह फक़ होना=घबड़ाना, उसका मुँह फक़ हो गया।
मुँह में पानी भरना=इच्छा होना उसे देख मेरे मुँह में पानी भर आया।
मुँह काला होना=कलंक लगना, उसका मुँह काला हो गया।
मुँह माँगी मौत मिलना=चाही हुई बात पूरी होना, मुँह माँगी मौत नहीं मिलती।
आँख मारना=इशारा करना, उसकी ओर आँख मारदी।
आँख मटकाना=सैन चलाना, क्यों आँख मटकाता है?
आँख मूँदना=विचार न करना, आँख मूँद कर काम न करना चाहिये।
आँख मिचना=मरना, उसकी आँखें मिच गईं।
आँख खुलना=समझ आना, बड़े दिनों में आँखें खुलीं।
आँख दिखाना=धमकाना, जब वह आँख दिखाने लगा।

आँख लगना = प्रेम होना, सोना। उससे आँख लग गई, उसकी आँख लग गई।

चार आँखें होना = सामने होना, ज्यों ही उनकी चार आँखें हुईं।

आँख बदलना = मन फिरना, उसकी आँखें बदली दिखाई देती हैं।

आँखोंमें चर्बी छाना = घमंड आना, उसकी आँखों में चर्बी छागई है।

आँखें नीली पीली करना = नाराज़ होना, आँखें नीली पीली क्यों करते हो।

आँख उठा कर देखना = क्रोधित होना, मारना तो दूर रहा कोई आँख भी नहीं उठा सकता।

आँखों में खून उतरना = क्रोध से आँखें लाल होना।

पानी का बुलबला = क्षणभङ्गुर, यह जीवन पानी का बुलबला है।

पानी के मोल = बहुत सस्ता, पानी के मोल बिक गया।

पानी चढ़ना = रंग आ जाना, सोने का पानी चढ़ा है।

पानी २ होना = अत्यन्त शर्मिन्दा होना, लज्जा से पानी पानी होगया।

पानी पी पी कर = निरन्तर, पानी पी पी कर कोस रहा है।

पानी बुझाना = कोई गर्म वस्तु पानी में डालना, पानी बुझाकर पिलाओ।

पानी भरना = दास होना, वह उसका पानी भरता है।

पानी मरना = कसूरवार साबित होना, उसकी तरफ़ पानी मरता है।

पानी में आग लगना = असम्भव बात, पानी में आग लगावें लुगाई।

पानी भरी खाल = क्षणिक जीवन, पानी भरी खाल है।

अभ्यास

(१) अर्थ लिखो और वाक्यों में प्रयोग करो:—

दंड डालना, दंड भरना, दंडपड़ना, दंड भोगना, दंड सहना,

दमभरना, दममारना, दमसूखना, दम के दम में, दम लगाना, दमउखड़ना, दम खींचना, दम देना, दम घुटना, दम-पट्टी देना, दम में आना, दुःख-पाना, दुःखबटाना, दुःख देना, दुःख पड़ना, दुःखभरना, दुनियादारी करना, दुनिया की हवा लगना, दुनिया भरकी बातें मारना। दुनिया भर का बखेड़ा उठाना, दुनियां से उठ जाना, दुनियां भर का सामान लादना, दुहाई देना, दुहाई मारना, दुहाई फिरना, दिन काटना, दिनदहाड़े लूटना, सिरपर चढ़कर नाचना, नाच नचाना, नाचकूद करना, नाच रंग होना, सिर पर मौत नाचना, तीन तेरह होना, तीन पाँच करना। छुट्टी पाना, छुट्टी होना, छुट्टी रहना। ढील डालना, ढील देना, ढीलाछोड़ना। शान किरकिरी होना, शान बघारना, शान मारना, शान पर चढ़ना।

हवा बँधना, हवा उखड़ना, उलटी हवा चलना, हवा का रुख देखना। हवा खाना। हवा लगना, हवा चलना, हवा बदलना, हवा में उड़ना। हवाई महल बनवाना।

साँस खींचना। साँस निकलनी, साँस भरना, साँस लेना।

गहरी बात, गहरी मार, गहरी चाल, गहरी चोट, टेढ़ी खीर, टेढ़ी बात, टेढ़ी मार, टेढ़ी चाल।

(२) अर्थ लिखो और वाक्यों में प्रयोग करोः—

'मूसलधार पानी बरसता है' 'किंकर्त्तव्य विमूढ़ हो गया' 'कुछ सूझता नहीं' 'रातों रात आगरे पहुँचा' 'तीन तेरह हो गया' 'तीन पांच क्यों बताते हो' 'पानी के बताशे हैं' 'हवाई महल हैं' 'अधाधुंध मच रही है' 'लेना एक न देना दो' 'ज्यों का त्यों रुका है' 'डाँवाँडोल हो गया' 'आँधी के आम हैं' 'सावन का अंधा है' 'हरे में फूटी है' 'बकबक् क्यों मचाई' 'चलता हो' 'क्या गुनगुना रहा है' 'साँप फुसकारता है' 'गाय रँभाती हैं' 'मोर कूकता है' 'कोयल कुहू कुहू करती है' 'कौआ काँव काँव कर रहा

है' 'बकरी में में करती है' 'चोर गिड़गिड़ाता है' 'बादल उठ रहा है' 'घटा छा रही है' 'कमल खिल रहा है' 'चाँदनी छिटक रही है' 'निस्तब्धता छा रही है' 'मखमली फर्स हो रहा है' 'परिंदा पर नहीं मार सकता' 'ऊपरकी साँस ऊपर नीचे की नीचे' 'चील्ह झपट्टा मारती है' 'चिड़ियां चहचहाती हैं' 'बड़े जोर की वर्षा होती है' 'टकटकी बँध गई' 'दिन दहाड़े लूट मच गई' 'छाती धक् धक् करने लगी' 'पसीने पसीने हो गया' 'दिल की कली खिल गई' 'मन बाग़ बाग़ हो गया' 'पानी भरा बबूला है' 'पानी की आग है', 'पैंतरा बदल रहा है' 'तिउरी फट गई' 'तिउरी पलट गई' 'चाल न चल सका' 'बात पकड़ ली गई' 'रात का मामला है' 'जिंदगी भारी पड़ गई' 'वे दिन न रहे' 'मान का पान ही अच्छा' 'आँखें फटी की फटी रह गईं' 'मन-मयूर-मत्त हो गया' 'अन्त तो गत्वा' 'आख़िर कार'।

वाक्य रचना का अभ्यास।

(८)

अनुच्छेद रचना।

"वाक्य, पदों का वह नियमवद्ध संगठन है—जिसमें एक पूरा विचार प्रगट करने की शक्ति हो।" ऐसा वाक्य-समूह जो अनेक आपेक्षक-विचारों का तारतम्य प्रगट करे अनुच्छेद कहलाता है। अर्थात् आपेक्ष वाक्य-समूह ही अनुच्छेद है। अनुच्छेद-रचना के समय एक वाक्य के ठीक पीछे ही दूसरा ऐसा वाक्य आता है जिससे विचारों का तारतम्य नष्ट न हो और जो कुछ हम कहना चाहते हैं उसका क्रम-विकास होता जाय। जब तक वह पूरा भाव स्पष्ट न हो जाय जिसे हम व्यक्त करना चाहते हैं वाक्यों का सिल-सिला बराबर चलता जायगा। अनुच्छेद के वाक्यों में आकांक्षा, योग्यता और आसक्ति रहती है। इसलिये नीचे कुछ पद समूहों पर अनुच्छेद-रचना करके दिखाते हैं:—

संज्ञा-पद—

(१) संसार, सदाचार, शक्तियों, पवित्र, परमात्मा, मन

संसार में उसी को दुख होता है जो **सदाचार** का पालन नहीं करता। सदाचार से शरीर की **शक्तियों** को बल मिलता है; **मन** निर्म्मल होता है; हृदय **पवित्र** होता है। लोग परमात्मा परमात्मा पुकारते हैं परन्तु, जिनके शरीर और मन शुद्ध नहीं हैं वह परमात्मा से प्रेम नहीं कर सकते। **परमात्मा** के प्रेम का साधन ही सदाचार है।

(२) जल, वायु, भोजन श्वास, जीवन (जिंदगी), प्राण

मनुष्य जीवन के लिये **जल, वायु** और **भोजन** की आवश्यकता है। वायु के विना **श्वास** नहीं ले सकते। थोड़ी देर भी श्वास-क्रिया को रोक लें तो **प्राण** छटपटाने लगते हैं। जल का तो नाम ही जीवन है। और विना भोजन के मनुष्य कुछ दिन तक जी सकता है पर दिन पर दिन निर्बल हो जाता है।

अभ्यास

नीचे लिखे हुए प्रत्येक पद-समूह को अलग २ अनुच्छेदों में लिखो:—

१—शाकुन्तल, कालिदास, रचना, अनुपम, संसार कवि-कुल-मुकुट, तुलना

२—विनय, मनुष्यता, शिष्टाचार, जीवन, पवित्र।

३—पर्वतमाला, रमणीय, स्थान, अनुपमछटा, विनोद, स्वास्थ्यकर, घाटियां, भ्रमण।

४—दशरथ, अहिल्या, राम, जनकपुर, विश्वामित्र, शोभा, गदगद्।

५—अशोकवाटिका, सीता, हनूमान, लंका, मुँदरी।

विशेषणपद—

मनोहर, बिकाऊ, शोभा, जड़ाऊ, बुद्धिमान

लाला रामचरण जी एक बड़ा ही **मनोहर** घोड़ा हरिहर क्षेत्र के मेले से लाये हैं। **जड़ाऊ** गहने पहन कर जिस समय बाज़ार में निकलता है शोभा देखकर लोगों की आँखों में चका-चौंध छा जाता है। सेठ रामदास पूछ रहे थे—'क्या यह **बिकाऊ** है'। भला पूछो उन्हें, ऐसा कौन **बुद्धिमान** कहेगा! वह तो अपने शौक़ के लिये लाये हैं।

धैर्य्यवान्, उतावला, कर्त्तव्यशील, गम्भीर, विचित्र

धैर्य्यवान् व्यक्ति ही संसार में सफलता पा सकता है वह कैसा ही **कर्त्तव्यशील** क्यों न हो बिना धीरज के एक क़दम भी आगे नहीं बढ़ सकता। जीवन में कभी २ **विचित्र** अवसर आते हैं उस समय ज़रा भी **उतावला** हुआ और गया। कहा है उतावला सो बावला धीरा सो **गम्भीरा**।

अभ्यास

नीचे की पद-समष्टि पर अनुच्छेद रचना करो:—

१—दैनिक प्रतापशाली, हितकारी, शान्त और दूरदर्शी (दूर की सोचने वाला।)

२—पूजनीय, पतित, विश्वसित, धैर्य्यवान और ज्ञानी।

३—गोल, हरा, मीठा, फल का टूटा हुआ।

४—रंग बिरंगे, मनोहर, ऊंची नीची शान्ति दायक।

क्रिया-विशेषण—

विचित्र ढङ्ग से, हाथोंहाथ, दिनभर, जबकभी, इधर, अचानक

हाँ मैं सोनपुर के मेले में जो पुस्तकें ले गया था हाथों हाथ

निकल गयीं। फिर दिनभर इधरउधर फिरता रहा। अचानक स्वामी सत्यानन्द जी के दर्शन हो गये। उन्होंने कहा जब कभी इधर आओ मिल तो लिया करो। यह बात उन्होंने ऐसे विचित्र-ढङ्ग से कही कि मुझे 'बहुत अच्छा'……'कहना ही पड़ा।

एकाएक, अकस्मात्, कदाचित्, बहुधा, व्यर्थ, दिन भर।

मैं कल एकाएक मथुरा पहुँच गया अकस्मात् चौधरी कृष्ण गोपाल मिल गये। कदाचित श्रावणी तक वहीं ठहरे रहें। बहुधा ऐसा ही किया करते हैं। मैंने आगरे आने के लिये कहा, किन्तु व्यर्थ हुआ। उनके पास दिन भर ठहर कर वहाँ से चला आया।

अभ्यास

नीचे लिखे क्रिया-विशेषण-समूहों पर अनुच्छेद रचना करो:—

१—शान्तिपूर्वक, प्रति दिन, कथनानुसार, सर्वथा।

२—निरंतर, पलमात्र। स्वभावतः नाम मात्र, नियमानुसार।

३—इसलिये, अचानक, सहज, मुख्य करके, क्रमानुसार।

४—निदान, दौड़ते २, जहां तक लगातार, कदापि।

वाक्य रचना का अभ्यास।

(१)

मुहविरों पर अनुच्छेद रचना

१—रात ढलना, सन्नाटा छा जाना, हाथों हाथ, मालमता, नौ दो ग्यारह

रात ढल चुकी थी, सन्नाटा छाया हुआ था, हाथों-हाथ कुछ दिखाई नहीं देता था, चुपके से चोर आया और सारा मालमता लेकर नौ-दो-ग्यारह हुआ।

२—मनमानी, घरजानी, अंधाधुंध, दंग रह जाना, अपनासा मुँह लेकर लौटना।

वहां तो मनमानी घरजानी हो रही है, कोई किसी की नहीं सुनता। इस अंधाधुंध का भी भला कहीं ठिकाना है! मैं तो यह दशा देखते ही दंग रह गया। किस से कहूं और किस की सुनूं। अपनासा मुँह लेकर उसी दिन लौट आया।

३—चलता पुरजा, हवा का रुख देखना, नाकमुंहसकोड़ना दालगलना लैक्चर फटकारना।

मोहन बड़ा चलता पुरजा मनुष्य है। हवा का रुख देख कर बातें करता है। कल तक तो वह समाज-सुधार के नाम से नाक-मुंह सकोड़ता था, किन्तु जब देखा कि अब दाल नहीं गलने की, तो अछूतोद्धार पर एक लम्बा लैक्चर फटकार दिया।

४—येन्केन् प्रकारेण, किंकर्त्तव्य-विमूढ़, यत्किञ्चित्, हाथलगना, चटकर-जाना, लम्बी तानी।

मैं अत्यन्त दुर्व्वल हो रहा था। येनकेन-प्रकारेण दो चार घंटे पीछे पर्व्वत-शिखिर तक जा पहुँचा। भूख जोर से सता रही थी। यत्किञ्चित् सामान हाथ लगा, चुपचाप चट कर गया। पश्चात् ऐसी लम्बी तानी कि पता भी न चला रात कब बीत गई।

अभ्यास

हर एक समूह पर सापेक्ष वाक्य-समूह लिखो:—

१—दिन दहाड़े, दुहाई देना, दम खुश्क होना, दण्ड भोगना।

२—डाढ बताना, नाच कूद करना, दम में आना, टकटकी बँधना।

३—तिउरी बदलना, दाल न गलना चाल चलना मनमानीकरना हाथ मलते रहना।

४—कुहू कुहू करना, चहचहाना, कूकना, पीउपीउ चिल्लाना, झनकारना, टर् टर् करना।

वाक्य-रचना का अभ्यास
(१०)
कहावतों का प्रयोग ।

कहावतें ऐसे मुहाविरेदार वाक्य (उक्तियां) हैं जो एक स्वतंत्र अर्थ रखती हैं, और जिनको मनुष्य अपने कथन की पुष्टि में व अपने पक्ष में फैसला लेने के अभिप्राय से, अथवा किसी बात को किसी आड़ से कहना हो उस समय, अथवा किसी के प्रति उपालंभ देना हो, अथवा जब किसी को चेतावनी देनी हो, तो उनका प्रयोग किया करते हैं। उन्हें 'कहावत' या लोकोक्ति अथवा 'जनःश्रुति' कहते हैं।

उलटा काम करने वाले को अच्छा फल न मिले तो वहां स्पष्ट यह न कहकर "तुमने बुरा किया अतः बुरा हुआ" एक लोकोक्ति कह दी "जैसी करनी पार उतरनी।" अवसर निकल जाने के बाद सम्हलने वाले से "अब पछताये होत का चिड़ियां चुग गईं खेत।" "का बरसा जब कृषी सुखाने।"

इस प्रकार सहस्रों कहावतें जनता में कही और सुनी जाती हैं। उन कहावतों का भावार्थ समझ कर वाक्यों में प्रयोग करने से वाक्य-रचना का अच्छा अभ्यास होता है।

जब पृथक् २ कहावतों का प्रयोग करते हैं तो सापेक्ष-वाक्य-समूह का कहावत पर निचोड़ होता है; जैसे:—

देखिये ऊँट किस करवट बैठता है।

अभी परिणाम विदित नहीं हुआ। उद्योग तो खूब किया, पर, ठीक नहीं कह सकता कि "ऊँट किस करवट बैठे।"

एक का इलाज़ दो और दो का इलाज चार।

भाई, कल रात को एक दुर्घटना हो गई। जब मैं घर आ रहा था, दो चोरों ने घेर लिया यद्यपि मैंने बहुत साहस

किया, तथापि आप जानते ही हैं कि "एक का इलाज दो और दो का चार" वह कपड़े लत्ते लेकर लम्बे बने।

साँई घोड़नि के अछत गदहन आयो राज।

यहाँ तजुरुबेकार पुराने लोगों को कोई पूछता ही नहीं, बेचारे सच्चे सीधे एक कोने में पड़े हैं। परन्तु कुछ चालबाज़ लोगों ने अपना ऐसा गुट्ट बनाया है, कि उनके सामने किसी की नहीं चलती। यह दशा देख कर हमें वह मसल याद आती है कि, "सांई घोड़नि के अछत गदहन आयो राज।"

फरा सो झरा और बरा सो बुताना।

जो आर्य्य-जाति किसी समय सभ्यता के शिखर पर चढ़ी थी, जो एकता और प्रेम के मद में मस्त थी। आज वही, अज्ञान, द्वेष कलह और फूट का शिकार बन रही है। सदैव एक सी दशा किसी की नहीं रहती। यह ईश्वरी नियम है, "फरा सो झरा और बरा सो बुताना।"

अपनी अपनी ढापुली अपना अपना राग।

अविद्या के अँधेरे में एकता सूत्र को तोड़ मोड़ डाला। यह हिन्दू-जाति अनेक सम्प्रदाय और अनेक वर्गों में बटकर अलग २ हो गई। कोई किसी की बात नहीं मानता है, सब "अपनी ढापुली अपना २ राग अलापते हैं।"

हाथी चले हो जाते हैं कुत्ता भूँकते ही रहते हैं।

संसार में सब की बुराई भलाई होती है, परन्तु बुद्धिमान पुरुष मूर्खों की बात पर कभी ध्यान नहीं देते; वह अपने मार्ग से तिल भर भी नहीं हटते, वह जानते हैं कि "हाथी चले जाते हैं और कुत्ते भूँका ही करते हैं।"

बड़े लोगों के कान होते हैं, आँख नहीं।

हमारे देश में बड़े लोग, लड़कपन से ही कुछ खुशामदी लोगों के हाथ के खिलौने बन जाते हैं। यही बनावटी-भक्त उन के विचारों और व्यवहारों के विधाता बन बैठते हैं। जो कुछ इन्होंने कह दिया, जो कुछ समझा दिया, वह बे-पेंदी के लोटे की तरह इधर उधर लुढ़कते फिरे। तभी तो कहते हैं, "बड़े लोगों के आँखें नहीं होतीं कान होते हैं।"

एकार्थक अनेक कहावतों को जब एक अनुच्छेद में प्रयोग करते हैं तो किसी मुख्य भाव की पुष्टि होती है।

नीति सम्बंधी कहावतें—

मनुष्य स्वार्थ-वश होकर नीच से नीच कर्म करने पर उतारू हो जाता है। स्वार्थ भरी संकीर्ण-दृष्टि से संसार के सारे कामों को देखता है। उसके हृदय में नीति-धर्म के तत्वों के लिये कोई भी स्थान नहीं रह जाता। उसे तो **'यार की यारी से काम उस के फेलों से क्या काम'**? संसार में **'मुख्य है दाल रोटी और सभी बात खोटी'** होने के कारण **'मतलब से मतलब'** है। न किसी के अन्यायों पर क्षोभ है न किसी के न्याय पर हर्ष। उसके द्वारा **'साठ गाँव का चौधरी बहत्तर गाँव का राव, अपने काम न आवे तो भाड़ में जाव'** की असीस पाता है। वह भली प्रकार समझ लेता है कि **'स्वारथ के सब ही सगे बिन स्वारथ कोउ नाहिं'**। उस के लिये **'स्वारथ रहित सखा सब ही के'** कथा के भटा हैं। **'वह मीठे के लिये दूसरों की झूठन पर लार टपकाता है'** ऐसी ही परिस्थिति में फँस कर नीति तत्व का यह मंत्र—

"रहिमन पानी राखिये बिन पानी सब सून।
पानी गये न ऊबरै मोती मानस चून" ॥

उसकी निगाहों में क्या मूल्य रख सकता है। उसके निकट **'तिरिया**

तेल हमीर हठ' निरी मूर्खता और 'सत मत छोड़े सूरमां सत छोड़े पति जाय' पागलों का प्रलाप है। परन्तु जब भाग चक्र घूमता है, क्षुद्र स्वार्थ-चक्करों से मनुष्य छुटकारा पाकर ऊपर उठता है तब 'पर स्वारथ के कारणे सज्जन धरत शरीर' का महत्व देखने लगता है और 'निज कारण दुःख ना सहैं सहैं पराये काज' का तत्व समझ पड़ता है। 'तुलसी संत सुअम्बतरु फूलि फलैं पर हेत' अथवा 'परोपकाराय सतां विभूतयः' का तत्व छिपा नहीं रह सकता। 'बर मरै कि कन्या मुझे तो पीरे टका से काम' वाला नर-पशुओं का समुदाय देखकर त्रास होता है।

खेती संम्बंधी कहावतें—

उनके हृदय में यह 'उलट वेद' की बात जम जाती है:—

'खेती करे न बंजे जांय, विद्या के बल बैठे खाँय'।

विद्या क्या हुई ठगी हुई। बिना कुछ किये, बैठे २ खाना क्या कोई शूरता है? खेती के लिये तो—

'बाँध कुदारी खुरपी हाथ, हँसिया लाठी राखे साथ।
काटे घास निरावै खेत, वहा किसान करै निज हेत'॥

जब किसान—

'छाँड़े खाद जोत गहराई, तब खेती का मजा उठाई'।

और यदि—

'जोते खेत घास ना टूटै, ताको भाग साँझ ही फूटै'।

अनेक किसान खर्च तथा खेत की कमी के कारण दूसरों के साझे में खेती करते हैं। बहुत से लोगों को ऐसी अवस्था में लाभ भी हो जाता है पर बड़े बूढ़े कहते आये हैं—

'काँटा बुरा करील का अरु बदरी की घाम।
सौत बुरी है चून की अरु साझे का काम'।

साझे के काम में बड़े २ झगड़े हो जाते हैं। मैं-मैं तू-तू में ठीक वक्त पर काम नहीं होता। कहा यह है—**अगसर खेती अगसर मार घाघ कहैं ये कबहुँ न हार।** इससे साझा बहुत सोच समझ कर करना चाहिये। आषाढ़ से पहिले ही खेत की मेंड़ बाँध कर ऐसा बना देना चाहिये कि उसका पानी न निकलने पावे। इसी से नीचे में खेत अच्छा होता है। उसमें पानी की रोक हो सकती है—

'जिसका ऊंचा बैठना, जिसका खेत निचान।
उसका बैरी क्या करे, जिसका मीत दिमान॥

गेहूँ के लिये तो निचान खेत ही चाहिये, थोड़ा पानी भी उस म पहुँचे तो बाहर न निकले **'गेहूँ आये बाल, खेत बनाओ ताल'** और धान का तो पानी ही प्राण है **'काले फूल न पाया पानी, धान मरा अधबीच जवानी'** कहां तक कहें खेती के ज्ञान भरे हजारों मंत्र हैं। सबका सारांश यही है **'धूल पानी धूल पानी'**।

अभ्यास।

नीचे लिखी कहावतों का अर्थ करो और वाक्यों में लाओ:—

"घर में भूँजी भाँग नहीं—" "घर घर मिटयाले चूल्हे हैं—" "चलती का नाम गाड़ी—" "चार दिना की चाँदनी फेर अँधेरी रात—" "चूनी कहे मुझे घी से खा—" "छछूँदर के सिर में चमेली का तेल—" "छटी का दूध जवान पर आगया—" "जब तक स्वास तब तक आस—" "जमात से करामात—" "जन्म के दुखी नाम चैनसुख—" 'जन्म के अन्धे नाम नैनसुख—" "जाओ पूत दक्खिन वही कर्म के लक्खिन—" "जैसे कंथा घर रहे तैसे गये विदेश—" जैसे नाग नाथ तैसे साँप नाथ—" "जो धन दीखै जात, आधा, आधा लीजै बाँट—" "जोगी २ लड़े खप्परों की हानि—" "तलवार की आँच बुरी होती है—" "तन पर नहीं लत्ता पान खाय अलबत्ता—"

वाक्य-रचना का अभ्यास।

(११)

वाच्यार्थ, भावार्थ, तात्पर्य और व्याख्या।

गद्य या पद्य वाक्यों के वाच्यार्थ, तात्पर्य्य, भावार्थ और व्याख्या लिखने से वाक्य-रचना का अच्छा अभ्यास होता है।

वाक्य का वाच्यार्थ—वाक्यगत कठिन शब्द और मुहाविरे को सरल वाच्यार्थ में बदल कर, सुबोध वाक्य में उसे परिवर्त्तित कर देते हैं, उसे वाक्य का सरलार्थ कहते हैं:—जैसे

"धनि रहीम जल पंक कौ लघु-जिय पियत अघाय।
उदधि बड़ाई कौन है जगत पियासो जाय॥"

गद्यान्वय—रहीम पंक कौ जल धन्य (जेहि) लघुजिय अघाय पियत। उदधि (की) कौन बड़ाई (है) (जिससे) जगत पियासौ जाय।

सरलार्थ—रहीम कहते हैं कीच का जल धन्य है। जिसे छोटे २ जीव भर पेट पी लेते हैं। समुद्र की क्या बड़ाई है जिस के पास से संसार पियासा जाता है।

भावार्थ—पर्य्याय शब्दों के द्वारा किये हुये अर्थ को छोड़ कर केवल भाव पर स्वतंत्र वाक्य में जो अर्थ किया जाता है वह भावार्थ है। ऊपर के दोहे का भाव यह है—उस वैभव की अपेक्षा जिससे किसी का कार्य्य न सधे उस तुच्छ वस्तु को धन्य है जो दूसरों के हित में लगे।"

तात्पर्य्य—वक्ता का उस बात के कहने में जो मुख्य भाव होता है उसे तात्पर्य्य कहते हैं। तात्पर्य्य निर्णय के समय अर्थवाद (विषयान्तर) की बातें पृथक् करली जाती हैं। हाथ कमल के समान सुन्दर है-कमल का वर्णन अर्थवाद है। तात्पर्य्य यह है हाथ बहुत ही कोमल और सुन्दर है।

ऊपर के दोहे में यह तात्पर्य्य है कि "हर एक शक्ति-शाली के वैभव से दूसरों का हित होना चाहिये।"

व्याख्या—विस्तृत-अर्थ जिसमें पूर्वापर प्रसंग की सम्पूर्ण बातों का उल्लेख तथा वाक्यान्तर्गत-रहस्य का पूर्ण विवेचन रहता है योग्यता के अनुसार व्याख्या कई प्रकार से की जा सकती है।

वाक्य—"आज जो समाज सुखी और समृद्धि-शाली बना है, संभव है कल उसे औरों की जूतियाँ उठानी पड़ें; इतिहास ऐसे उदाहरणों से भरा पड़ा है।

व्याख्या—"इतिहास में ऐसी सैकड़ों मिसालें मौजूद हैं जिन से सिद्ध होता है कि हमेशा एक सी दशा किसी की नहीं रहती है। यदि इस समय कोई देश, जाति वा समाज, धन और सुख से पूर्ण अर्थात् स्वतंत्र हो, तो यह निश्चय नहीं है कि हमेशा वह स्वतंत्र ही बना रहे—मुमकिन है कल दूसरी जातियों का गुलाम बनना पड़े। अर्थात् अच्छी अवस्था में कभी किसी को स्वार्थी और पागल न हो जाना चाहिये।"

अभ्यास

नीचे लिखे वाक्यों का सरलार्थ, भावार्थ और तात्पर्य लिखो:—

१—"साहिब के दरबार में कमी काहु की नाहिं।
बंदा मौज न पावही चूक चाकरी माहिं॥"

२—'जे न मित्र-दुःख होहिं दुखारी तिनहिं बिलोकत पातक भारी।"

३—"साईं घोड़नि के अछत गदहनि आयो राज।"

ऋ—"सुख पाने पर मनुष्य व्यसनी हो इतना स्वार्थी बन जाता है कि अपने सिवाय संसार में उसे और कोई सूझता ही नहीं। मनुष्य का यही स्वार्थ वा पागलपन है, जो ईश्वर को अवतार लेने के लिये वाध्य करता है। लूथर और गौतम का संसार में आना इसीलिये हुआ।"

२—व्याख्या करो:—

अ—"आलसी मनुष्य जिस समय को बुरा कहते हैं, जिसको छोटा वा निरर्थक समझते हैं परिश्रमी उसी समय को अमूल्य बना लेते हैं।"

इ—"जो सुदृढ़, अलमस्त, व्यसनी, अशिक्षित हों ऐसे लोगों को दान नहीं देना चाहिये,क्योंकि ऐसे लोगों को दान देने से उत्तेजना मिलती है।"

उ—तुलसी संत सु अम्ब-तरु फूलि फरैं पर हेत।
इतते वे पाहन हनें उतते वे फल देत॥

ऋ—घर घर डोलत दीन ह्वै, जन २ जाँचत जाय।
दिये लोभ चसमा चखनि, लघु पुनि बड़ौ लखाय॥

ऌ—रहिमन रहिला की भली जो परसै मन लाय।
परसत मन मैला करे सो मैदा जरिजाय।

ए—'इसके बाद विशाल सेना के समक्ष' रामचन्द्र ने सीता से जो अत्यन्त कठोर बचन कहे थे, उन्हें सुन कर लज्जा के मारे लज्जावती मर सी गई किन्तु तेजस्विनी की महिमा एक दम प्रकाशित हो उठी। रामचन्द्र के कठोर वचन साधारण पुरुषों के से थे, यह समझ कर साध्वी का कंठ द्विधा से कम्पित नहीं हुआ; वह पति के चरणों में अशेष प्रेम प्रगट करके मरने के लिये तैयार हो गई और आये हुए अश्रुओं को पोंछ कर नीचा मुख कर वह बैठे हुए स्वामी की प्रदक्षिणा करके जलती हुई चिता पर बैठ गई।"

चतुर्थ अध्याय।

रचना के लिये ज्ञातव्य-बातें।

(१)

काव्य, रस, गुण, दोष, रीति, छंद और गद्य-भाषा।

रसात्मक वाक्य का नाम 'काव्य' है। जिस रचना के पढ़ने से पाठक के हृदय में एक अनिर्वचनीय आनन्द का उदय हो उसका नाम 'काव्य' है। जिस व्यक्ति को आधार मानकर किसी काव्य की रचना की जाती है वह उस काव्य का 'नायक' कहलाता है। और नायक का प्रतिद्वन्द्वी प्रति नायक। जैसे रामायण में राम नायक और रावण प्रतिनायक है। नायक और प्रतिनायक के सिवाय गौणरूप से अन्य पुरुषों का वर्णन भी रहता है।

काव्य के दो भेद हैं—श्रव्य और दृश्य। पढ़ने और सुनने योग्य काव्य 'श्रव्य' कहलाता है; जैसे:—रामायण। और जिसका अभिनय किया जा सके वह 'दृश्य' काव्य है, जैसे—नाटक प्रहसन आदि। श्रव्य काव्य के दो भेद हैं—महाकाव्य और खण्डकाव्य।

महाकाव्य—किसी देवता या प्रसिद्ध-पुरुष के चरित्र के आधार पर की हुई जिस रचना में सम्पूर्ण रस और भावों का विस्तृत वर्णन हो, शान्त, वीर और शृङ्गार में से कोई रस प्रधान हो, उसे महा-काव्य कहते हैं। महाकाव्य में १८ से लेकर ८ सर्ग तक होते हैं; जैसे—महाभारत, रामायण, प्रिय-प्रवास आदि।

खण्डकाव्य—जिस काव्य में, काव्य के थोड़े से अङ्गों का वर्णन हो उसे खण्डकाव्य कहते हैं, जैसे जयद्रथ-बध।

रस

किसी वर्णन को सुनकर या पढ़कर अथवा नाटकादि का अभिनय देखकर हृदय में जो एक स्थाई और अपूर्व भाव पैदा होता है उसे 'रस' कहते हैं। किसी विषय के पढ़ने, सुनने, देखने से मनुष्य के मन में सुख-दुःख आदि के अनुभव करने के कारण जो एक अकथनीय 'विकार' उपस्थित होता है, उसे 'भाव' कहते हैं। रस नौ प्रकार के हैं:—

(१) 'शृङ्गार'—नायक-नायिका के अनुराग-विषयक-भाव के नाम को शृङ्गार कहते हैं।

(२) वीर—दया, धर्म, दान, देशभक्ति और संग्राम में उत्साह-विषयक-भाव के वर्णन में वीर रस होता है।

(३) करुणा—प्रिय-वस्तु के वियोग और अप्रिय-वस्तु के संयोग में जो शोक होता है, उसे करुणा कहते हैं।

(४) अद्भुत—आश्चर्य्यजनक विषय को देख-कर, सुन-कर, पढ़कर जो आश्चर्य्य का भाव उत्पन्न हो उसे अद्भुतरस कहते हैं।

(५) रौद्र—क्रोध उत्पन्न करने वाले रस को रौद्र रस कहते हैं।

(६) भयानक—जिससे मन में भय हो उसे भयानक रस कहते हैं।

(७) वीभत्स—जिसके द्वारा मन में घृणा उत्पन्न हो, वह वीभत्स रस है।

(८) हास्य—हसी का भाव जहाँ पैदा हो वहाँ हास्य रस है।

(९) शान्त—तत्त्व-ज्ञान आदि से मन में जहाँ शान्ति उत्पन्न हो, वहाँ शान्त-रस होता है।

रचना में इन्हीं रसों में से एक या कई रस होते हैं।

गुण

रस को बढ़ाने वाले धर्म को 'गुण' कहते हैं। यह ३ प्रकार हैं—माधुर्य्य, ओज और प्रसाद। माधुर्य्य—जिस रचना को सुन कर चित्त द्रवीभूत हो जाय उसे 'माधुर्य्य गुण' कहते हैं। ओज—जिस रचना में चित्त में उत्तेजना, वीरता, साहस बढ़े, वहाँ 'ओजगुण' होता है।

प्रसाद—जिस रचना को सुनते ही उसके अर्थ का भान हो जाय वहाँ 'प्रसाद गुण' होता है।

दोष

शब्दार्थ तथा रसादिक के अनुचित प्रयोग को दोष कहते हैं

श्रुति-कटुता—कर्कश शब्दों का प्रयोग।

व्याकरण-दुष्टता—व्याकरण-विरुद्ध शब्दों का प्रयोग।

अप्रयुक्तता—अप्रचलित पदों का प्रयोग।

ग्राम्यता—प्रान्तिक व ग्रामीण शब्दों का प्रयोग।

दूरान्वय—आकांक्षा युक्त पद ठीक स्थान पर न हों।

असमर्थता—शब्दों का बुरी तरह प्रयोग।

निरर्थकता—शब्दों का निरर्थक प्रयोग।

अश्लीलता—घृणित और लज्जाजनक बातों का प्रयोग।

क्लिष्टता—लम्बे २ सामासिक तथा अन्य कठिन शब्दों का प्रयोग।

प्रसिद्ध विरुद्धता—आँखों को मृग, खंजन व कमल से उपमा देते हैं; यश स्वेत होता है; और कुमुद को चन्द्र-प्रणयनी आदि; जैसा कि कवि लोग वर्णन करते आये हैं, उसके विरुद्ध वर्णन करना प्रसिद्ध विरुद्धता दोष है।

अयोग्यता—देश, काल, पात्र, अवस्था के प्रति दृष्टि न रख कर स्वेच्छा-पूर्वक वर्णन में 'अयोग्यता' दोष होता है।

अधिक-पदता—अनावश्यक पदों के प्रयोग में होता है।

रीति

रचना के लिये पदयोजना करने की पद्धति को रीति व शैली कहते हैं। भिन्न २ लेखकों की भिन्न २ लेखन-शैली हैं। इसी लेखन-शैली के उत्कर्ष के अनुसार रचना की सुन्दरता बढ़ती है। उत्कर्ष-शैली के लिये स्पष्टता, माधुर्य्य, पद-प्रयोग की सार्थकता, चित्ताकर्षकता, भाषा-वैचित्र्य और भाव-प्रतिफलन का ध्यान रखना चाहिये।

(१) स्पष्टता—रचना के पढ़ने से अर्थ-बोध में कठिनता न हो। स्पष्टता को गुण विशेष कह सकते हैं। बिना स्पष्टता के रचना के अन्य गुण व्यर्थ हो जाते हैं। लेख के भावों को सरलतापूर्वक पाठक समझ सकें इसका ध्यान रखना परम आवश्यक है। रचना-गौरव के लिये कभी २ लेखक इस प्रकार पद-विन्यास करते हैं जिससे यह नहीं समझ सकते कि किस पद का सम्बंध किससे है। कोई २ कठिन और अप्रलित शब्दों का प्रयोग करते हैं। अनेक लेखक थोड़े से शब्दों में व्यक्त होने वाले भाव को बड़े २ वाक्यों में प्रगट करते हैं, ऐसे स्थान पर भाव की जटिलता बढ़ जाती है। रचना को स्पष्ट करने में इन दोषों का परिहार करना चाहिये।

(२) माधुर्य्य—हृदय के भाव प्रकाशन में जो स्वाभाविक वाक्य मुँह से निकालते हैं उन्हीं सब वाक्यों के साधारण विन्यास द्वारा रचना में सरलता लाने की चेष्टा करनी चाहिये। प्रसंग के प्रतिकूल वाक्य-विन्यास द्वारा रचना का माधुर्य्य नष्ट होता है। शान्त और करुणा रस के व्यक्त करने वाली पदावली कोमल

होनी चाहिये न कि दुर्बोध और बहु-समास-सम्पन्न। धर्म और नीति-मूलक रचना में सजीवता तथा भाव-गांभीर्य्य की रक्षा होनी चाहिये, नहीं तो सौंदर्य्य नष्ट हो जायगा। जैसा गंभीर विषय हो उसी प्रकार उसमें गौरव भी आना चाहिये। वीर, रौद्र और वीभत्स आदि रसों में जटिल और समासयुक्त-भाषा द्वारा ओज बढ़ता है।

(३) पद-प्रयोग की सार्थकता—जिन वाक्य-समूह व पदों का प्रयोग करें वह अप्रासंगिक * होंगे तो व्यञ्चकता + में जटिलता आ जायगी और अर्थ का स्फुरण × ठीक २ न हो सकेगा। निरर्थक शब्दों के प्रयोग से रचना फीकी हो जाती है। अनेक लोग एक ही भाव को अनेक वाक्यों में भिन्न २ तरह से दिखा कर उसे व्यर्थ बढ़ाते हैं। थोड़ी सी बात में भाव प्रगट करना रचना की निपुणता है, किन्तु थोड़ी सी बात का यह मतलब नहीं है कि वह सहज ही में न समझी जा सके।

(४) चित्ताकर्षकता—लेखक की पदावली ऐसी गौरवशालिनी हो जो पढ़ते ही पाठकों के चित्त को अपनी ओर खींचले। लेखक जहाँ दुःख और शोक प्रकाशित करे, पढ़ते ही पाठक भी उसे अनुभव करने लगे। किसी विषय को पढ़-कर, देख-कर या सुन-कर पाठक, दर्शक और श्रोता के मन में उस अनुभव के कारण एक अनिर्वचनीय 'विकार' उत्पन्न हो उसे 'भाव' कहते हैं। रचना विशेष के पढ़ने आदि से उत्साह, शोक, विस्मय, क्रोध, भय, स्नेह, हास्य, घृणा और विरति उत्पन्न होती है। पाठकों के मन को उसका पूरा अनुभव करा देना रचना की प्रशंसा है। सुलेखक को पद-विन्यास का गौरव भली प्रकार जान लेना चाहिये।

---

* प्रसंग के बाहर के। + भाव प्रगट करने की शक्ति × फुरना।

सुकुमारता—भाषा का एक गुण और है। लालित्य-विहीन होने पर सारयुक्त भाषा भी पाठकों का चित्ताकर्षण नहीं कर सकती। भाषा की रीति का हरएक लेखक को ध्यान रखना चाहिये। कर्कश-शब्दों के प्रयोग से बचना चाहिये, इससे 'श्रुति-कटु' दोष पैदा होता है और भाषा की कोमलता नष्ट होती है। नीचे दर्जे की भाषा में ग्राम्य-दोष होने से श्रुति-मधुरता नहीं होती। अर्थागम में सन्देह, अप्रसिद्ध अर्थ में अनेक अर्थ वाले शब्दों का प्रयोग, किसी अर्थ वाले शब्द का दूसरे अर्थ में प्रयोग, कष्टार्थक-कल्पना, अनावश्यक-पद-प्रयोग और आवश्यक पदों के अभाव का ध्यान रखना चाहिये। परस्पर अपेक्षा रखने वाले पदों अथवा वाक्यों की अर्थ-समता पर ध्यान रखना चाहिये। कभी भी एक वाक्य को हटात् दूसरे वाक्य के भीतर लाने की चेष्टा न करनी चाहिये। अव्यय-पदों के ठीक २ प्रयोग में भाषा का सौंदर्य्य बढ़ता है।

भाषण-वैचित्र्य—भाषा का एक विशेष गुण है। वर्णित विषय को ऐसे सुन्दर भावों से सजाना चाहिये जिससे उसका सौंदर्य्य और आकार स्पष्ट दीखने लगे। साधारण भाव वाले पदों से विन्यास में यह स्पष्टता नहीं होती। अर्थालङ्कार और दृष्टान्तों से विषय का सौंदर्य्य और आकार प्रत्यक्ष होता है। भाषा में जितना वैचित्र्य होगा, भाव में सौंदर्य्य का उतना उदय होगा। 'वाक्य के रूपान्तर' प्रकरण में भाषा-वैचित्र्य के कुछ उदाहरण दिखा चुके हैं।

भाव-प्रतिफलन—जिस प्रकार सूखे काठ में अग्नि शीघ्र प्रवेश करती है उसी प्रकार भाषा में कहे हुए भाव भी शीघ्र प्रति-फलित हों, अर्थात् पढ़ते ही भाव-समूह पाठक के चित्त में व्याप्त हो जाँय। परोपकार, जन-साधारण में ज्ञान की वृद्धि और मन का विकास, यही रचना के मुख्य उद्देश्य हैं।

छंद

वह वाक्य जिसमें वर्ण वा मात्रा की गणना के अनुसार विराम आदि का नियम हो 'छन्द' कहलाता है। यह दो प्रकार का होता है:—वर्णिक और मात्रिक। जिस छंद के प्रतिचरण में अक्षरों की संख्या और लघु-गुरु के क्रम का नियम होता है वह 'वर्णिक' वा 'वर्णवृत्त', और जिसमें अक्षरों की गणना और लघु गुरु के क्रम का विचार नहीं, केवल मात्राओं की संख्या का विचार होता है वह 'मात्रिक' छंद कहलाता है रौला, रूपमाला, दोहा, चौपाई इत्यादि मात्रिक छंद हैं; वंशस्थ, इंद्रवज्रा, उपेन्द्रवज्रा मालिनी, मंदाक्रान्ता इत्यादि वर्णवृत्त हैं।

गद्य

वह लेख जिसमें मात्रा और वर्ण की संख्या और स्थान आदि का कोई नियम न हो और जिसमें कर्त्ता और क्रियादि पद यथा-स्थानों पर स्थित हों।

काव्य के दो भेदों में से एक भेद 'गद्य-काव्य' होता है जिसमें छंद और वृत्त का प्रतिबंध नहीं होता और बाकी रस अलंकार आदि सब गुण होते हैं।

अग्निपुराण में गद्य-काव्य तीन प्रकार का माना गया है-चूर्णक, उत्कलिका, और वृत्तगंधि।

चूर्णक—वह है जिसमें छोटे छोटे समास हों।

उत्कलिका—वह है जिसमें बड़े बड़े समस्त-पद हों।

वृत्तगन्धि—वह है जिसमें कहीं कहीं पद्य का सा आभास हो;

जैसे—हे बनवारी, कुंजविहारी, कृष्णमुरारी, यशोदानंदन हमारी विनती सुनो।

रचना के लिये ज्ञातव्य-बातें

(२)

प्रबन्ध लिखते समय उसके 'सौन्दर्य-विधान' और 'दोष-हीनता' पर विशेष ध्यान रखना चाहिये। अपने विषय से बाहर नहीं जाना चाहिये। भाव-पूर्ण वाक्यों में प्रबन्ध लिखने की चेष्टा करनी चाहिये। भाषा की सजीवता और भावों की गंभीरता को भी न भूलना चाहिये। वर्णनीय सब विषयों को क्रम से लगा लेना चाहिये। उदाहरणों से भावों को पुष्ट करना बुरा नहीं है। भाषा की रीति में कहे हुए विधानों का ध्यान रखना चाहिये।

प्रबन्धों को दोष-हीन बनाने के लिये नीचे की कुछ बातों को ध्यान में रखना चाहिये।

१—अशुद्ध-पद और कुप्रयोगों का त्याग।

२—अश्लील और अप्रचलित पदों से बचाव।

३—अन्त्यन्त नीच, ग्राम्य अथवा प्रान्तीय भाषा के व्यवहारों से बचाव।

४—विदेशी भाषाओं के सहज-प्रचलित तथा अत्यन्त आवश्यक पदों के सिवाय अनावश्यक शब्दों की भरमार से बचाव।

५—'इसलिये' 'जो कि' आदि अव्ययों को बारम्बार प्रयोग न करना चाहिये।

६—वर्णनीय-विषय के लाघव और गौरव के विचार से वाक्य में छोटे-बड़े पद लाना चाहिये।

७—लम्बे २ समासों के प्रयोग से बचना चाहिये।

८—एक ही भाव को बार २ नहीं दुहराना चाहिये।

९—भाव-प्रकाशन में उपयुक्त पदों का व्यवहार करना चाहिये।

१०—पद-स्थापन-प्रणाली पर पूरा २ ध्यान देना चाहिये।

११—बहुत सी असमापिका क्रियाओं द्वारा अधिक वाक्यों को न जोड़ना चाहिये।

१२—दो वाक्यों के जोड़ने के स्थान में एक अत्यन्त दीर्घ और दूसरा अत्यन्त छोटा न होना चाहिये।

१३—तत्सम और तद्भव शब्दों का परस्पर समास नहीं होना चाहिये।

१४—विषाद, विस्मय, क्रोध, हर्ष, शोक, निश्चय, प्रमाद और ढीठता आदि अर्थ वाले पदों के दुहराने में पुनरुक्ति दोष नहीं होता।

१५—अनुप्रास, यमक आदि शब्दालंकारों की भरमार से रचना को जटिल नहीं बनाना चाहिये।

१६—अनेक सम-कारक-पद एक वाक्य में आवें तो अन्तिम पद के पूर्व संयोजक या वियोजक अव्यय लाना चाहिये और प्रथम को छोड़कर शेष पदों के पूर्व अल्प-विराम।

पञ्चम अध्याय ।

पत्र-लेखन

२

पत्र-लेखन रचना का मुख्य अङ्ग है। लेख, निबंध और पुस्तकादि लिखने वालों की संख्या तो परिमित होती है किन्तु प्रायः पत्र लिखने लिखाने का काम तो समाज के हर एक सदस्य को पड़ता ही है। गार्हस्थिक, सामाजिक, नैतिक तथा धार्मिक ऐसी अनेक आवश्यकताएँ होती हैं जिनके लिये हमें दूरस्थमित्र, सम्बन्धियों, सम्पादकों, शासकों तथा आत्मीयों को पत्र लिखना पड़ता है अथवा उनके पत्रों का उत्तर लिखना पड़ता है। पत्रों में कामकाजी साधारण बातों से लेकर बड़े २ ऐतिहासिक, दार्शनिक, सामाजिक और नैतिक विषयों का उल्लेख करना पड़ता है। उच्चश्रेणी के पत्र योग्य लेखक ही लिख सकते हैं। उन्हें निबंध-रचना के सम्पूर्ण नियमों की जानकारी आवश्यक है। किन्तु साधारण योग्यता तो हर एक अक्षराभ्यासी के लिये अपेक्षित है इसीलिये मुख्य २ बातें नीचे लिखी जाती हैं।

पत्र लिखते समय दो प्रकार की बातों पर ध्यान देना चाहिये:-

१—पत्र-सम्बन्धी-सभ्यता अर्थात् शिष्टाचार।

२—मुख्य विषय।

शिष्टाचार

१—शिष्टाचार के लिये यह देखना चाहिये कि हम जिन को पत्र लिख रहे हैं वह पूज्य, मान्य, आत्मीय, सम्बन्धी वा परिचित हैं। प्रचलित-नियम के अनुसार उसके लिये वैसी ही प्रशस्ति (सरनामा) लिखना चाहिये।

२—हिन्दी में प्रचलित-प्रणाली के दो भेद हैं, प्राचीन और नवीन।

पुराने ढंग के व्यापारी, जमीदार, पंडित तथा अन्य लोग अब भी पुरानी प्रथा के अनुसार पत्र लिखते हैं और नये विचार के लोग–नये ढंग से शिक्षा पाये हुए अथवा उसे सम्पर्क रखने वाले लोग–नवीन-परिपाटी से पत्र लिखते हैं।

नवीन-परिपाटी में व्यर्थ की बहुत सी बातें न लिख कर मुख्य२ बातों को संक्षेप में लिख देते हैं। आजकल इसी का अधिक प्रचार हो गया है और होता जा रहा है।

पुरानी-प्रथा के सरनामे इस प्रकार के होते हैं:—

सब से प्रथम किसी देवता या ईश्वर को नमःलिखते हैं; जैसे-श्री कृष्णायनमः रामायनमः। बड़ों को–सिद्ध श्री सरवोपमा विराजमान सकलगुण निधान श्री.........शुभस्थान.........योग्य लिखी.........से......................की नमस्कार, प्रणाम, दण्डवत, (आदि प्रणाम वाची शब्द)।

नाम से पहले पदवी, अवस्था, योग्यता अथवा केवल सम्मान के लिये ही 'विद्यानिधि,' 'वयोवृद्ध,' 'विद्वद्वृन्द-शिरोमणि,' 'परम-प्रतापान्वित' आदि एक वा कई विशेषण और जोड़ देते हैं।

पुरानी प्रथा में नाम के साथ श्री श्री श्री लिखने की और प्रथा है। पृथक् २ न लिख एक वार 'श्री' लिखकर उसके आगे जितनी श्री लिखनी योग्य हों उतने का अङ्क बना देते हैं; जैसे—श्री ५।

श्री लिखने का नियम यह है गुरू को ६, बड़ों को ५, शत्रु को ४,मित्र और बराबर वालों को ३,भृत्यको २,और स्त्री प्रभृति को १।

'अत्र कुशलम् तत्रास्तु' अथवा 'आपकी कृपा से,' 'भगवान् श्री कृष्णचन्द्र आनन्दकन्द की कृपा से' 'श्री गंगा जी की कृपा से,

यहां कुशल हैं'........'आपकी सदैव चाहते हैं'........'लिखकर 'आगे समाचार यह है', अथवा 'समाचार एक बंचना जी', 'अन्त में पत्र शीघ्र भेजिये', 'उत्तर शीघ्र दीजिए' तथा शुभम्भूयात्, शुभमस्तु, इति शुभम् और तिथि ।

छोटों और बराबर वालों को 'सिद्ध श्री' की जगह 'स्वस्ति श्री' तथा प्रणाम की जगह आशीर्वाद, अशीष, 'जै राम जी की' 'जै श्री कृष्ण जी की' 'जै गंगा जी की' तथा 'राम राम' आदि लिखते हैं ।

नवीन-प्रथा में देवता अथवा ईश्वर के प्रणाम के पीछे पत्र लिखने के काग़ज़ पर दाईं ओर कोने पर वह स्थान लिखते हैं जहां से पत्र लिखते हैं, फिर उसके ठीक नीचे तिथि वा तारीख़ ।

बड़ों को—'पूज्यपाद,' 'पूज्यचरणेषु,' 'महामहिम,' 'मान्यवर,' 'महा मान्यवर,' 'श्रद्धास्पद,' 'श्रीचरणेषु' प्रशस्ति में लिखकर अन्त में 'कृपापात्र,' 'कृपैषी,' 'प्रणत,' 'स्नेह-भाजन,' 'दास,' 'सेवक,' 'कृपाभिलाषी,' आदि लिख कर अपना नाम लिख देते हैं ।

बराबर वालों को—'प्रियवर,' 'प्रियमित्र,' 'प्रियबंधु' 'प्रियवर सनेही जी' 'प्रियवर विद्यार्थी जी' 'प्रियवर वर्मा जी' आदि उपनाम भी साथ में लिख देते हैं, कोई २ नाम भी 'प्रियवर सत्यव्रत' जी लिख देते हैं ।

नीचे आपका 'स्नेही' 'मित्र' या केवल 'आपका' वा 'भवदीय' लिख कर अपना नाम लिख देते हैं ।

छोटों को—'चिरंजीवि', 'आयुष्मान्' 'स्नेहास्पद' आदि और अन्त में 'हितैषी', 'शुभचिन्तक' आदि शब्द लिखते हैं ।

स्त्री अपने पति को—१ 'प्राणपति' 'प्राणनाथ' 'प्राणाधार' आदि पद लिखकर नीचे केवल 'दासी','सेविका' आदि लिखती है ।

सरनामा के पीछे—यदि पत्र का उत्तर हो तो "आपका पत्र मिला। आनन्द हुआ" "आपका पत्र पढ़ कर आनन्द हुआ"। पत्र पढ़ते ही आँखों से आनन्दाश्रुओं की धारा बह निकली। यदि कोई आश्चर्य की बात हो तो 'पत्र पढ़ते ही दंग रह गया।' 'आश्चर्य का पारावार न रहा।' और यदि कुछ चिन्ताजनक या दुःखद बात हुई तो 'पत्र को पढ़ कर बड़ी चिन्ता हुई।' 'दुःख का पारावार न रहा।' 'बहुत दुःख हुआ' आदि लिख कर पत्र के विषय से वाक्य रचना को मिला देते हैं।

पत्र स्पष्ट और सुंदर अक्षरों में लिखना चाहिये।

पता लिखना

'पता-लिखना' पत्र-लेखन-कला का मुख्य अङ्ग है। यों तो कुल पत्र ही स्पष्ट और सुंदर अक्षरों में लिखना चाहिये। परन्तु पता लिखने में बड़ी सावधानी रखनी चाहिये। पत्र लिख-कर लिफ़ाफ़े में बन्द कर देते हैं और लिफ़ाफ़े के ऊपर स्पष्ट अक्षरों में ठीक रीति से पता लिखते हैं। पुराने ढंग के लोग पत्र के ऊपर भी बहुत बड़ा सरनामा लिख देते हैं। परन्तु नाम के साथ पदवी आदि के अतिरिक्त और कुछ न लिखना चाहिये उसके नीचे स्थान। यदि पत्र डाक से भेजना है तो ज़िला और डाकख़ाना भी होना आवश्यक है। यदि कार्ड पर खुला हुआ पत्र हो तो उसके पीछे पता लिखना चाहिये।

श्रीयुत पं० रामजीलाल शर्मा हिन्दी-प्रेस, प्रयाग। U. P.	टिकट

श्रीयुत पं० लक्ष्मीधर वाजपेयी c/o साहित्य-कार्यालय, दारागंज, प्रयाग।	टिकट

मुख्य विषय

१—पत्र लिखने से पूर्व सोचना चाहिये कि हमें क्यों पत्र लिखना है। पत्र में जितनी बातें लिखनी हैं उनका संकेत एक काग़ज़ पर लिख लो।

२—यदि दूसरे के पत्र का उत्तर देना है देखो वह क्या २ बातें आपसे जानना चाहता है अथवा उसकी विना इच्छा के क्या २ बता देना चाहते हो। यह सब संकेत काग़ज़ पर लिख लो।

३—हरएक संकेत के भाव को सापेक्ष-वाक्यों में लिख कर पूरा करो।

४—हर बात को क्रमबद्ध लिखो, एक बात पूरी न करलो तब तक दूसरी प्रारंभ न करो। जो लोग विना संकेतों के एक दम लिखना प्रारंभ कर देते हैं-कोई बात जरा सी कहली, झट दूसरी शुरू करदी। वह भी पूरी न हो पाती कि पहली बात का एक अंश और याद आया-लिखने लगे। ऐसा करने से अपने मन की बात ठीक २ दूसरे के पास नहीं पहुँचा सकते हैं और पत्र पढ़ने वाला बड़ी अड़चन में पड़ जाता है।

५—पत्र की भाषा बनावटी नहीं होनी चाहिये। यथाशक्ति सरल वाक्यों में क्रम-बद्ध अपने भाव को प्रकाशित करते जाओ।

६—पत्र लिखते समय सोच लो कि जिसको तुम पत्र लिख रहे हो वह सामने उपस्थित है और तुम उनसे बातें करते जा रहे हो। ऐसा करने से तुम्हारी भाषा और क्रम स्वाभाविक रहेंगे।

७—पत्र समाप्त करने से पहले अपने संकेतों और पत्र को मिला लो। कोई आवश्यक बात छूट गई हो उसे पूरा कर लो। फिर उचित शब्दों के साथ उसे समाप्त करो।

८—पत्र में कोई उपदेश, कहानी या निबंध हो तो उसे पत्र में इस तरह जोड़ो जिससे यह न पता चले कि यह व्यर्थ ही आडम्बर लाद दिया है।

९—कहानी या लेख के विभाग-निबंध रचना के नियमानुसार-करके उसे पूरा करो। कोई उपदेश, नीति या सार निकलता हो उसे फिर इन शब्दों के साथ-'सारांश यह है' 'भाव यह है' 'तात्पर्य्य यह है' लिख फिर उस पर उसका ध्यान ले जाओ जिसको कि पत्र लिख रहे हो।

१०—उचित रीति से पत्र को समाप्त करदो।

पुरानी-प्रथा के पत्र लिखने का नमूना

सिद्धि श्री सर्वोपमा विराजमान सकल गुण निधान शुभस्थान बाड़ी विद्वद्वृन्दशिरोमणि पूज्य मामा जी को योग्य लिखी आगरे से रामरत्न, चन्द्रहंस, नारायणप्रसाद, श्यामाचरण, प्रभूदयाल तथा शिवशंकर का अनेक प्रणाम बंचना जी। अत्र कुशलम् तत्रास्तु। अपरंच हाल यह है कि पत्र आपका आया। समाचार ज्ञात हुए। आपने लिखा कि आम पक रहे हैं। इन दिनों में कोई आओ, अचार के लिये भी आम लेते जाना। सो विनय यह है आपकी आज्ञा का पालन करना ही चाहिये परन्तु कार्य्य बहुत जियादा है। एक पल की भी फुरसत नहीं होती। मौका मिलने पर जरूर कोई न कोई आवेगा..................... आपके दर्शनों की भी बड़ी इच्छा है। आपने कहा था कि श्रावण में हम दाऊजी के दर्शन करने जाँयगे तभी आगरे आँयगे। आशा है अवश्य पधारेंगे। पत्र भेजते रहिये। पत्र न आने से चिन्ता बढ़ जाती है। अधिक क्या लिखूं। इति शुभ मिती आषाढ़ शुक्ला पूर्णिमा सं० १९८२ विक्रमी।

श्रीयुत् पं० वासुदेव जी बाड़ी पो० बाड़ी, राज्य धौलपुर।	टिकट

पिता, गुरु, मामा आदि पूज्य लोगों का पत्र के भीतर नाम नहीं देते।

नवीन प्रथा के पत्र का नमूना

श्रीयुत वर्मा जी,

बहुत दिन से आपका कोई पत्र नहीं मिला। न मैंने ही कोई पत्र लिखा। नहीं मालूम था सांसारिक पचड़ों में फँस कर हम लोग एक दूसरे से इतने बिलग हो जाँयगे। वह दिन क्या हुए! उस समय आज की दशा की कल्पना भी नहीं की जाती थी। ....बाद तो आपसे मिलने की बड़ी प्रबल इच्छा हुई। वह अभी तक फलवती नहीं हुई। सांसारिक झगड़ों से अवकाश मिलते ही कभी २ दिन में एक दो बार अवश्य आपका स्मरण हो आता है। घण्टों तक अनुताप की वेदना बनी रहती है। समुद्र की उत्ताल-तरंगों में पड़े हुए तिनके की भाँति, वायु के थपेड़ों से अनिच्छित दिशाओं में बहता-फिरता हूँ। बहुतेरा सोचा कि इन्हीं लहरों में किसी समय उस तट पर भी पहुँच जाऊँ किन्तु "दरिद्राणां मनोरथा:" वाली कहावत चरितार्थ हुई। स्थिरता आते ही सेवा में उपस्थित हूँगा, पिछली शिथिलताओं पर प्रायश्चित्त करूंगा। अधिक क्या लिखूं।

आपका वही—

रामरत्न

श्रीयुत बा० वृन्दालाल वर्मा बी. ए. एल. एल. बी. वकील हाईकोर्ट झाँसी	टिकट

अभ्यास।

१—अपने भाई को एक पत्र लिखो जिसमें तुमने कोई मेला देखा हो उसका वर्णन हो।

२—अपने मित्र को एक पत्र लिखो जिसमें किसी विवाह में सम्मिलित होने की चरचा हो।

३—अख़बार के सम्पादक को एक पत्र लिखो जिसमें आपके शहर का कोई समाचार छपने के लिये हो।

४—अपनी मा को एक पत्र लिखो जिसमें—बोर्डिङ्ग में तुम्हारी रहन-सहन का वर्णन हो।

५—अपने पिता को एक पत्र लिखो जिसमें परीक्षा में पास हो जाने की चर्चा हो।

६—अपने किसी साथी को बालचर (बाय-स्काऊट्स) दल में शामिल होने की उत्तेजना हो।

७—अपनी छोटी बहिन को 'पाक-विद्या' नामक पुस्तक भेजी जाय, उसके साथ जो पत्र भेजोगे उसका विषय लिखो।

८—नीचे लिखे आशय वाले पत्रों का उत्तर लिखो:—

(१) किसी विवाह में सम्मिलित न होने की शिकायत आई हो।

(२) किसी को पढ़ने को माँगी हुई पुस्तक को ठीक समय पर न देने की शिकायत हो।

(३) उधार लिये रुपये के तकाज़े में रुपया भेजने के साथ चिट्ठी का नमूना।

(४) हेडमास्टर के पूछने पर स्कूल से अनुपस्थित रहने का कारण।

षष्ठम अध्याय।

प्रबन्ध-रचना का प्रारम्भिक अभ्यास

किसी भाषा के व्याकरण और मुहाविरे के अनुसार पद-योजना वा वाक्य-योजना को '**रचना**' कहते हैं। और जब किसी मुख्य विषय को लेकर हम क्रमशः वाक्य और अनुच्छेदों (पैराग्राफ़) द्वारा रचना करते हैं तो उसे '**प्रबन्ध-रचना**' कहते हैं। यह रचना दो प्रकार से होती है—एक वक्तृता से, दूसरी लेख द्वारा। इस पुस्तक में केवल 'लेखनी-वद्ध-रचना' पर ही विचार किया जाता है।

पिछले कई अध्यायों में रचना-संवन्धी-आनुषंगिक विषयों का वर्णन है। धीरे धीरे रचना का अभ्यास करके अन्त में कोई मनुष्य ऐसा लेखक बन जाय जो रचना-शास्त्र के नियमों के अनुसार पत्र, कहानी, लेख, पुस्तक आदि लिखने में पूर्ण सफलता प्राप्त करे। जब लेखक अपने कार्य में कुशल हो जाता है तो उसे किसी प्रकार की शिक्षा की आवश्यकता नहीं, किन्तु कुशलता प्राप्त करने के लिये ही उसे पूर्ण अभ्यास की आवश्यकता है। तभी वह अच्छे निबन्ध वगैरः लिख सकेगा। प्रबन्ध-रचना के प्रारंभिक अभ्यास के लिये कहानियों तथा पाठों का सार और स्वतंत्र कहानियाँ लिखने का अभ्यास होना चाहिये।

पाठों और कहानियों का सार

पाठ्य-पुस्तकों के पाठों व कहानियों का सार स्वतन्त्र भाषा में लिखने से निबंध-रचना का अच्छा अभ्यास होता है। पहले पाठ को ध्यान पूर्वक पढ़कर उस पर संकेत-वाक्य लिख लेना चाहिये और उन संकेत-वाक्यों को बढ़ा-कर स्वतन्त्र-रूप से दूसरी भाषा में उस पाठ को लिख लेना चाहिये; और यदि कोई कहानी या उपदेश पद्य में है तो उसका आशय समझ-कर उस पर संकेत-वाक्य बना लेना चाहिये; फिर गद्य में उसे लिख लेना चाहिये।

असत्य-भाषण का दुष्परिणाम।

एक लड़का भेड़ चराया करता था। उसका स्वभाव था कि वह कभी कभी खेल-खेल में ही भेड़िया! भेड़िया!! भेड़िया!!! चिल्ला उठता था। सैकड़ों बार उसने ऐसे ही चिल्ला चिल्ला कर आदमियों को चक्कर में डाला। क्योंकि जैसे वह चिल्लाता था मनुष्य अपना २ काम छोड़ कर सहायता देने को दौड़ आते थे। परन्तु जब उनको यह पता लग गया कि वह हँसी में झूठ-मूठ चिल्ला उठता है तो आना बन्द कर दिया। एक समय एक भेड़िया आही गया। बस लड़का बड़े ज़ोर ज़ोर से चिल्लाया, परन्तु कोई भी पहली तरह झूठ समझ-कर नहीं हिला-चिगा। अन्त में यह हुआ कि भेड़िये ने लड़के को मार दिया और कई भेड़ों को भी मार-कर खागया।

शिक्षा—झूठे का कोई विश्वास नहीं करता, चाहे वह सच ही बोले।

संकेत-वाक्य

(१) लड़के की क्या आदत थी— झूठ-मूठ भेड़िया २ चिल्लाता।
(२) उससे क्या होता था— लोग व्यर्थ परेशान होते थे।
(३) अन्त में क्या हुआ—लोगोंने उसकी बात पर विश्वास करना छोड़ दिया।
(४) कहानी का सार क्या है— झूठे का कोई विश्वास नहीं करता।

स्वतन्त्र भाषा में कहानी लिखना

भेड़-चराने-वाला एक लड़का जंगल में चिल्ला उठता था, भेड़िया आया! भेड़िया आया!! उस लड़के की चिल्लाहट सुन-कर लोगोंको दया आ जाती थी और उसे बचाने के लिये दौड़कर उसके पास पहुँचते थे। तब वह उनसे कहता—मैंने तो दिल्लगी की थी, यहाँ कोई भेड़िया नहीं आया। लोग उसकी बुद्धि पर रहम खाकर वापिस आते थे। उसके ऊपर से सब का विश्वास उठ गया। एक दिन सचमुच भेड़िया आही गया। वह व्याकुल

होकर बड़े ज़ोर से चिल्लाने लगा—"बचाओ ! बचाओ !! भेड़िया आ गया।" आख़िरकार "काठ की हाँडी दो बार नहीं चढ़ती" कोई उसकी रक्षा के लिये नहीं आया। भेड़िया ने उसको मार डाला और कई भेड़ों को चीर-फाड़-कर चट कर गया।

अभ्यास

१—नित्य अपनी पुस्तक के एक गद्य-पाठ को संकेत-वाक्यों में लिख कर अपनी भाषा में दुवारा लिखो और अध्यापक को दिखाओ।

२—पद्य-पाठों का भाव, संकेत-वाक्यों में लिख कर गद्य में उसका सरलार्थ लिखो।

कहानी-लेखन

कोई परिणाम वा विषय का सार देकर छोटी २ कहानी लिखने का अभ्यास कराना चाहिये। ऐसी कहानियों की भाषा बड़ी सरल होनी चाहिये। कहानियाँ लिखाने में कल्पना-शक्ति जागृत होती है।

हाथी में बदला लेने की बुद्धिः—

एक हाथी रोज़ तालाब में पानी पीने जाता था। रास्ते में एक दर्ज़ी की दूकान थी। दर्ज़ी हाथी को रोटी दिखाता तो हाथी खिड़की में सूँड़ डालकर उसे खा लेता था। एक दिन रोटी के बदले उसने सूँड़ में सुई चुभो दी। हाथी उधर से सूँड़ में कीचड़ भर लाया और चुपचाप खिड़की में सूंड डालकर उसके सब कपड़े बिगाड़ दिये।

लालची मारा जाता हैः—

एक कुत्ता मुँह में रोटी लिये-हुए नदी में तैरता जाता था। अपनी परछाई देख कर समझा कि दूसरा कुत्ता भी रोटी लिये-हुए जा रहा है। जैसे उसकी रोटी छीनने के लिये मुँह खोला, गाँठ का टुकड़ा भी चला गया। सच है—लालच में आदमी मारा जाता है।

कौए की बुद्धिमानी:—

एक कौआ प्यास के मारे मरा जाता था। एक पानी का घड़ा देखकर उस पर बैठ गया। परन्तु पानी तक उसकी चोंच नहीं पहुँची। उसने एक उपाय सोचा। बहुत से कंकड़ घड़े में डालना शुरू किया। जब पानी ऊपर चढ़ आया तो पेट भरकर पी लिया। यदि वह बुद्धिमानी से काम न लेता तो प्यासा मरा करता।

अभ्यास

१—एक लड़के की ऐसी कहानी बनाओ जिसका यह सार निकले— 'सांच न लागे आंच'।

२—एक ऐसे लड़के की कहानी लिखो 'जिसने धर्म पर जान देदी हो'।

३—एक ऐसे लड़के की कहानी बनाओ 'जो दूसरों की सेवा करके सब का प्यारा बन गया हो'।

४—एक ऐसी कहानी बनाओ 'जिसमें बहुत सी गायों ने जंगल में बाघ को घेर कर भगा दिया हो'।

५—एक ऐसी कहानी बनाओ 'जिसमें किसी धनी ने किसी देश के काम के लिये अपना सर्वस्व लगा दिया हो'।

६—एक ऐसी कहानी बनाओ 'जिसमें कोई गरीब लड़का अपनी मेहनत से पढ़ा हो और विलायत जाकर डाक्टर बना हो। फिर भारत में आकर बड़ा नाम पैदा किया हो'।

७—एक ऐसी कहानी बनाओ जिसमें एक आदमी विलायत गया, वहाँ से शादी कर लाया और अपने देश-धर्म-वालों से बिल्कुल अलग होगया।

८—एक ऐसी कहानी बनाओ जिसके अन्त में यह दोहा आ सके—

"गंगा-तट गिरवर गुहा, वहाँ कहा नहीं ठौर।
क्यों एते अपमान तें, खात पराये कौर॥"

———

सप्तम अध्याय।

निबन्ध-रचना का अभ्यास

विषय की अभिज्ञता

विविध-विषयों की निबन्ध-रचना के लिये विविध-विषयों की अभिज्ञता आवश्यक है। विषय की शुद्ध जानकारी विना, रचना का कैसा ही अभ्यासी हो, लेख नहीं लिख सकता। यह छोटी पुस्तक संसार-भर की बातों को न बता-कर, रचना का आदर्श और विषय-अभिज्ञता का मार्ग दिखा सकती है। विषय-अभिज्ञता के लिये पुस्तकाध्ययन, सत्संग, देशाटन, व्यवहार-कुशलता और अनुभव-शक्ति, निरीक्षणशक्ति, विचारशक्ति, कल्पनाशक्ति, विवेचनशक्ति का ठीक२ उपयोग आदि अनेक व्यापार हैं। देखो-भालो, सुनो-समझो, पढ़ो-लिखो, सोचो-विचारों; अनेक विषयों की अभिज्ञता प्राप्त होती जायगी। जाने हुए विषय को या विषय को जानकर निबन्ध-रचना की रीति के अनुसार रचना का अभ्यास करो।

प्रबंध-भेद

यों तो विषय-भेद से प्रत्येक निबंध एक दूसरे से पृथक् ही होता है; परन्तु सामान्यतः वर्णनात्मक, कथात्मक, व्याख्यात्मक और आलोचनात्मक, चार प्रकार के मोटे भेद हैं।

वर्णनात्मक

किसी वस्तु का सामान्यरूप में वर्णन करना—जिसे कि आँखों से देखा है वा सुना है, अथवा और किसी रीति से जाना है; जैसे:—'ताजमहल', 'नीम का पेड़', 'लोहा', 'आगरे का क़िला', 'झाँसी का रेलवे-स्टेशन', जनकपुर की शोभा', 'सीता जी की सुन्दरता', 'प्रयाग की प्रदर्शिनी', 'यमुना की छटा'।

कथात्मक

जिसमें किसी ऐतिहासिक वा सामयिक, पौराणिक अथवा

किसी काल्पनिक-जीवनचरित्र का वर्णन हो; जैसे:—हरिश्चन्द्र, शिवाजी, महात्मा गांधी, हक़ीक़त वा एक धर्मवीर।

अथवा किसी ऐतिहासिक, पौराणिक, सामयिक तथा काल्पनिक घटना का वर्णन हो; जैसे:—'हरिश्चन्द्र का काशी में बिकना', 'प्लासी का युद्ध-क्षेत्र' '१९१२ का देहली-दरबार', 'विसूवियस का भभकना' 'टूंडला में ट्रेनों की टक्कर', 'सं० १९५६ का अकाल'। उपाख्यान; जैसे:—'पंचतन्त्र की कहानी', 'राजा भोज का सपना'।

यदि घटना और चरित्र, इतिहास से सम्बंध रखते हैं तो उन निबंधों को ऐतिहासिक निबंध भी कह सकते हैं। किन्तु काल्पनिक घटना और चरित्रों के लिये इतिहास में स्थान नहीं मिलता, इसलिये ही घटनात्मक और चरित्रात्मक निबंधों का भेद-कर दिया गया है। इतिहास में घटना, चरित्र और वर्णन, तीनों का समावेश होता है।

व्याख्यात्मक

किसी अमूर्त्त-विषय; जैसे:—चिन्ता, आशा, क्रोध, धैर्य्य, दया आदि की व्याख्या की जाती है। वर्णनात्मक निबंध एक व्यक्ति के विषय में होता है; जैसे:—"आँधी चलना" यह व्याख्यात्मक है और "१२ जून की आँधी" वर्णनात्मक है। 'भूचाल आना' व्याख्यात्मक है। 'कल का भूचाल' वर्णनात्मक है। 'बाग़ लगाना' व्याख्यात्मक है और 'रामसहाय का बाग़' वर्णनात्मक है।

वैज्ञानिक-प्रबंध इसी भाग में आ जाते हैं। इन प्रबंधों में कल्पना और विचार को अधिक काम करना पड़ता है। किसी 'कहावत' तथा 'मूलसूत्र' की व्याख्या पर जो लेख हों, वह इसी विभाग में होते है।

आलोचनात्मक

सद्-असद्-विवेकिनी बुद्धि तथा युक्ति (तर्क) द्वारा सत्यासत्य का निर्णय, अच्छे बुरे का निर्णय, अनुकूल और प्रतिकूल सम्मतियों का निर्णय, सार-असार का निर्णय, जिन लेखों में

किया जाय, वह आलोचनात्मक, वा विवेचनात्मक अथवा तार्किक-प्रबन्ध कहलाते हैं। किसी ऐतिहासिक-घटना को तर्क पर तोल-कर उसके सत्यासत्य का निर्णय इसी भेद में आ जाता है। 'मनुष्य की खुराक क्या है'? 'रामायण से क्या लाभ है'? 'विवाह कब होना चाहिये?' 'मरना ही जीना है'! 'सृष्टि कैसे उत्पन्न होती है'? 'गाँव में रहना अच्छा है या शहर में' दो विरुद्ध विचारों तथा मिलते जुलते विचारों की तुलना भी इसी विभाग में होती है; जैसे—'स्वतंत्रता और स्वेच्छाचार वा स्वतंत्रता और परतंत्रता आदि यदि ये निबंध तर्क पर न तोले जाँय केवल व्याख्या ही रहे, तो वह व्याख्यात्मक ही कहलाएँगे।

मिश्रण

यह पृथक् २ भेद बतलाए गये हैं; किन्तु आप बड़े लेखकों के लेखों में दो, तीन या सम्पूर्ण भेदों का मिश्रण देखेंगे।

प्रबन्ध का ढांचा

किसी प्रकार का प्रबन्ध लिखना हो, तो लिखने से पहिले उसे उचित भागों में बाँट लेना चाहिये। इस प्रकार विषय को बाँटने से बड़े २ लेखकों को भी बड़ी सुविधा हो जाती है; पर नौसिखिया लेखक तो इसके बिना ठीक लिख ही नहीं सकते। ऐसा करने से लेखक सीमा के भीतर रहेगा और विषय के अङ्ग-प्रत्यङ्ग पर प्रकाश डाल सकेगा। ठीक समय के भीतर उचित पंक्ति और पृष्ठों में निबन्ध को पूरा कर देगा। और क्रम भी ठीक बैठ जायगा। लिखने से प्रथम लेख के विषय पर गहरी दृष्टि डाल कर उसके सम्बन्ध में जितनी बातें ध्यान में आवें, एक काग़ज़ पर नोट करलो और ठीक २ सिलसिले से जमा कर क्रम बाँधलो। किसी वस्तु के सम्बन्ध में मोटे मोटे तीन शीर्षक हो सकते हैं; दिखावट, गुण और उपयोग। जीव पर लिखना हो तो किस प्रकार का जीव है, उसका आकार और गठन, स्वभाव और भोजन, कहां पाया जाता है और उसका उपयोग। धीरज पर लिखना है तो, धीरज क्या है? किनमें होता है? धीरज का महत्त्व; यह गुण अभ्यास से

बढ़ सकता है। किसी के चरित्र के विभाग उसकी चरित्र की विशेषता के अनुसार पृथक् पृथक् हो सकते हैं; पर मोटी रीति से, जन्म, काल और माता-पिता, बाल्यावस्था (पालन, पोषण और शिक्षा), जीवन की मुख्य २ घटनाएं और मृत्यु।

विषय का प्रारंभ

जब तुम्हारे प्रबन्ध की सूची बन जाय तो देखो कि कितने समय और कितने स्थान में प्रबन्ध लिखना है। मान लिया एक घण्टे में लेख समाप्त करना है। उसमें से १५ मिनट तो सोचने और ढांचे को लिये गये। रहे ४५ मिनट, उनको तुम्हारे प्रबन्ध के ५ उपशीर्षक हैं—उन पर बाँटा तो प्रत्येक शीर्षक को ९ मिनट मिले। अतः सामान्यतः एक शीर्षक ९ मिनट में समाप्त होना चाहिये। उपशीर्षक के छोटे बड़े होने के अनुसार समय भी कम-बढ़ हो सकता है। रही स्थान की बात, मान लिया कि ५० पंक्ति में लेख पूरा करना है; एक शीर्षक में सामान्यतः १० पंक्ति होनी चाहियें। उपशीर्षक के छोटे बड़े होने के अनुसार एक उपशीर्षक न्यूनाधिक पंक्तियों में लिखा जा सकता है। इन सब बातों पर विचार करके लिखना आरम्भ करो। आरम्भ करने का कोई मुख्य नियम नहीं है। विभिन्न-लेखक एक ही लेख को विभिन्न प्रकार से आरम्भ करते हैं। कोई विषय की भूमिका बाँध कर, कोई परिभाषा कह कर, कोई किसी कहावत या कविवाक्य को कह कर, कोई विषय का सार कह कर और कोई घटना का मध्य पकड़ कर लेख आरम्भ कर देते हैं।

विस्तार

आरम्भ करने के पीछे सूची के प्रत्येक उपशीर्षक को लक्ष करके वाक्य-समूह या अनुच्छेद (पैराग्राफ़) की रचना होनी चाहिये। एक वाक्य-समूह के वाक्यों में पारस्परिक और आनु-पूर्व सम्बन्ध होना चाहिये। एक वाक्य-समूह में वर्णित भावों के लघुत्त्व गुरुत्त्व अनुसार अनुच्छेद छोटा और बड़ा होता है भाव-

गुरुत्त्व के कारण कभी २ एक भाव, एक से अधिक अनुच्छेदों में लिखा जाता है। इसी प्रकार सूची के हरएक उपशीर्षक पर अनुच्छेद रचना करो और जिस प्रकार एक अनुच्छेद के सब वाक्यों में पारस्परिक-आनुपूर्व-सम्बन्ध होता है, उसी भाँति एक विषय के सब अनुच्छेदों में पारस्परिक-आनुपूर्व-सम्बन्ध होता है। किसी भाव की पुष्टि में कोई कहावत, किसी कवि का वचन अथवा कोई उदाहरण लिखना उचित हो, लिख देना चाहिये। परन्तु उदाहरण संक्षिप्त हो और विषय से पूरा सम्बन्ध रखता हो।

समाप्ति

समाप्ति होने पर उसे यों ही एक दम मत छोड़ दो। संक्षेप में या तो अपने निबन्ध का सार कह दो; या कोई शिक्षा मिलती हो, वह दिखा दो; या कोई उससे अप्रत्यक्ष-परिणाम झलकता हो, स्पष्ट कर दो और एक बार फिर पढ़ जाओ। जहाँ २ पर विरामादि चिह्न छूट गये हों अथवा कोई व्याकरण और मुहाविरे की भूल हो गई हो, ठीक करलो !

शहद

प्रबन्ध की सूचीः—

क्या है ? कैसे इकट्ठा होता है ? स्वाद; रंग; कहाँ मिलता है ? गुण और उपयोग।

सूची का विकासः—

अ—फूलों का रस जिसे मधु-मक्खी इकट्ठा करती हैं, 'शहद' कहलाता है। मक्खियाँ फूलों पर बैठ कर रस को चूस लेती हैं; फिर अपने छत्तों में जमा करती रहती हैं। जब बहुत सा शहद जमा हो जाता है, तो बहेलिया अथवा और कोई मनुष्य छत्ते को तोड़ कर उसमें से शहद निचोड़ लेता है।

ब—मक्खियाँ, झाड़ी, पेड़ की खोंतर, डाली तथा घरों में कहीं अपना छत्ता रखती हैं।

स—शहद लाल रंग का बहने वाला लसदार पदार्थ है। ठंड से जम जाता है। स्वाद मीठा होता है।

द--लोग दूध या पानी में डाल कर पीते हैं। औषधि के साथ खाया जाता है।

चांदी

प्रबंध का सारः—

१ प्रकार—खनिज-पदार्थ।

२ दिखावट—सफ़ेद, चमकीली धातु है।

३ गुण—खिचने वाली, कुटने वाली, भारी, नरम, गलने वाली, अपारदर्शी है।

४ उपयोग—सिक्के, बर्तन बनते तथा इसकी भस्म को वैद्य दवा के काम में लाते हैं। इसके वर्क़ भी दवाई में काम आते हैं।

प्रबंध का विस्तारः—

चाँदी एक प्रकार की धातु है जो मिट्टी तथा दूसरी धातुओं के साथ मिली हुई खान से निकाली जाती है। यन्त्रों द्वारा इसे शुद्ध करते हैं।

कच्ची चाँदी का रंग मटमैला होता है; यन्त्रों और अग्नि के प्रयोग से शुद्ध कर लेते हैं, तो इसका रंग बहुत स्वच्छ, सफ़ेद और चमकीला निकल आता है।

पहिले कारीगर शुद्ध चाँदी की सलाई बना लेते हैं; फिर मज़बूत धातु के छेदों में डाल कर उसका तार खींचते हैं। पहिले बड़े छिद्र में, फिर छोटे छिद्र में, फिर उस से भी छोटे छिद्र में डाल कर खींचने से बहुत ही पतला तार बन जाता है।

कूटने से चाँदी टूटती नहीं है वरन् फैलती जाती है। यहाँ तक कि कूटते कूटते बहुत ही हलके वर्क़ बन जाते हैं। पानी की अपेक्षा यह धातु बहुत भारी होती है; तभी पानी में छोड़ते ही डूब जाती है। इसकी बहुत मोटी सलाई को हाथ से नवा लेते हैं; किन्तु लोहे का कड़ा हाथ से नहीं नबता।

ताँबे को मिला कर के एक लम्बी सलाख़ बनाते हैं, उससे छोटे २ टुकड़े काट कर यन्त्र की सहायता से सिक्के बनाते हैं।

वैद्य लोग अन्य औषधियों के सहारे से इसकी भस्म बना कर दवाओं में देते हैं। गहने और बर्तन बनाए जाते हैं।

इसी प्रकार ताँबा, सोना, राँगा, पारा आदि धातुओं पर लेख लिखो।

ताजमहल

सारः—

क्या है ? कहाँ है ? विस्तार, बनावट, उसका सौंदर्य्य।

विस्तारः—

युक्तप्रदेश का आगरा एक प्रसिद्ध नगर है। यह जमुना नदी के दाँए किनारे पर बसा हुआ है। आगरा-फ़ोर्ट-स्टेशन से दो मील पूर्व एक भव्य इमारत बनी हुई है। लोग इसे ताजमहल कहते हैं।

जमुना जी के किनारे एक मील लम्बे घेरे में यह स्थान बना हुआ है। बाहर लाल पत्थर का कोट है। आगरा फ़ोर्ट से मेकडानल पार्क में होकर जाते हैं, तो पहिले एक विशाल दरवाज़ा पड़ता है। दरवाज़े पर कुछ दूकानें हैं, जिनमें संगमरमर वा दूसरे सफ़ेद पत्थर तथा सेलखड़ी के बने हुए ताजमहल के नमूने, तश्तरी तथा अन्य चीज़ें, मिलती हैं। दरवाज़े के भीतर जाते हुए दोनों ओर कुछ दूकानें बनी हैं। शायद, यहाँ कभी बाज़ार लगता होगा। यह ताजमहल का बाहरी घेरा है। ऐसा ही एक दरवाज़ा दूसरी ओर भी है। घेरे के भीतर पहुँचते ही ताजमहल का मुख्य दरवाज़ा दृष्टि आता है, जिस पर कुरान की आयतें बड़ी कारीगरी से जड़ी हुई हैं। दरवाज़े के भीतर जाते ही, सामने सुन्दर भवन दृष्टि आता है; जिसकी अद्भुत-छटा देख कर मन में बड़ा आनन्द होता है। दरवाज़े से नीचे उतरते ही महल तक फ़व्वारों की एक फ़र्लांग से अधिक क़तार लगी हुई है। बीच में एक संगमरमर का चबूतरा है। इसके ऊपर एक छोटा सा तालाब है, जिसमें रंग-बिरंगी मछलियाँ तैरती रहती हैं। चारों ओर रंग-बिरंगे पुष्पों की क्यारियां लगी हुई हैं। हरी घास का मखमली फ़र्श बिछा हुआ है। सुपारी, इलाइची-आदि के बड़े २ वृक्ष हैं। साथ ही अशोक-वृक्ष बड़े सुहावने मालूम होते हैं।

जमुना के ठीक तट पर एक विस्तृत चबूतरा है, इसके चारों किनारों पर चार ऊँची ऊँची मीनारे हैं। इसके बीचों-बीच एक संगमरमर का विशाल भवन बना हुआ है। इसमें प्रवेश करते हुए शाहजहाँ और उसकी बीवी की नक़ली क़बरें नज़र आती हैं, जिन पर बहुत ही बढ़िया पत्थर का जड़ाऊ काम हो रहा है। जरा २ से फूलों में ३०-३० से भी अधिक पत्थर के टुकड़े जड़े हुए हैं। एक अंगुल स्थान भी बेल बूँटों से ख़ाली नहीं है। इन नक़ली क़बरों के ठीक नीचे ही शाहजहाँ और उसकी बीबी की असली क़बरें हैं। यहाँ बड़ा अंधकार रहता है। मौमवत्ती या लालटैन के सहारे से यहाँ का शान्त और अद्भुत दृश्य दिखाई देता है। इन क़बरों पर भी जड़ाऊ बेलबूटे बने हैं, जो अनेक रंग के क़ीमती पत्थरों से बनाए गए हैं। इमारत की बाहरी ओर संगमर्मर पर काले पत्थर के टुकड़े जड़े हुए हैं; उन पर जब चन्द्रमा का प्रकाश पड़ता है, तो तारों की भाँति चमकने लगते हैं। इसके ठीक नीचे ही जमुना जी बहती हुई दिखाई देती हैं। इसे शाहजहाँ ने अपने जीवन-काल में ही अपनी स्त्री मुमताज़-महल के लिये बनवाया था। मरने के पीछे शाहजहाँ की समाधि भी यहीं बनाई गई।

पक्षी विशेष के लिये

(१) नस्ल। (२) कहाँ पाया जाता है ? (३) रंग। (४) स्वभाव। (५) भोजन। (६) लाभ। (७) आयु। (८) विशेष विवरण।

किसी देश के निवासियों पर

(१) नस्ल। (२) आकार और गठन। (३) भोजन। (४) रीति, रिवाज और धर्म। (५) सामाजिक-स्थिति और शिक्षा। (६) जीवन-निर्वाह का ढंग। (७) उनकी सभ्यता पर विदेशी सभ्यता का प्रभाव। (८) विशेष विवरण।

मथुरा का विश्रान्त घाट

(१) बनावट। (२) यात्रियों का स्नान। (३) सायंकाल की आरती। (४) उस समय यमुना का दृश्य।

किसी स्थान विशेष पर यह शीर्षक होंगे

१—उस स्थान का नाम और स्थिति, ऐतिहासिक वर्णन।
२—जलवायु और आस पास की पैदावारी।
३—आकार, विस्तार, बड़ी २ सड़कें, जन-संख्या।
४—प्रबन्ध—शासन और न्याय।
५—शिक्षा का प्रबन्ध।
६—व्यापार और शिल्प।
७—ऐतिहासिक व सामयिक दर्शनीय वस्तुएँ।

आगरा

१—यह नगर युक्त-प्रदेश में यमुना नदी के किनार पर बसा हुआ है। पुराने समय में इसे अर्गलपुर कहते थे, मगर अकबर बादशाह ने इसका नाम अकबराबाद रक्खा। हिन्दू-राजत्त्व-काल का अधिक हाल नहीं मिलता। परन्तु अकबर ने दिल्ली छोड़कर आगरे को अपनी राजधानी बनाया और जमुना के किनारे लालपत्थर का एक बड़ा और दृढ़ क़िला बनवाया। तब से शाहजहाँ के राज्य-काल तक आगरा मुग़लों की राजधानी रहा।

२—यहाँ की जलवायु गर्म और खुश्क है। जमुना के खादर को छोड़ कर आस पास की शेष भूमि चौरस और उपजाऊ है; जो उत्तर की ओर गंगा की नहरों से और पश्चिम व दक्षिण की ओर जमुना की नहरों से सींची जाती है।

३—यह नगर १२ कोस के बीच में बसा हुआ है. जिसके चारों कोनों पर ४ महादेव के मन्दिर बने हुए हैं। कुछ टोले अलग २ बसे हुए हैं; परन्तु बीच में बहुत घनी बस्ती है। एक मुहल्ले से दूसरे तक सड़कें बनी हुई हैं। ठंडी सड़क बहुत चौड़ी है; जिस पर सायंकाल को लोग वायुसेवन के लिये घूमा करते हैं। इसके अतिरिक्त सिटी और मेकडानल पार्कों से भी बहुत आराम मिलता है। यहाँ की जन-संख्या एक लाख पचासी हजार के लगभग है।

४—कुल शहर का प्रबन्ध एक म्युनिसिपैलिटी के अधिकार में है। रोगियों के लिये कई औषधालय और चिकित्सालय बने हुए हैं। पानी के लिये यमुना से जल-कलों का प्रबन्ध किया गया है। प्रकाश के लिये जगह २ पर बिजली, गैस तथा सामान्य लैम्पों के खम्भे लगे हुए हैं। शासन—मजिस्ट्रेट और पुलिस के अधिकार में है। न्याय के लिये दीवानी व फ़ौजदारी की अदालतें हैं।

५—जगह २ पर प्रारम्भिक-शिक्षा के लिये पाठशालाएँ बनी हुई हैं। अनेक हाई-स्कूल; कालेज तथा छात्र-निवास बने हुए है, जिनमें बाहर के विद्यार्थी भी आकर शिक्षा पाते और रहते हैं। आगरा-कालेज युक्तप्रदेश का सब से पहला कालेज है। इसके अतिरिक्त सेंन्टजोंन्स और सेन्टपीटर्स कालेज भी हैं। शीघ्र ही आगरा यूनीवरिस्टी खुलने वाली है।

६—आगरे में "जी. आई. पी." "ई. आई. आर." "बी. बी. एण्ड. सी. आई. आर." और "आर. एम. आर." रेलवे द्वारा चारों ओर से माल आता है और जाता है। इससे पहिले जमुना के के द्वारा नावों पर व्यापार होता था। लाल पत्थर व संगमरमर की बनी चीज़ें बहुत दूर तक जाती हैं। दरी व गलीचे बहुत अच्छे बनते हैं।

७—बादशाही समय की इमारतों में ताजबीबी का रौज़ा, अकबर बादशाह की क़ब्र, क़िला, एतमादुद्दौला वा जुम्मा-मसजिद तथा आगरे से १२ कोस पश्चिम फ़तहपुर-सीकरी के महल देखने योग्य हैं, आदि।

८—मेकडानल पार्क में महारानी विक्टोरिया का स्मारक देखने योग्य है। यहाँ का अस्पताल बहुत बड़ा है। पागलखाना आगरे का क़िला (फोर्ट), अकबर का बनाया हुआ देखने योग्य है।

यह साधारण विवरण है इसे विस्तृत और भावमय, शब्दों में लिख सकते हैं।

जानवर ।

(१) आकार और उसका गठन । (२) स्वभाव और भोजन ।
(३) व्यवहार और लाभ । (४) कोई विशेष बात ।

घोड़ा ।

घोड़ा बिना सींग का चार पैर वाला जीव है, जो अपने बच्चे को दूध पिलाता है । यह देखने में बड़ा सुन्दर होता है। इसका शरीर दृढ़ और गठीला होता है। शरीर पर छोटे २ चमकदार बाल होते हैं । बड़ा घोड़ा, सुम के नीचे से लेकर अयालों तक, प्रायः ५ फ़ीट ऊँचा और कानों के बीच से लेकर पूँछ की जड़ तक ७ फ़ीट लम्बा होता है । छोटे घोड़े को टट्टू कहते हैं ।

घोड़े के कान तेज़ और आँखें बड़ी तथा दृष्टि प्रबल होती है। नथुने खुले हुए निरे मांस के बने होते हैं, इसमें हड्डी नाम को भी नहीं होती । सूंघने की शक्ति बड़ी प्रबल और टाँगें दृढ़ होती हैं । खुर चिरे हुए नहीं होते ।

२–घोड़ा बड़ा मिलनसार होता है। जंगल के घोड़े टोल बाँध कर रहते हैं । पालतू-दशा में और जानवरों से स्नेह कर लेते हैं। इनकी स्मरण-शक्ति बड़ी प्रबल होती है। अपने रक्षक और स्थान को कभी नहीं भूलते। यह बड़े स्वामिभक्त और बुद्धिमान होते हैं; इसके बहुत प्रमाण उपस्थित हैं। महाराना प्रताप के चेतक घोड़े ने अपने स्वामी को बचाने के लिये अपने प्राण तक दे दिये थे ।

यह केवल घास, जौ, चने आदि का भूसा तथा चना, जौ और मौंठ आदि का दाना खाता है। इसके होंठ इतने लचकदार होते हैं कि छोटी से छोटी घास को धरती से पकड़ कर कतर लेता है।

१०

३–जीवित घोड़ा सवारी के काम में आता है, गाड़ी और इक्कों में जोता जाता है। कहीं २ घोड़ों से हल भी चलाये जाते हैं। मृत्यु के पश्चात् इसका प्रत्येक भाग काम में आता है। बालों को गद्दी-तकियों में भरते हैं और बुरुश बनाये जाते हैं। खाल से जूतों के तले और घोड़ों का सामान तथा रगों और पुट्ठों से सरेस बनाते है। हड्डियों से चाकुओं के बेंटे, खुरों से बटन और डिबिया आदि बनाते हैं।

अभ्यास।

१-घोड़ा पर एक स्वतंत्र निबन्ध लिखो।

२-गाय, भैंस, बकरी, भेड़, गधा, खच्चर, बैल, हाथी, ऊँट, पर एक एक निबन्ध लिखो।

वृक्ष।

यदि किसी वृक्ष पर निबन्ध लिखना हो, तो:—

१-उसकी ऊँचाई और फैलाव।

२-कहाँ पाया जाता है।

३-उसकी जड़, पेड़ी, डाली, पत्ते, फूल, और फल का वर्णन।

४-उपयोग और लाभ।

५-कितनी आयु होती है।

६-यदि कोई विशेषता हो।

नीम का वृक्ष।

१—नीम का पेड़ चालीस फ़ीट के समीप ऊँचा होता है। इस की पत्तियाँ बड़ी ही सघन और छाया बहुत ही शीतल होती है। इसलिये गर्मी के दिनों में गाँव के मनुष्य नीम की छाया के नीचे बैठते व सोते हैं।

२—उत्तरी-भारतवर्ष के मैदानों में बहुत पाया जाता है।

३—पेड़ी-१२ फ़ीट तक लम्बी और १० फ़ीट तक मोटी होती है। ऊपर की छाल खुरदरी होती है। पेड़ में से बड़े २ गुद्दे और गुद्दों में से बड़ी २ टहनियाँ निकलती हैं।

पत्ते-लम्बे और नोकदार होते हैं, किनारों पर दोनों ओर दाँत से बने रहते हैं।

फूल-छोटे २ श्वेत रङ्ग के बहुत ही सुगन्धित होते हैं, जिस समय नीम फूलता है, अपनी चारों दिशाओं को सुगन्ध से भर देता है।

फल-इसका फल रूप और आकार में खिन्नी के बराबर होता है, जिसको निबौली कहते हैं।

४—इसकी छाया अरोग्य-वर्द्धक होती है। श्वास के साथ मनुष्य के फेफड़ों से जो हानिप्रद-वायु निकलती है, उसे खींचकर प्राणप्रद-वायु छोड़ता है। रुधिर-विकारों को नष्ट करने की इस में बड़ी शक्ति है। लोग इसका अर्क़ निकाल कर काम में लाते हैं। छाल को घिस कर फोड़ों-फुंसियों पर लगाते हैं। लकड़ियों को मकान के काम में लाते हैं और टहनियों की दाँतौन बनाते हैं।

अभ्यास।

१—नीम के वृक्ष पर अपनी भाषा में एक निबन्ध लिखो—

२—पीपल, तुलसी, वटवृक्ष, आम, अमरूद, पपीता, खजूर, बाँस और केला पर एक २ निबन्ध लिखो।

नोटः—वर्णक-प्रबन्धों में हर एक वस्तु के विभाग कर के इसी प्रकार लिख सकते हैं। वस्तुपाठों से इनमें बहुत सहायता मिल सकती है।

वर्णनात्मक-निबन्धों के कुछ ढांचों को बढ़ा कर ऊपर दिखाया गया है। कुछ नमूने के निबन्ध दिये हैं, कुछ, केवल ढाँचे। इसी प्रकार बहुत ढाँचे तैयार किये जा सकते हैं और उन पर रचना की जा सकती है

दक्षिणी-भारत का एक पहाड़ी-दृश्य ।

भूमण्डल में सबसे अधिक सुन्दर प्राकृतिक-दृश्य भारत के बर्फ़ से ढके हुए हिमालय पर्वत में है । हिमालय पर्वत की चोटी एवरेस्ट पृथ्वी की सब पर्वत-चोटियों से ऊंची है । भारत के पश्चिमी भाग में इतने ऊंचे पर्वत नहीं हैं, परन्तु तिस पर भी वहां प्राकृतिक शोभा की कमी नहीं है। यदि हम बम्बई से रेल-द्वारा जबलपुर की ओर चलें तो पहले पचास या साठ मील तक दोनों ओर मैदान दिखाई देते हैं। परन्तु इसके बाद हमें पश्चिमी-घाट के पर्वतों में घुसना पड़ता है । यह पर्वत-श्रेणी समुद्र के किनारे से लगभग तीस मील की दूरी पर है । इसकी शाखाएँ भारत के पश्चिमी किनारे के निकटवर्ती कोकन आदि प्रदेशों में फैली हुई हैं । इस पर्वत-श्रेणी के पूर्व की ओर ज़मीन की ऊँचाई क्रम २ से कम होती गई है, और उस पर से भीमा, कृष्णा, और गोदावरी आदि नदियाँ बही हैं । जब वर्षा-ऋतु में यात्री पश्चिमी-घाट के पर्वतों पर चढ़ते हैं तो, उन्हें भिन्न २ रंगों के बादलों की शोभा बहुत ही सुन्दर दिखाई देती है । उस समय पर्वत, हरे रंग की पत्तियों और घास से ढके रहते हैं और उस हरियाली के बीच में से, चमकीली चट्टानों से गिरते हुए और सूर्य की किरणों के पड़ने से चाँदी के समान चमकते हुए नालों तथा नदियों की शोभा, बड़ी मनोहारिणी होती है । परन्तु इस दृश्य की शोभा देखने का पूरा आनन्द रेल के यात्रियों को नहीं मिलता । क्योंकि रेल तो अपनी सड़क पर वेग से चली ही जाती है । कई यात्री इस दृश्य को देख-कर मुग्ध हो जाते हैं और उनका मन रेल से उतर कर पर्वत की शोभा को नेत्र-भर देखने के लिये ललचाने लगता है । यदि पश्चिमी-घाट के पर्वतों की प्राकृतिक-शोभा का पूरा आनंद लेना है तो रेल से उतर कर एक या दो पक्ष उन्हीं पर्वतों में रहना चाहिये और पर्वत के भिन्न २ स्थानों में

भ्रमण कर, नेत्रों को तृप्त करना चाहिये। इस काम के लिये इगतपुरी स्टेशन पर रेल से उतरना सब से अच्छा होगा। इगतपुरी से कुलसीबाई जो दक्षिण में सब से ऊंचा स्थान है, पास पड़ता है। और उसी के समीप ऐसी कई एक छोटी पर्वत शाखाएँ हैं, जो कि सुन्दरता के लिये प्रसिद्ध हैं। पास ही कई मरहठों के बनवाये क़िले हैं, जोकि अब टूटे पड़े हैं। यहाँ पर यात्री विश्राम कर सकते हैं! इन पर्वतों के चारों तरफ़ नीची ज़मीन दिखाई देती है और ऐसा प्रतीत होता है कि यह पर्वत पहले एक द्वीप-समुद्र से घिरा हुआ-रहा होगा। इन पर्वतों पर, अरब समुद्र से आई हुई ठंडी हवा बहुत ही अच्छी मालूम होती है और पर्वत पर चढ़ने की थकावट को दूर करती है। ऐसे स्थान पर स्वच्छ-वायु का सेवन करना स्वास्थ्य के लिये दुनियाँ भर की सब दवाइयों से अधिक लाभदायक है।

अभ्यास

१—"दक्षिण-भारत का एक पहाड़ी-दृश्य" इस विषय पर एक स्वतंत्र भाषा में निबंध लिखो।

२—काश्मीर, शिमला, नैनीताल, सोलन, ऋषीकेश, दार्जिलिङ्ग, वैद्यनाथ, बद्रीनाथ आदि स्थानों पर एक २ निबंध लिखो।

कथात्मक निबन्ध।

जीवन सूची

प्रत्येक जीवनचरित्रों की सूची एकसी नहीं बन सकती है, उनकी—चरित्रों की—विशेषता के अनुसार सूची भी विशेष प्रकार की होगी; जैसे इस पुस्तक में दिये हुए चरित्र से महात्मा गोखले और सम्राट् अशोक की सूची:—

महात्मा गोखले

१—जन्म और शिक्षा।
२—कार्य्यक्षेत्र में प्रवेश।
३—सार्वजनिक-सेवा।
४—विलायत-यात्रा।
५—भारत-सेवक-समिति।
६—मृत्यु।
७—उत्तराधिकारी।
८—फल।

सम्राट् अशोक

१—बालकाल।
२—स्वभाव।
३—राज-प्राप्ति।
४—मानसिक भावों का परिवर्तन
५—उसके धार्मिक-प्रयत्न।
६—उसके शिलालेख।
७—उत्तराधिकारी।

हरिश्चन्द्र

१—जन्म और कुल।
२—स्वप्न।
३—राज्य-त्याग।
४—काशी-प्रवेश।
५—राजा, रानी व पुत्र का बिकना।
६—विश्वामित्र की क्रूरता।
७—राजा का मरघट वास।
८—पुत्र की मृत्यु।
९—राजा का कफ़न माँगना।
१०—भगवान् का प्रगट होना।
११—उपसंहार।

घटना और उपाख्यानों की सूची भी उनकी विशेषता के अनुसार तैयार होती है।

हरिश्चन्द्र के चरित्र की मुख्य घटना; जैसे—"काशी में रोहिताश्व की मृत्यु"

१—पूजा के लिये फूल लेने जाना।
२—सर्प-दंश।
३—रानी का विलाप।
४—मरघट को प्रस्थान।
५—राजा की मानसिक अवस्था।
६—रानी से कफ़न माँगना।
७—रानी का अञ्चल फाड़ना।
८—भगवान् का आकर हाथ पकड़ना।
९—फल

सं० १६८१ का जल-विप्लव

१–उत्तरी-पश्चिमी-भारत में अधिक वर्षा।

२–गङ्गा यमुनादि में बाढ़ आना।

३–रोहतक, कानपुर, दिल्ली, हरद्वार, सहारनपुर, आगरा आदि की दुर्दशा

४–सेवा-समिति का कर्त्तव्य।

५–देशवासियों की सहायता।

विसूवियस ज्वालामुखी का फटना

१–उस देश की पूर्व समृद्धि।

२–धड़ाका।

३–दुर्दशा और हानि।

४–देशवासियों की सहायता।

काँगड़े का भूचाल

१–देश की पूर्व अवस्था।

२–धक्का।

३–दुर्दशा और हानि।

४–देशवासियों का कर्त्तव्य।

५–सरकारी सहायता।

१६५२ का अकाल

१–कारण (अनावृष्टि)।

२–प्रजा की अवस्था।

३—धनी लोगों का कर्त्तव्य।

४—सरकार की सहायता।

५—दुर्भिक्ष का परिणाम।

ताजमहल

१—कब, क्यों, किसने बनवाया।

२—कारीगर और पत्थर कहाँ से आये।

३—कितने दिन में, किस भाँति बना।

४—कितना व्यय हुआ।

५—भारतीय इतिहास में उसकी स्थिति।

दिल्ली में अशोक-स्तम्भ

१—किसने, क्यों, कब बनवाया।

२—दिल्ली कैसे आया।

३—उस पर खुदे हुए लेख।

४—इतिहास में उसकी स्थिति।

भगिनी निवेदिता

पूर्व कथन

भगिनी निवेदिता आयलैंड-निवासी एक पादरी की कन्या थीं। घर में इनका नाम 'मार्गरेट नोबुल' था।

माता-पिता के साधु-व्यवहार से बालिका नोबुल के हृदय में परोपकार का भाव उदय होगया।

एक दिन नोबुल के पिता ने घर पर एक भारतीय अतिथि को ठहराया। यह होनहार बालिका अतिथि के द्वारा भारत का वर्णन सुनकर, उसे देखने को उत्सुक हुई। साधु ने कहा कि यह "बालिका भारत की सेवा में अपना जीवन बितावेगी"। मरते-समय बालिका के पिता ने अपनी स्त्री से कहा कि यदि नोबुल भारत को जाना चाहे तो उसे सहायता देना।

शिक्षा

इसके माता-पिता बड़े चतुर और विद्वान् थे। उन्होंने लड़की को थोड़े ही समय में लिखा पढ़ा कर, चतुर करदिया। वह पढ़-कर स्वजाति में विद्या-प्रचार के लिये उद्योग करने लगी।

भारत यात्रा ।

जिन दिनों स्वामी विवेकानन्द अमेरिका में व्याख्यान देते थे, कुमारी नोबुल ने भी भारत के सम्बन्ध में उनसे बहुत कुछ सुना-समझा। जन्म-भर सेवा करने का निश्चय करके वह भारत को रवाना हुईं। यहाँ पर इनका नाम 'भगिनी निवेदिता' हुआ।

कार्यारम्भ

जब इन्होंने यहाँ की स्त्रियों की दुर्दशा देखी, तो हृदय में गहरी चोट लगी और जीवनपर्यंत उनकी दशा सुधारने का संकल्प किया। कलकत्ते के एक मुहल्ले में किराये पर मकान लेकर उसी में एक हिन्दू-महिला की भाँति रहने लगीं। पहले यहाँ की कूप-मंडूक हिन्दू-समाज ने इनसे घृणा की, पर जब इनका पवित्र आचार विचार देखा, तब धीरे २ इन पर श्रद्धा और विश्वास उत्पन्न हुआ।

जिस मुहल्ले में निवेदिता ठहरी थीं, बड़ा गंदा रहता था; मोरियाँ, नालियाँ, सड़ायँद से भरी रहती थीं। इन्होंने मुहल्ले वालों से सफ़ाई रखने को कहा। उन्होंने कह दिया कि हम भंगी नहीं हैं जो गलियां साफ़ करते फिरें। भगिनी ने स्वयं झाड़ू और पानी लेकर मोरियाँ साफ़ करना आरम्भ किया और सबको सफ़ाई के लाभ समझाये। यह उदाहरण देख-कर सब लोग सफ़ाई की ओर झुके और मुहल्ला साफ़ रहने लगा।

सेवा-समिति

हमारे देश की स्त्रियों की तो दशा ही और है। उनके जीवन का अमूल्य समय, "मैं-मैं तू-तू" ही में व्यतीत होता है। प्लेग के दिनों में भगिनी निवेदिता ने मुहल्ले की सफ़ाई रखने में लोगों की बड़ी मदद की। अपने हाथ से रोगियों की सेवा की। युवकों के साथ मिलकर इसी काम के लिये एक मंडली बनाई, जिसने प्राणों पर खेल-कर उस समय अच्छा काम किया।

अकाल पीड़ितों की सहायता

सन् १९०७ में बाक़रगंज में एक घोर अकाल पड़ा। देशभक्त लोगों के साथ मिल-कर वहां के अनाथ और दुखियों को बहुत सहायता दी। उनके लिये घर-घर भीख माँगी और अन्न-दान दिया। अन्य प्रकार की सेवा-सुश्रूषा करके उनकी प्राण रक्षा की। इस काम में इनको बड़े २ कष्ट भुगतने पड़े, परन्तु उनकी ज़रा भी परवाह नहीं की।

विधवाश्रम

बङ्गाली-विधवाओं के दुःखों को देख-कर इनके हृदय में भारी ठेस लगी। उनकी सहायता के लिये एक आश्रम बनाया, एक पाठशाला खोली, जिसमें छोटे २ बालकों को किण्डर-गार्टन से शिक्षा देने लगीं।

गुण और स्वभाव

आप बड़ी सुलेखिका थीं। व्याख्यान देने की शक्ति भी अच्छी थी। स्त्रियों के साथ उनके पतियों का असभ्य बर्ताव देख-कर उन्हें बहुत क्लेश होता था। लोगों को समझाया कि स्त्री, पुरुष के जीवन की एक सहायक है न कि दासी। स्त्रियों को भी विदुषी बना-कर पुंरुषों की सहायता करने के लिये प्रोत्साहित किया।

अहंकार इनको छू तक नहीं गया था। आप भक्ति और प्रेम की साक्षात मूर्त्ति थीं। स्वभाव बड़ा ही कोमल और सीधा था। आपने आजन्म कुमारी रह-कर भारत की सेवा की। लण्डन में सम्पूर्ण जातियों की जो महासभा हुई थी उसमें भगिनी निवेदिता ने भारत की भलाई के लिये, एक निबंध लिख कर भेजा था।

मृत्यु

आप काम करते-करते अचानक बीमार हुई और दार्जिलिङ्ग के पहाड़ पर स्वर्गयात्रा की। भारत और इंगलैंड में इनके लिये

बड़ा शोक मनाया गया। धन्य देवी! तुझे शतशः धन्य है!! वह कौनसा दिन होगा जब इस भारत में भी ऐसी देवियाँ उत्पन्न होकर देश, जाति और समाज का कल्याण करेंगी।

महात्मा गोखले

जन्म और शिक्षा

महात्मा गोखले का जन्म सन् १८६७ ई० में कोल्हापुर के निकट कागल ग्राम में हुआ था। इनके पिता सामान्य-स्थिति के ब्राह्मण थे। यह एफ. ए. तक कोल्हापुर ही में पढ़े थे। १८ वर्ष की आयु में बम्बई के एलफिन्स्टन कालेज से बी. ए. पास किया। आप की बुद्धि जितनी प्रखर, स्मरण-शक्ति जितनी तीव्र थी, वैसे ही आप अध्यवसायी भी थे।

कार्यक्षेत्र में प्रवेश

घर-वाले चाहते थे कि गोपालराव गोखले इञ्जीनियर होकर बहुत सा रुपया कमावें और हमारी बहुत दिनों की आशा पूरी हो। परन्तु कौलेज ही से आपके हृदय में देशभक्ति की ज्योति जगमगाने लगी थी। वहाँ से निकल कर आप दक्षिण-शिक्षा-समिति में सम्मिलित हो गये।

७५) रु० मासिक पर फ़र्गुसन कालेज में नौकरी करली। कुछ दिनों तक आप गणित एवं अंगरेज़ी के अध्यापक रहे, फिर इतिहास और अर्थशास्त्र पढ़ाते रहे। अन्त में उसी कालेज के प्रिंसिपल भी हो गये। छुट्टियों में शिक्षा-समिति की उन्नति के लिये उद्योग करते थे। एक बार आपने द्वार २ घूम-कर उसके लिये दो लाख रुपये माँगे। कालेज में तो आप अधिक परिश्रम करते ही थे, साथ ही साथ न्यायाधीश रानाडे के समीप बहुत दिनों

तक धर्मशास्त्र और राजनीति का अध्ययन किया। रानाडे ने इन्हें उपयुक्त-पात्र पाकर परिश्रम करने में किसी प्रकार की कसर नहीं की।

सार्वजनिक सेवा

उस समय पूने में एक सार्वजनिक-सभा थी, जिसके द्वारा एक त्रैमासिक-पत्र निकलता था। पहले इस पत्र के सम्पादक थे जस्टिस रानाडे। इस पत्र में सरकारी अर्थनीति की आलोचना रहती थी। सन् १८८७ में मि० गोखले इसके सम्पादक हुए। बड़ी योग्यता से काम किया। राजा और प्रजा में सद्भाव पैदा करने की चेष्टा की। साथ ही सरकारी भूलों की आलोचना भी हुई। थोड़े ही दिनों में मतभेद होने के कारण डेकन्स-सभा के नाम से एक नई सभा खुली, जिसके आप मंत्री चुने गये।

इसके सिवाय आप पूने के 'सुधारक' पत्र के भी सम्पादक रहे, जो ऐंगलो-मराठी में निकलता था। २२ वर्ष की आयु में प्रान्तिक-परिषद् में आपका ऐसा भाषण हुआ, जिसे सुन-कर मि० मुधोलकर ने इनके लिये एक दिन राष्ट्र-सभा के सभापति होने की भविष्यद्वाणी की थी। १७ वर्ष पीछे सन् १९०५ में यह बात सत्य हुई।

विलायत-यात्रा

आपने कई बार विलायत-यात्रा की। इंगलैण्ड में १८९७ ई० में वैलवी-कमीशन के सामने आपकी बड़ी महत्त्वपूर्ण गवाही हुई। सन् १९०५ में दूसरी बार विलायत गये। भारत की भलाई के लिये बहुत व्याख्यान दिये, जिनका इङ्गलैण्ड की जनता पर अच्छा प्रभाव पड़ा। १९०६ और १९०८ में फिर इङ्गलैण्ड गये, और लार्ड मार्ले से मिलकर बहुतसी हित की बातें कीं। अन्त में आप १९१३-१४ में पब्लिक-सर्विस कमीशन में भारत की

ओर से सम्मिलित हुए। सन् १९१२ में दक्षिणी-अफ्रीका जाकर भारतवासियों के दुःख दूर करने का यत्न किया, और उसमें बहुत कुछ सफलता हुई।

भारत-सेवक-समिति

अपने उद्देश्यों की सफलता का प्रयत्न सदैव जारी रखने के लिये आपने 'भारत-सेवक-समिति' स्थापित की। जिसके उच्च-शिक्षा प्राप्त अनेक आत्म-त्यागी योग्य युवक सभासद हैं, जो कि नाममात्र वेतन पर, अपना निर्वाह करके देश का काम करते हैं। अकालों तथा हरद्वार-कुंभ के समय, समिति की ओर से जो कार्य हुआ है, राजा और प्रजा दोनों उसका कीर्ति-गान करते हैं। अभी इस समिति को सहस्रों नहीं वरन् लाखों आत्मत्यागी युवकों की आवश्यकता दीख पड़ती है।

मृत्यु

इस प्रकार ४८ वर्ष की आयु तक महात्मा गोखले ने भारत-वर्ष की भलाई के लिये प्राणपन से चेष्टा की। काम की अधिकता से इनका स्वास्थ्य भी बहुत दिन से बिगड़ गया था परन्तु उसकी कुछ परवाह नहीं की। १९ फर्वरी सन् १९१५ ई० को दिन के १ बजे इनकी तबीयत बहुत बिगड़ गई। रात के १० बजे राजा, प्रजा और समिति की बात करते२ आपने इस असार संसार को छोड़, स्वर्गधाम की यात्रा की। देश भर में हाहाकार मच गया। राजा और प्रजा दोनों ही के शोक का पारावार न रहा। भारत के प्रत्येक नगर और संस्था ने उनकी मृत्यु पर हार्दिक-शोक तथा उनके कुटुम्ब के साथ समवेदना प्रगट की।

आप के उत्तराधिकारी

मृत्यु के समय आपकी दो अविवाहिता कन्याएँ थीं, जो उस समय १६ व २१ वर्ष की आयु में मैट्रिक और बी० ए० की परीक्षा

में सम्मिलित हुईं। बालिकाओं की सहायता करने के लिये लोगों ने लिखा पढ़ी की परन्तु आत्मत्याग की मूर्ति इन देवियों ने धन्यवाद-पूर्वक उसे अस्वीकार किया।

फल

जन्म लेना ऐसे ही पुरुषों का सार्थक है। अपना पेट तो कुत्ता भी भर लेता है।

अभ्यास

१—भगिनी निवेदिता और महात्मा गोखले के चरित्रों पर एक २ स्वतंत्र निबन्ध लिखो।

२—इनके जीवन से तुम्हें जो शिक्षाएँ मिलती हैं उन पर विस्तृत व्याख्या करो।

३—ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, राजा राममोहन राय, स्वामी रामतीर्थ, स्वामी विवेकानन्द पर एक २ निबन्ध लिखो।

दिल्ली में अशोक-स्तंभ

दिल्ली भारतवर्ष का बड़ा पुराना नगर है। उसके पुराने खँडहर और ध्वंसावशेष* अनेक राजकीय परिवर्त्तनों की याद दिलाते हैं। उसके एक २ खँडहर की एक एक ईंट इतिहास-प्रेमियों को—ऐतिहासिक खोज करने वालों को—बड़े महत्त्व की चीज़ हैं। आज हम वहीं के एक २२०० वर्ष पहले बने हुए स्तम्भ का उल्लेख करते हैं। यह स्तम्भ ईसा से कई शताब्दी पहले महाराज अशोक ने बनवाया था। दिल्ली के पास फ़ीरोजाबाद के कोटला दुर्ग में स्थापित है। महाराज अशोक ने इसकी स्थापना यहाँ नहीं की। फ़ीरोजशाह तुग़लक़ इसे अम्बाला ज़िले के शिवालिक

* पुराने मकानों के चिन्ह

पर्वत के पास तोपहर गाँव से लाया था। इसकी गोलाई नीचे ९$\frac{१}{४}$ फ़ीट और चोटी पर ६$\frac{१}{२}$ फ़ीट है। इसकी जड़ में एक चबूतरा है उससे स्तम्भ की ऊंचाई ३७ फ़ीट है, ऐसा विशाल-स्तम्भ इतनी दूर से

दिल्ली कैसे लाया गया

यह प्रश्न सब के जी में उठता है। ज़ियाउद्दीन वनी ने अपनी पुस्तक में लिखा है कि फ़ीरोज़शाह ने अपनी सेना और आस-पास की प्रजा को इकट्ठा किया। वहुत सी सेमल की रुई मँगा-कर, उसके बड़े २ मोटे गद्दे बनवाये। और बहुत सी रुई स्तम्भ से लपेटी गई। उसकी जड़ को धीरे २ खोद कर उस रुई पर गिरवा दिया और रुई अलग करा दी। फिर सरपता और चमड़ा लपेट कर कोई १० हज़ार आदमियों ने एक ४२ पहिये की गाड़ी में रक्खा और जमुना जी पर ले गये। वहां से बड़ी २ जुड़ी हुई नावों के द्वारा दिल्ली ले आये और कोटला नामी दुर्ग में उसे स्थापित किया।

स्तम्भ पर प्राचीन लेख

इस पर बौद्धों के चार अनुशासन (आज्ञाएँ) ईसा से ३०० वर्ष पहले की अंकित हैं। इसके सिवाय राजा विशालदेव चौहान के सं० १२०८ के दो और लेख हैं; परन्तु इतिहासज्ञ इन लेखों को अधिक महत्त्व नहीं देते हैं। इस स्तम्भ के चबूतरे से कोटला दुर्ग के आसपास के ध्वंश और खण्डहर तथा हिमायूं के मक़बरे आदि के मनोहर दृश्य दिखाई देते हैं।

अभ्यास

१—आगरा, भरतपुर और ग्वालियर के क़िलों पर एक२ निबंध लिखो।

२—पाटलिपुत्र (पटना) के ऐतिहासिक खँडहरों पर एक निबंध लिखो।

३—ताजमहल पर एक निबंध लिखो

अशोक

बौद्धों के कथनानुसार अशोक अपने पिता की मृत्यु के समय उज्जैन का शासक था। बौद्ध-लेखकों का मत है कि वह युवाकाल में बड़ा निर्दयी और कठोर-हृदय था। उसने राज्य-पद अपने अट्ठानवे भाइयों के मारने पर पाया। परन्तु ये बातें असत्य जान पड़ती हैं; क्योंकि अशोक के शिला-लेखों से ज्ञात होता है कि अशोक के भाई और बहिन उसके सम्राट् होने पर भी जीवित थे और अशोक को सदा इस बात की फ़िक्र रहती थी कि उनको कोई कष्ट न पहुँचे। अशोक के समय का सच्चा इतिहास शिलालेखों से ही जान सकते हैं।

राजतिलक होने के आठ साल बाद अशोक कलिंगराज से युद्ध करने गया। घोर युद्ध होने पर उसने शत्रुओं को हराया और उनका देश जीत लिया। परन्तु जो मनुष्यों का संहार उस में हुआ था उसे देख कर अशोक को अपने किये पर बहुत संताप हुआ। अशोक ने अपने लिखे हुए ' कलिंगयुद्ध ' के वर्णन में बहुत शोक प्रकट किया है। उसने फिर कभी युद्ध नहीं किया। जीवन का शेष काल अहिंसा और पवित्र आचरण सहित रह-कर विताया।

अशोक के मानसिक-भावों में परिवर्तन होने का कारण एक बौद्ध-संन्यासी का उपदेश था। इसी समय से अशोक ने बौद्धमत ग्रहण किया और फिर उस मत का पक्का अनुयायी हो गया। यहाँ तक कि वह बौद्ध भिक्षुका पीला कपड़ा पहिनने और संन्यासी बनने के लिये भी तैयार था।

अशोक ने अपनी राजधानी में बौद्ध-भिक्षुओं की एक सभा भी कराई। सभा का उद्देश्य बौद्धमत के भिन्न २ सम्प्रदायों को एक करना और बौद्धधर्म के ग्रन्थों की अशुद्धियाँ जो काल-वश

उन में आगई थीं उनका दूर करना था। अशोक ने मनुष्यों को सच्चरित्र बनाने के लिये अपने राज्य-भर में पत्थरों पर खुदे हुए उपदेश गढ़वाये। इन शिला-लेखों का अनुसन्धान गत सत्तर वर्ष में हुआ है और होता जाता है। ये शिला-लेख मैसूर, पंजाब, बम्बई और उड़ीसा में पाये जाते हैं। उनसे विदित होता है कि भारत के दक्षिण के कोने को छोड़ कर सारे देश में अशोक का साम्राज्य था।

अशोक के एक शिला-लेख में यह उपदेश है। "माता पिता की आज्ञा मानना चाहिये, प्राणियों पर दया करना चाहिये, सच बोलना चाहिये, गुरु की सेवा करना चाहिये, और कुटुम्बियों से सद्व्यवहार करना चाहिये"। प्रजा से इन उपदेशों का पालन कराने के लिये राज-कर्मचारी नियत थे। अशोक ने बौद्ध-मत का प्रचार कराने के लिये मिसर, यूनान, फ़ारस, तिब्बत और लंका आदि देशों में बौद्ध-भिक्षु भेजे थे, और उन्होंने बौद्ध-मत का खूब प्रचार किया। यहाँ तक कि कुछ समय के लिये बौद्ध-मत ही पृथ्वी का प्रधान-धर्म होगया था। यह सब अशोक के ही प्रयत्नों का फल था और इसी कारण से वह प्रसिद्ध सम्राटों और धर्म-प्रचारकों में गिने जाने योग्य है।

अभ्यास।

१—इस लेख पर संकेत-वाक्य बनाकर अपनी भाषा में एक निबंध लिखो।

२—चन्द्रगुप्त, विक्रमादित्य, पृथ्वीराज, बाबर, प्रताप, शिवाजी, अकबर, शाहजहाँ पर एक २ निबंध लिखो।

लिखा जा चुका है कि-विशेष चरित्र व विशेष-घटनाओं की सूची विशेष-रीति पर होती है, पर सामान्यतः किसी घटना की सूची इस प्रकार होती है:—

घटना

(१) कहाँ और किस समय हुई। (३) सामान्य वर्णन।
(२) कारण। (४) परिणाम।

व्याख्यात्मक निबंध।

किसी विषय के इस प्रकार खोल-कर वर्णन करने को जिस से साधारण मनुष्य भी उसके रहस्य को भलीभाँति समझ सके, व्याख्या कहते हैं। इस विभाग में भावात्मक-विषयों तथा व्यापक नियमों की व्याख्या होती है अथवा किन्हीं सिद्धान्तों का स्पष्टीकरण होता है। व्याख्यात्मक निबंधों को प्रायः परिभाषा से प्रारम्भ करते हैं। उसकी विशेषताओं की क्रमशः व्याख्या और आवश्यकतानुसार उदाहरणों से उसे पुष्ट करते हैं। बहुत से विषय तो ऐसे हैं कि बिना उदाहरणों के उनकी व्याख्या पूर्ण हो ही नहीं सकती; जैसेः—किसी गणित वा व्याकरण के नियमों की व्याख्या वा कोई भूगोल आदि की परिभाषा, आदि।

श्रावणी-पूर्णिमा और रक्षा-बन्धन

श्रावण-महीने की अन्तिम तिथि, श्रावणी कहलाती है; इस दिन प्रायः श्रवण-नक्षत्र होता है।

यों तो चारों बड़े त्यौहार समस्त हिन्दू-जाति के हैं, परन्तु मुख्य कर श्रावणी ब्राह्मणों की, विजयादशमी क्षत्रियों की, दिवाली वैश्यों की और होली शूद्रों की कही जाती है।

प्राचीन समय में ऋषि लोग एक विशाल यज्ञ करते थे, उस में राजा तथा अन्य यजमान लोग भी सम्मिलित होते थे। वेद के मन्त्रों द्वारा इस यज्ञ में द्विजातिमात्र यज्ञोपवीत धारण करते थे। यज्ञ के प्रारम्भ में आशीर्वादात्मक-मंत्र पढ़-कर हाथ में एक रंगीन-सूत्र बाँधते थे।

धीरे-धीरे ब्राह्मणों की अवनति हुई। वह एक २ पैसे के लोभ से द्वार २, घर २ जाकर एक रंगीन-सूत्र लोगों के हाथ में बाँधने लगे।

कालक्रम से यह लड़कियों का मुख्य त्यौहार हो गया। लड़कियाँ अपने भाई, चचा, भतीजे आदि सम्बन्धियों को भुजरियाँ या राखी देने लगीं। ऋषि-लोग यज्ञ के स्थान में जौ आदि अन्न बो देते थे और यज्ञ के अन्त में छोटे २ पौधों को सिर पर धारण करते थे, कदाचित् यह भुजरियाँ उसी का रूपान्तर हो।

मध्यम-काल में इस राखी ने बड़ी शक्ति धारण की। जिस लड़की ने जिसके हाथ में एक बार राखी बाँध दी, वह आजन्म के लिये भाई हो गया। ग्रामों में श्रावणी के दिन लड़कियाँ इकट्ठी होकर, गाँव के नाते से जो भाई, चचा, ताऊ भतीजे हैं, उनके राखी बाँधती हैं। सामाजिक-पवित्रता की रक्षा के लिये इसने बड़ा काम किया है। यवन-शासन-काल में कोई अत्याचारी, असमर्थ हिन्दू-महिला पर अत्याचार करने का विचार करता, तो वह किसी बलवान् राजपूत के पास राखी भेज कर उसे अपना भाई बनाती थी और वह अपनी धर्म-बहिन के सतीत्त्व की रक्षा में अपने प्राण तक दे देते थे। चित्तौड़ पर जब गुजरात के बादशाह बहादुरशाह ने चढ़ाई करने की तैयारी की, तो रानी करुणावती ने हिमायूँ बादशाह के पास राखी भेजी। हिमायूँ उन दिनों अफ़ग़ानों से लड़ने की तैयारी कर रहा था। सब को छोड़-छाड़, इस धर्म-बहिन की रक्षा के लिये चितौड़ दौड़ा। दूरी के कारण देर से पहुँचा। तब तक बहादुरशाह ने चित्तौड़ जीत ली। रानी २००० सहेलियों सहित, अग्नि में जल-मरी। हिमायूँ ने बहादुरशाह को मार-भगाया और रानी के पुत्र-अपने धर्म-भानजे-को चित्तौड़ की गद्दी फिर से दी।

सारांश यह है कि इस समय बाहरी अत्याचार तो कम दिखाई देते हैं, पर अभी सामाजिक-अत्याचारों की बड़ी भरमार है, जिनके कारण स्नेहलता आदि देवियों ने अपनी बहिनों की रक्षा के लिये, प्राणों की राखी भेज कर, नवयुवक भाइयों से सहायता की आशा की है। आशा है कि हमारे होनहार युवक प्राणपन से इन सामाजिक-अत्याचारों की जड़ खोदने की चेष्टा करेंगे।

अभ्यास।

१—अपनी भाषा में श्रावणी पर एक निबंध लिखो।

२—दशहरा, विजयादशमी, होली, दीपावली, रामनवमी, कृष्णाष्टमी, यम-द्वितीया, गणेश-चतुर्थी आदि पर एक २ निबंध लिखो।

मुद्रा-यन्त्र

भूमिका — यूरोप में सारे काम कलों से होते हैं। वह सब कलें अभी हमारे देश में नहीं आई हैं। परन्तु बहुत से काम यहाँ भी कलों की सहायता से किये जाते हैं। उसमें छापे की कलों का प्रचार बहुतायत से हो रहा है। हर-एक ज़िले में एक दो अथवा उससे भी अधिक छापेख़ाने खुल गये हैं। मनुष्य के बनाये हुए बहुत से शिल्प-यन्त्रों में 'मुद्रा-यन्त्र' के तुल्य उपकार करने वाला और कोई नहीं है।

सृष्टि और क्रमोन्नति — ईसा की नवीं शताब्दी के अन्त में पहले-पहल चीन-देश में छापे की कल का आविष्कार हुआ। उस समय काठ के पटे पर अक्षर खोद कर, छापे का काम लिया गया। इस समय यूरोप में इस विषय की नई सृष्टि हुई है सन् १८३६ और १८३९ ई० के बीच में गर्टनवर्ग और कोस्टेर नामक दो आदमियोंने पृथक् २ छापे की विद्या का आविष्कार किया। वह यूरोप में

काठ के पटे पर बहुत से शब्द खोद कर, एक २ पृष्ठ छापने लगे। धीरे २ इस विद्या की बहुत उन्नति हुई।

भाफ की सहायता से छपना

ईसा की १५ वीं सदी में जर्मनी के एक विद्वान् ने धातु के अक्षर बना कर अच्छा नाम प्राप्त किया। बहुत दिनों पीछे स्टनहोपेर नामक एक नामी शिल्पी ने लोह-यन्त्र बना कर ज्ञान-प्रचारक-पथ को और विस्तृत कर दिया। १९ वीं शताब्दी के प्रारम्भ में इङ्गलैण्ड में भाफ की सहायता से चलने वाला मुद्रा-यन्त्र तैयार हुआ। इसमें प्रति घंटा १८०० काग़ज़ एक ओर छपने लगे। वैज्ञानिक-उन्नति के साथ मुद्रा-यन्त्र की भी यथेष्ट उन्नति होती गई।

बिजली से परिचालन

इस समय अनेक जगह बिजली की सहायता से छापे खाने चलते हैं; जिससे थोड़े ही समय में बहुत सा काम हो जाता है। अक्षर-ढालने के काम में भी वर्णनातीत उन्नति हो गई है।

अद्भुत उन्नति

वर्त्तमान समय में इस विद्या की उन्नति सुन-कर हमारे देश के लोगों को अवश्य आश्चर्य होगा। किसी-किसी यन्त्रालय में १५ पृष्ठ वाले विख्यात संवाद-पत्रकी ५५००० कापी १ घंटे में छप जाती हैं।

उपकार

पहिले किसी विषय के प्रचार के लिये हस्त-लिखित पुस्तकों से काम लिया जाता था। इसमें परिश्रम और व्यय बहुत होता था और काम कम। ५० वर्ष से अधिक समय में एक बड़ी पुस्तक कठिनता से लिखी जाती थी और सौ वर्ष में भी समाज में उसका प्रचार होना कठिन काम था। परन्तु इस परमोपकारी यन्त्र की सहायता से, थोड़े ही दिनों में जो ज्ञान और धर्म का प्रचार हुआ, अकथनीय है। दो महीने नहीं बीतने पाते कि, भूमण्डल के एक प्रान्त में छपने वाली पुस्तकें दूसरे प्रान्त में पहुँच जाती हैं। कोई नया आविष्कार, नया तत्त्व और नई बात

किसी विद्वान् ने निकाली कि शीघ्र ही दूसरे देश के पंडितों के सामने आ जाती है। राज्य के सब प्रकार के समाचार शीघ्र ही प्रजा के सामने आ जाते हैं। रात्रि की घटनाएँ रात्रि ही में मुद्रित होकर, सवेरे सर्व-साधारण के हाथ में पहुँच जाती हैं। वास्तव में इस यंत्र से संसार को बहुत लाभ पहुँचा है। भूमण्डल पर ज्ञान और शिक्षा के विस्तार का प्रधान सहायक है। धर्म और नीति के प्रचार में इसी का सहारा है। मनुष्यों के सुख-स्वच्छन्दता का प्रधान कारण है। सच बात तो यह है कि, इस कला के उपकार गिनाने में "गिरा अनयन नयन बिनु बानी" कहना पड़ता है।

अभ्यास

१—मुद्रा-यन्त्र पर एक निबंध स्वतंत्र रीति से लिखो।

२—'चरखा और करघा' पर एक निबंध लिखो।

३—मिल द्वारा सूत कातने और वस्त्र बुनने पर एक निबंध लिखो।

४—एक निबंध लिखो जिसमें 'हस्त-शिल्प-कौशल और 'यन्त्र-शिल्प-कौशल' की तुलना हो।

५—पृथक् २ व्याख्या करोः—

अ—यान्त्रिक-ज्ञान (रेल, मोटर, हवाई जहाज आदि) से देश की परिस्थित पर प्रभाव।

ब—विज्ञान से शासन कार्य में सुविधाएँ।

नहर

नहरों की आवश्यकता

पाश्चात्य-शिक्षा और सभ्यता से हमारा सम्बन्ध होने पर यहाँ भी बहुत से यान्त्रिक-सुधार हुए हैं। इनसे राज-कार्यों में बड़ी उन्नति हुई है। शिक्षा आदि के प्रचार से लोगों को अपनी हीनता का पता चलता जाता है और वे अनेक प्रकार के सुधारों के लिये प्रयत्न कर रहे हैं। भारतीय-जनता का अधिकांश भाग खेती से अपना निर्वाह करता है। अब कृषि

की उन्नति के लिये भी प्रयत्न हो रहे हैं। खेती के मुख्य आधार-जलाशय हैं। जिस वर्ष पानी नहीं बरसता, खेती का काम बिलकुल नहीं होता। अन्न की मँहगी हो जाती है। लाखों आदमी भूख से तड़फ-तड़फ-कर मर जाते हैं। चारे और पानी के अभाव से करोड़ों उपयोगी पशुओं का प्राण-नाश हो जाता है। इन डरों के मिटाने के लिये नहरों, तालावों और झीलों के बनवाने की बड़ी ज़रूरत है।

नहरों से लाभ — अकाल का भय दूर होजाता है, खेती में बहुत कुछ उन्नति हो जाती है। अनेक प्रकार की चीजें—अन्न, तरकारी, घास, लकड़ी तथा फल आदि पैदा होने लगते हैं। पशुओं को जल तथा तृण का अकाल नहीं होता। नहरों के द्वारा यात्रा तथा व्यापार में बड़ी सहायता मिली है। नावों पर चढ़ा-कर, एक स्थान से दूसरे स्थान पर माल ले जा सकते हैं और यात्रा कर सकते हैं। सरकार को बहुत सा रुपया जल-कर से मिल जाता है और करोड़ों रुपये की लकड़ी तैयार हो जाती है। हज़ारों बीघा ज़मीन जो बंजर पड़ी रहती है, उपजाऊ हो जाती है।

नहरों का प्रचार और उनकी उन्नति — सब से पहिले फ़ीरोजशाह तुग़लक ने हरद्वार के पास गंगा जी से एक नहर निकाली थी। बहुत दिनों तक वह बुरी अवस्था में पड़ी रही। पीछे से अंगरेज़ों ने उसे ठीक किया। इसके सिवाय सतलज आदि पंजाब की नदियों तथा गंगा, यमुना और उनकी सहायक नदियों से, उत्तरी हिन्दुस्तान में बहुत सी नहरें बनाई गई हैं। इसी प्रकार दक्षिण में भी झीलों तथा नदियों से नहरें बनाई गई हैं; परन्तु जिस देश में २५ करोड़ के लगभग किसान बसते हों वहाँ १०–२० नहरों से पूरा थोड़ा ही पड़ सकता है,

नदी, झील तथा बहुत बड़े २ बन्ध बना कर उनसे नहरें निकालनी चाहियें।

अभ्यास

१—नहर-विभाग पर एक स्वतंत्र निबंध लिखो।

२—रेल, तार, डाक-विभाग आदि पर एक २ स्वतंत्र निबंध लिखो।

३—कोई बंध बाँध-कर सिंचाई का प्रबंध किस प्रकार करना चाहिये, इस पर एक लेख लिखो।

मा-बाप की आज्ञा मानना

मा-बाप ने जन्म दिया, उस दिन से हमारे लिये उन्होंने अनेक प्रकार के कष्ट उठाये। जिस समय जन्म हुआ हम उस समय सब प्रकार असमर्थ थे। मा ने दूध पिला-कर पाला-पोषा और बड़ा किया। कुछ बड़ा होने पर खाना-पीना सिखलाया। मा गीले में सोई, हमें सूखे में सुलाया। हमारी बीमारी के डर से वह अपना स्वादिष्ट भोजन नहीं करती थी और कड़ुवी २ औषधि पीती थी। मा-बाप ने बोलना सिखाया और पढ़ा-लिखा-कर चतुर किया। कैसा ही बुरा बालक हो, मा बुरा नहीं कहती। कहावत है—"पूत कपूत हो पर माता कुमाता नहीं होती"। परन्तु क्या पुत्रों को कपूत होना उचित है ? जिस माता ने अनेक कष्ट उठाये उसके प्रति नमकहरामी करके घोर पाप से बच सकते हैं ? मा-बाप की आज्ञा मानने में, सन्तान कोई विशेष बात नहीं करती। मा-बाप के उपकारों का बदला हम जन्म-भर नहीं दे सकते।

काशी, प्रयाग, जगन्नाथ, हरद्वार, मक्का आदि तीर्थों से बढ़-कर घर बैठे मा-बाप की आज्ञा-पालन करना है।

मा-बाप की आज्ञा मानना उत्तम धर्म है।

उपर्युक्त यात्रा में कष्ट उठाना पड़ता है, व्यय होता है; परन्तु मा-बाप की सेवा-रूपी यात्रा में यह नहीं होता। संसार के समस्त धर्मों में मा-बाप की सेवा करना सर्वोपरि-धर्म्म समझा गया है। अधिक से अधिक पुण्य इसी का है। श्रवण की पितृभक्ति का उदाहरण पुराणों में प्रसिद्ध है।

उसकी ही तरह मा-बाप की भक्ति सब को करनी चाहिये। उसके मा-बाप अन्धे थे, उसने उनकी आज्ञानुसार भारत के भिन्न २ स्थानों के ६८ तीर्थों की यात्रा कामरि में बैठाल-कर कराई थी।

मा-बाप की आज्ञा उल्लंघन करना पाप है

मा-बाप के इतने अधिक गुणों को न विचार-कर, जो मनुष्य अपने मा-बाप का सामना करता है और उनकी वृद्धावस्था में उनको दुःख देता है, उसकी कितनी अधिक मूर्खता, कितनी निर्दयता और कितनी अधिकता है। हे प्रभु! ऐसे प्राणी को पत्थर बनाया होता तो, कैसा अच्छा होता! वह कपड़े धोने के काम में आता और दूसरों के बिगाड़ने का आदर्श न होता। शिक्षित मनुष्यों को मा-बाप के प्रति विशेष भक्तिमान होना चाहिये। वयःप्राप्त मनुष्यों को मा-बाप की आज्ञा-पालन करना चाहिये। उनका पुत्र उनके दृष्टान्त से उनका अनुकरण करे, जिससे पिछली अवस्था में वह दुःख न पावे; परन्तु धर्म तथा कर्त्तव्यपालन के विरुद्ध आज्ञा का पालन न करना चाहिये।

अभ्यास

१—अपनी भाषा में निबंध लिखो, जिसमें वृद्ध और पूज्य-सम्बन्धियों के सम्बंध में कैसा व्यवहार होना चाहिये—इसकी चर्चा हो।

२—मित्र तथा समाज के अन्य व्यक्तियों के साथ हमारे क्या कर्त्तव्य हैं?

३—विद्यार्थियों और शिक्षकों के साथ कैसा व्यवहार होना चाहिये।

४—हम किस प्रकार की रहन-सहन बनावें, जिससे लोकप्रिय होसकें।

५—सभ्यता पर एक निबंध लिखो जिसमें इन संकेत-वाक्यों को बढ़ाया गया हो—

'व्युत्पत्ति और व्याख्या' 'संसार में इस गुण की आवश्यकता' 'सभ्यता की भिन्न २ पहचान, 'सभ्यता ढोंग नहीं है' 'सभ्यता भिन्न २ देश व समाजों के कारण भिन्न २ होती हैं' 'सभ्यता से लाभ' 'सारांश और बोध।'

रामायण

१ रामायण का गौरव, २ रामायण का काम, ३ समाज का चित्र, ४ उसके चरित्रों से शिक्षा।

हिन्दू-समाज में रामायण का जो स्थान है, जैसी उसकी पूजा है, जैसी मान्यता है, दूसरे किसी ग्रंथ की नहीं। राजा से लेकर रंक तक, पंडित से लेकर सामान्य अक्षराभ्यासी तक, सब रामायण को पढ़ कर अपनी २ रुचि के अनुसार आनन्द प्राप्त करते हैं। हर जगह पंडितों के द्वारा उसकी कथा कहलाते हैं।

महात्मा तुलसीदास जी के समय में धार्मिक सम्प्रदायों में बहुत मतभेद बढ़ गया था। हर-एक सम्प्रदाय, एक दूसरे के मान्यदेवों की घोर निन्दा करते थे। आन्तरिक-कलह हिन्दू-समाज को बहुत ही कमज़ोर बना रहा था। तुलसीदास जी ने जनता के सामने यह आदर्श रक्खा—

"शिव बैरी मम दास कहावै, सो नर मोहि सपनेहु नहिं भावै।"

सामाजिक दशा का भी अच्छा चित्र खींचा है—

"ढोल गँवार सूद्र पसु नारी, ये सब ताड़न के अधिकारी।"
"नारि-स्वभाव सत्य कवि कहहीं, अवगुण आठ सदा उर रहहीं।"
"कोउ नृप होउ हमें का हानी, चेरी छाँड़ि न होउब रानी।"
आदि वाक्यों से उस समय की हिन्दू-समाज के भीतरी

रहस्यों का पता चलता है। भगवान् रामचन्द्र का चरित्र अक्षरशः अनुकरण करने योग्य है। भाई, भरत और लक्ष्मण से स्वार्थत्यागी होने चाहियें। राजा दशरथ के समान, प्राण और पुत्रों को देकर भी अपने वचनों का पालन करना चाहिये। कूबरी जैसी दुष्टा स्त्री, किस भाँति घर में फूट-डलवा-कर नाश करा देती है, दुष्टों और धूर्तों की वातों में आकर कैकेई जैसी बुद्धिमान स्त्री भी बहक जाती है। सती सीता का कैसा पवित्र चरित्र है। श्रीराम का विभीषण और सुग्रीव के साथ मित्रता करना राजनीति का अच्छा उदाहरण है।

कुमार्ग में चलने वालों तथा अपने भाइयों को सताने वालों को, वालि और रावण के चरित्र से पाठ लेना चाहिये। भगवान् रामचन्द्र का भीलिनी के हाथ से बेर खाना, भील के साथ घनिष्ठ मित्रता करना, रात दिन नीच-ऊंच की चिन्ता में रहने वालों को अच्छी शिक्षा देता है। इसके अतिरिक्त "ईश्वर अंश जीव अविनाशी" आदि वाक्यों का अभिप्राय है कि, किसी जीव के साथ में अत्याचार नहीं करना चाहिये, क्योंकि वह ईश्वर का अंश है। यदि मनुष्य माया (अज्ञानता) के पर्दे को हटा दे तो, वह ब्रह्म ही (समीपस्थ) हो सकता है। कहाँ तक गिनावें-वेदान्त, भक्ति, ज्ञान, धर्म, नीति, आचार, व्यवहार आदि सिखाने को, एक रामायण ही पर्याप्त है। जहाँ पर धर्म-शिक्षा देने का विधान हो, एक रामायण ही से उनका बहुत कुछ काम निकल सकता है।

अभ्यास।

१—इस रामायण के छोटे से लेख को बढ़ाकर बड़े आकार में लिखो !

२—सीता, कौशिला, सुमित्रा, केकई, भरत, लक्ष्मण, दशरथ, हनूमान पर पृथक् २ निबंध लिखो—

३—महाभारत की कथा का सार लिखो।

४—रामायण से क्या २ शिक्षाएं मिलती हैं, इन पर एक निबंध लिखो।

देशी-कारीगरी

प्राचीन काल में देश की कारीगरी

इतिहास देखने से ज्ञात होता है कि, किसी समय अपना देश विद्या और कला में, पृथ्वी के और देशों से, बहुत चढ़ा-बढ़ा था। यहाँ से बहुत सा माल, अरब, तुर्किस्तान और मिस्र होता हुआ, यूरोप जाता था। भाँति भाँति का सूती और रेशमी कपड़ा बनता था। आज भी सूरत का ज़री का काम, नागपुर के धोती जोड़े, ढाके की मलमल, बुरहानपुर का कलाबत्तू, बङ्गाली दुपट्टा, और काश्मीरी शालदुशाले, यहाँ की प्राचीन कारीगरी का गौरव दिखाते हैं।

अवनति का कारण।

अ—अपने देश के कारीगरों में अज्ञानता, आलस और निर्धनता होने के कारण, वह नवीन सभ्य-देशों के कारीगरों की बराबरी नहीं कर सके। समय की गति के साथ उन्होंने अपने विद्या, कला और हुनर में सुधार नहीं किया।

ब—यूरोप के लोग उद्योग, साहस और चतुराई में बढ़ गये। अपनी कारीगरी में उन्होंने बड़ा सुधार किया। अनेक प्रकार के यन्त्र बनाये। दूसरे देशों से कच्चा माल मँगा-कर यन्त्रों की सहायता से, सस्ता और साफ़ माल तैयार किया। उसके सामने हाथ से बना हुआ देशी माल, तेज़ पड़ा; उतनी सफ़ाई भी न दिखाई दी, इससे उसकी खपत कम हो गई।

देश में कला-कौशल की वृद्धि

अ—कला-विद्या की पुस्तकें अपनी भाषा में प्रकाशित करके सस्ते मूल्य पर बेचनी चाहियें। साथ ही साथ बड़े २ शहरों में आदर्श-कार्यालय खोलने चाहियें, जिनमें कारीगरों को कलों से काम करना सिखाया जाय।

ब-यूरोप, अमेरिका और जापान आदि में, काम सीखने के लिये, विद्यार्थी भेजे जायँ, वह लौट कर देशी कारीगरों को उसी ढंग पर काम करने के लिये तैयार करें।

स—धनी लोग देश में, दिया-सलाई, काग़ज़, सूती व ऊनी कपड़े, होल्डर, निब, कृषि-यंत्र आदि आवश्यकीय वस्तुओं के बनाने के लिये, कारख़ाने खोलें और सहकारी समितियाँ बनावें।

सारांश यह है कि, देशी कारीगरों की दशा को सुधारना ज़रूरी है। रुई, रेशम, सन और ऊन आदि पदार्थ यहाँ से यूरोप जाते हैं। वहाँ से कपड़ा बन कर यहाँ आता है। अगर वह यहीं बने तो, करोड़ों आदमियों की रोज़ी चले और देश में धन की बढ़ती हो। अकाल का डर कम हो जाय। इस समय दैवयोग से जर्मनी का माल भारत में नहीं आ सकता है; परन्तु अमेरिका और जापान कुल व्यौपारी-मैदान को हथिआने की कोशिश में हैं। हिन्दुस्तानियों को भी सचेत होने का मौक़ा हाथ से न जाने देना और भारत की समृद्धि के लिये तन-मन-धन लगा देना चाहिये।

अभ्यास।

१—इस लेख को पढ़कर एक स्वतंत्र लेख लिखो—

२—'स्वदेशी वस्तुओं का आदर करना चाहिये' इस बात पर २५ पंक्ति में सुन्दर भावपूर्ण रचना करो।

३—"देश में कला-कौशल की वृद्धि से अकाल का डर नहीं रहता", इस विषय पर एक छोटा सा निबंध लिखो।

फलों का आहार

"औषधियों का सामान्य गुण" यह है कि वह आँतों को ठीक रक्खे और अजीर्ण न होने दे। यदि अजीर्ण हो जाय तो उसे दूर करे। परन्तु औषधियों की अपेक्षा फल अधिक लाभ-दायक

हैं। यों तो सेव, नारंगी, नासपाती, केला, रसभरी, शहसूत और अनार में अजीर्ण दूर करने का गुण है ही; परन्तु अञ्जीर, अंगूर, खुवानी, किशमिश और खजूर में यह गुण बहुतायत से पाया जाता है।

फलों से हृदय को लाभ होता है।

हृदय का कार्य धीमा हो या उसमें गर्मी आगई हो तो फलों का नमक और खटाई उसे लाभ पहुँचाती है। फलों की चीनी को हृदय, आराम से पचा लेता है।

फल मेदे के रस को शुद्ध करते हैं

मेदे में भोजन पचाने वाला रस है, वह यदि दूषित हो जाय तो फल उसे शुद्ध कर देते हैं। फलों का हलका भोजन आठ-दश दिन में अजीर्ण दूर करता है। उबले हुए चावल और तले हुए सेव, अथवा दोभाग केले के गूदे में एक भाग मलाई मिला कर, बहुत ही लाभदायक है।

इन्द्रिय जुलाब।

नारंगी और ख़रबूज़े का रस, गुरदे का मैल दूर करके उसे बलवान बनाता है, और चित्त प्रसन्न करता है।

गठिया के रोगी को भी खट्टे फल लाभदायक हैं। जिसके शरीर में मांस खाने से जो रक्त-विकार उत्पन्न हो, उसे नीबू और तरबूज़ का अधिक व्यवहार करना चाहिये।

जो आलस्य से जीवन निर्वाह करते हैं, उनकी पाचनशक्ति निर्बल हो जाती है। आँतें ठीक काम नहीं करतीं। मल अच्छी तरह बाहर नहीं निकलता। अपरिपक्व भोजन शरीर में रह कर आमाशय में एक प्रकार का विष पैदा करता है। इससे भाँति २ के रोग पैदा होते हैं, तन्द्रा बढ़ जाती है। ऐसे रोगी को एक दो सप्ताह तक तले-हुए फल ख़ूब खाने चाहियें।

नारंगी से रक्त का विष दूर होता है और शरीर की कान्ति बढ़ती है।

रक्त की कमी फलों के आहार से दूर होती है। केला इस रोग के लिये विशेष उपकारी है।

यदि शरीर में मोटाई अधिक हो, तो ऐसे रोगी को फल अधिक देने चाहियें। नीबू और नारंगी आदि खट्टे फलों का रस पीना बहुत लाभदायक है। निर्बलता में अंगूर और पेचिश के रोग में खजूर और अन्जीर अधिक लाभ देते हैं।

ज़ैतून का तेल कमज़ोरी दूर करता है। काडलिवर-आयल के बदले इसका खाना बहुत ही उपयोगी है।

बच्चों को मांस व मिठाई न देकर फल ही देना चाहिये। फलों को वह पसन्द भी करते हैं।

जो मनुष्य भोजन के साथ नित्य फल खाता है, बहुत कम रोगी होता है। इनके भोजन से पाचन-शक्ति बढ़ती है, बल पहुँचता है, और शरीर के अन्य विकार दूर होकर वह पुष्ट होता है।

अभ्यास

१—फलों के आहार पर एक स्वतंत्र निबंध लिखो।

२—'अधिक औषधि सेवन से स्वास्थ्य नष्ट होता है', २० पंक्ति में इसकी व्याख्या करो।

३—'स्वास्थ्य और भोजन' इस पर संकेत-वाक्य लिखकर उन्हें बढ़ाओ।

४—इन वाक्यों की एक निबन्ध में व्याख्या करो—

अ—मनुष्य-जीवन के लिये जल, वायु और भोजन आवश्यक है।

ब—स्वास्व-रक्षा के लिये व्यायाम आवश्यक है।

स—व्यायाम के प्रकार और उनसे विशेष लाभ।

विद्या

जिसके द्वारा कुछ जाना जाता है उसे विद्या कहते हैं। "विद्याददाति विनयम् विनयात् याति पात्रताम्"। विद्या ही से मनुष्य बनता है। अन्धा जिस प्रकार दिन-रात के भेद को नहीं

जान सकता है, विद्याहीन मनुष्य भी उसी प्रकार, नीति और कर्त्तव्य को नहीं जान सकता। ज्ञान का अभाव ही इसका कारण है। ज्ञान किसी के साथ २ जन्म नहीं लेता, विद्या-शिक्षा से ही ज्ञान मिलता है। अभ्यास से शिक्षा की उन्नति होती है। उन्नति से ज्ञान का क्रम-विकास होता है। क्रम-विकास का परिणाम मनुष्य को विद्वान् बनाता है। विद्वान् का आदर राजा से अधिक होता है, "स्वदेशे पूज्यते राजा विद्वान् सर्वत्र पूज्यते"। राजा भी विद्वान् का सम्मान करता है।

विषयों के अनुसार विद्या के कई भेद हैं—कृषि, शिल्प, नीति, आचार, विज्ञान, आदि २।

पुस्तक बिना पढ़े विद्या नहीं आती है, यह बात झूठ है। बिना पुस्तक पढ़े भी मनुष्य विद्वान् हो सकता है। पुस्तक से शिक्षा में सहायता मिलती है, क्योंकि विद्या भाषा-मयी है। बिना भाषा के हम अपने भावों को, न तो दूसरों पर प्रगट कर सकते हैं न दूसरों के भावों को समझ सकते हैं। अच्छी भाषा सीखने के लिये, प्रारम्भ से ही पुस्तक पढ़ने का नियम है। धैर्य, क्षमा, संयम, अहिंसा, शान्ति, पवित्रता आदि गुण विद्या से ही उत्पन्न हो सकते हैं। विद्या से चित्त की शुद्धि होती है। कर्त्तव्य-अकर्त्तव्य, सत्-असत्, झूठ-सच का ज्ञान होता है। "भूगर्भ में क्या छिपा पड़ा है ? आकाश के चमकते हुए तारे क्या हैं ?" ये तो दूर की बातें हैं, पर बिना विद्या के हम यह भी नहीं जान सकते कि "शरीर को स्वस्थ किस तरह रक्खें ? अपनी सन्तान का पालन-पोषण कैसे करें ? किसके साथ कैसा वर्ताव करें ?" आदि।

विद्या ही सच्चा बल है, विद्या ही सच्चा धन है। विद्या ही से आज यूरोप व अमेरिका के लोगों ने ऐसी उन्नति की है। विद्या ही से जापान इतना ऊँचा उठ गया। रेल, तार, हवाईजहाज़, जहाज़, बिना तार का तार, भाँति २ की कलें विद्या ही से

बनाये गये। विद्या ही से वह अरबों-खरबों का व्यापार कर रहे हैं। हमारी भारत-भूमि भी विद्या की खानि और विद्वानों की जननी है। व्यास, वाल्मीकि, पातंजलि, शंकर, दयानन्द, विवेकानन्द, गोखले आदि ने इसी की कोख से जन्म लिया। समय के फेर से यहाँ से विद्या का सूर्य अस्त हुआ। अज्ञान का अँधेरा चारों ओर फैल गया, पर अब ब्रिटिश शासन के प्रभाव से फिर पौ-फटने लगी है, भाग्याकाश में लालिमा दिखाई देने लगी है। आशा है कि, विद्या-सूर्य उदय होगा और हम उसके प्रकाश में उन्नति प्राप्त करेंगे।

अभ्यास

१—विद्या-सम्बंधी निबंध पर सूची (संकेत-वाक्य) लिखो और उस सूची पर स्वतंत्र लेख लिखो।

२—नीचे लिखे विषयों पर पहले संकेत-वाक्य लिख-कर फिर निबन्ध पूरा करो।

अ—पुस्तकावलोकन, इ—पुस्तकालय, उ—समाचार-पत्र, ऋ—इतिहास का ज्ञान, क—भूगोल का ज्ञान, ख—साहित्य का ज्ञान, ग—चित्रकारी (ड्राइङ्ग सीखने का लाभ)।

संतोष

संतोष मन के ऊपर निर्भर है। असंतोषी कभी सुखी नहीं होता। संतोषी थोड़े ही में सुखी हो जाता है। मनुष्य अपने अच्छे काम करने ही पर संतोष कर सकता है। कहीं २ संतोष भी बुरा है।

संतोष मनुष्य के मन के ऊपर निर्भर है। धन से मनुष्य को कभी संतोष नहीं हो सकता, जब तक कि वह स्वभाव से ही संतोषी न हो। असंतोषी मनुष्य कभी २ कहा करता है कि, मुझे अपने पड़ोसी के बराबर धन मिल जाय तो संतोष होगा; परन्तु

यदि उसे उतना धन मिल जाय तो संतोष नहीं होता और वह अधिक धन की इच्छा करने लगता है। इसका कारण उसका स्वभाव से ही असंतोषी होना है। इच्छित-वस्तु के पाने-पर भी मनुष्य के सन्तुष्ट न होने का कारण यह है कि, उसकी इच्छाओं का कभी अन्त नहीं होता। प्रत्येक समय मनुष्य को नई इच्छाएँ उत्पन्न हुआ करती हैं। सबसे पहले एक ग़रीब मनुष्य कुछ रुपयों की इच्छा करता है। जब वे उसे मिल जाते हैं तो वह और भी अधिक धन की इच्छा करने लगता है। इसी तरह से वह समय कभी नहीं आता, जब उसे कोई इच्छा न रहती हो; परन्तु संतोषी मनुष्य थोड़े धन-पर ही आनन्दित रहता है।

संतोषी मनुष्य चाहे जिस स्थिति में हो, आनन्द से रहता है। यदि कोई मनुष्य बहुत ग़रीब हो तो उसे इसी बात में आनन्दित रहना चाहिये कि उसका स्वास्थ्य-धन, धनवान मनुष्य से अच्छा है। जो मनुष्य, मित्रहीन और कुटुम्बहीन है, उसे शोक न करना चाहिये, वरन् अपना समय पुस्तकों के पढ़ने तथा और ऐसे कामों में लगाना चाहिये, जिससे कि उसका तथा समाज का भला हो। जो सदा रोगी रहते हैं, उनको अपने मित्रों तथा सम्बन्धियों की प्रीति में ही प्रसन्न रहना चाहिये।

मनुष्य का सब से अधिक संतोष का वह समय है—जब उसे किसी अच्छे कार्य में सफलता प्राप्त होती है। यदि कोई मनुष्य किसी सत्कार्य्य के करने में पूरा परिश्रम करता है तो भी उसके हृदय को संतोष होता है। मनुष्य चाहे कितनी ही बुरी अवस्था में हो, परन्तु जब वह अपना कर्तव्य अच्छी तरह से कर लेता है तो उसकी आत्मा को पूरा आनन्द मिलता है।

संतोष तो एक अच्छी वस्तु है, परन्तु कभी २ संतोष करना भी सराहनीय नहीं है। अपने जीवन-आदर्श को उच्च न बनाना

और सदा अवनत-दशा में संतोष करना ठीक नहीं है। किसी गरीब भाई को बुरी दशा में देख-कर, उसकी दशा सुधारने का उपाय न करना, किसी मनुष्य के किये हुए अत्याचार को सह लेना और उसे उचित बदला न देना भी अपने कर्तव्य से विमुख होना है।

स्वार्थ

स्वार्थी मनुष्य का चरित्र; ऐतिहासिक उदाहरण; स्वार्थी मनुष्य को सच्चा सुख नहीं मिलता; स्वार्थी दयापात्र नहीं है। *

स्वार्थी मनुष्य सदा अपने सुख की इच्छा रखता है और दूसरे मनुष्यों के सुख की बिल्कुल परवाह नहीं करता। वह सदा अपने उद्देश्य-पूर्त्ति के प्रयत्न में लगा रहता है और चाहता है कि जितनी-भर पृथ्वी पर अच्छी वस्तुएँ हैं, वे सब उसे ही मिल जावें। जब उसके सुख की वस्तु मिल जाती है तो वह उसका उपभोग करता है और इस बात को नहीं सोचता कि उसके साथी सुख में हैं या नहीं। यदि किसी को दुःख देने पर भी उसे कोई वस्तु मिलती है तो वह उसका विचार न करके उस वस्तु को लेता है। इतिहास में ऐसे कई राजाओं के उदाहरण मिलते हैं, जो प्रजा का धन लूट-कर अपने स्वार्थ के लिये लगाते थे। जिनको अपने विलास के सिवाय प्रजा के सुख की बिल्कुल परवाह न थी। रोम में भी ऐसे कई बादशाह हुए हैं, जो कि अपना जीवन, सुख और विलास पूर्वक बिताने के लिये ही राज्य का काम अपने हाथ में लेने का प्रयत्न करते थे। उसके लिये बड़े २ युद्ध करते थे, जिस में बहुत से मनुष्यों का संहार होता था। ऐसी स्वार्थपरता केवल राजाओं में ही नहीं, किन्तु साधारण मनुष्यों में भी पाई जाती है। पृथ्वी के प्रायः प्रत्येक भाग में ऐसे मनुष्य हैं, जो अपने सुख के लिये दूसरों के अधिकार छीन लेते हैं। वे इस बात की ओर बिल्कुल

ध्यान नहीं देते कि उनके अधिक सुख-भोग के कारण, कई ग़रीबों को बहुत दुःख सहना पड़ता है। स्वार्थी मनुष्य अपने मित्रों और बन्धुओं के हक़ भी छीन लेता है; इस कारण से, वह सारे कुटुम्ब और मित्रों की घृणा का पात्र हो जाता है तो भी वह अपनी स्वार्थ-परता नहीं छोड़ता। जब सब घृणा से देखते हैं तो उसे हार्दिक-शान्ति नहीं मिलती। मनुष्य को शान्ति तब मिलती है जब उसके समाज के मनुष्य उससे प्रसन्न रहें। इसलिये अपने समाज के मनुष्यों को प्रसन्न रखना अत्यावश्यक है। सच पूछा जाय तो मनुष्य को स्वार्थ-त्याग में ही सुख है। जब कोई मनुष्य अपनी समाज के लिये कोई भला काम करता है तब समाज को सुख तो होता ही है, परन्तु उसे भी सुख होता है। इसके सिवाय वह समाज की प्रीति का पात्र बन जाता है। परन्तु स्वार्थी मनुष्य को इस आनन्द स वंचित ही रहना पड़ता है। समाज की घृणा के कारण उसे जो हार्दिक-वेदना होती है, उससे वह अपनी सुख-सामग्री का भी उपभोग नहीं कर सकता। यदि वही मनुष्य स्वार्थ-परता छोड़-कर अपनी समाज का हितेच्छु बन जाय,तो उसे सुख और शान्ति दोनों मिल सकते हैं।

चित्तकी स्थिरता वा धीरज

क्या है। किनमें होती है। उसका महत्व—१ सैनिकों को, २ व्यापारियों को, ३ सम्बन्धियों को। यह गुण अभ्यास से बढ़ सकता है।

हो समय कैसा ही कठिन, दृढ़-चित्त होकर मत डरो;
पड़ जाँय लाखों विघ्न पर, कर्त्तव्य तुम अपना करो;
कहते न तुम घर-घर फिरो, बाधा हरो बाधा हरो;
निज बाहुबल से नाव खे-कर, दुःख का सागर तरो।

स्थिर-चित्त-वाला मनुष्य कठिनाई के आने पर विचलित नहीं होता, किन्तु धैर्य के साथ बात समझता है और समय के अनुसार उचित काम करता है। जो मनुष्य किसी समाज के नेता रहते हैं, उनके चित्त का स्थिर होना एक स्वाभाविक गुण है। जब कोई मनुष्य किसी आपत्ति के आने पर विह्वल हो जाता है और यह नहीं सोच सकता कि उचित कार्य्य क्या है ? तब शान्त-चित्त-वाला मनुष्य, उन्हें धैर्य से उस आपत्ति का सामना करने और उसके निवारण करने का उपाय बतलाता है। उच्चपद पर स्थिर-चित्त-वाले मनुष्य को ही नियत करना चाहिये; क्योंकि केवल वही, साहस धारण-करके विपत्ति का सामना करता है। वह अपनी स्थिति को अच्छी तरह से जान-कर समयानुकूल चाल-चलने की अपने साथियों को सलाह देता है। ऐसा मनुष्य जल्दी बात समझ लेने वाला भी हो, जिससे कि वह मौक़ा हाथ से जाने न दे और उचित कार्य्य करले। जो मनुष्य शान्त-चित्त होकर समयानुकूल काम नहीं करता, वह किसी काम का नहीं।

ऐसा प्रायः देखा गया है कि, प्रसिद्ध पुरुष भी जब कठिन काम आ जाता है तो धैर्य्य खो देते हैं और ऐसा काम कर बैठते हैं, जिसके कारण उनकी जग में हँसी होने लगती है। उसका कारण, चित्त की स्थिरता का अभाव है। वे फिर यह नहीं सोच सकते कि क्या करना चाहिये। ऐसे मनुष्यों को उच्चपद पर कभी नियत न करना चाहिये। यदि कोई सेनापति युद्ध के समय में धैर्य्य छोड़ देवे तो वह सब काम बिगाड़ देता है। वह चाहे कितना ही ईमानदार और राजभक्त हो, परन्तु उस समय वह किसी काम का नहीं—सेनापति के पद के लिये अयोग्य है। व्यापारी, जो युद्ध की झूठी खबरें सुन-कर और बाज़ार के भाव की परवाह न करके अपना भाव तेज़ या मंदा कर देता है—टोटे में पड़ता है। जो मनुष्य बेंक्कों की स्थिति का पूरा ज्ञान करके रुपया खींच लेते

हैं, अथवा उसके हिस्से मोल ले लेते हैं, वे भी अपने और दूसरे को हानि पहुँचाते हैं। इससे मनुष्य को, कोई भी काम बिना अच्छी तरह से सोचे और उसका अच्छी तरह से ज्ञान प्राप्त किये, नहीं करना चाहिये। फ़ायदे में वे ही मनुष्य रहते हैं जो बिना समझे जन-समूह का अनुकरण नहीं करते; किन्तु किसी भी काम को सोच-विचार के हाथ में लेते हैं।

'चित्त की स्थिरता' एक स्वाभाविक-गुण है; परन्तु प्रयत्न और अभ्यास से भी मनुष्य स्थिर-चित्तवाला हो सकता है। जिस मनुष्य की मानसिक-शक्तियों का विकास बुद्धि-द्वारा हो गया है और जो मनुष्य बलवान और स्वस्थ-शरीर वाला है, वह किसी कठिन समय पर बुद्धि के साथ काम करता है और मौक़े पर अपना काम निकालने से नहीं चूकता। परन्तु जिस मनुष्य में मानसिक और शारीरिक बल नहीं होता वह तुरन्त ही विचलित हो जाता है। वह यह नहीं सोच सकता कि क्या करना चाहिये? जिस विषय का मनुष्य को पूरा ज्ञान रहता है उससे सम्बन्धित, किसी काम में बहुत कम भूल करता है। क्योंकि वह जानता है "उसमें कौनसी भूलों के होने की अधिक संभावना है"। वह उन भूलों से बचाव के उपाय भी सोच लेता है। यदि सेनापति को लड़ाई के विषय की सब बातें मालूम हों, तो वह शीघ्र ही समयोचित काम करेगा और कभी विचलित न होगा। इसी तरह यदि माता को बच्चों की सब बीमारियों का ज्ञान हो तो वह अपने बालक को बीमार देख-कर घबड़ायगी नहीं, वरन् उस बीमारी के लिये उचित औषधि देने का प्रबन्ध करेगी।

पश्चात्ताप

क्या है? उन्नति के लिये पश्चात्ताप की आवश्यकता। पश्चात्ताप से भविष्य-उन्नति की संभावना। पश्चात्ताप ही दंड है।

किसी कर्त्तव्य के न करने अथवा किसी अनुचित कार्य्य के करने के पश्चात् जो हृदय को वेदना होती है उसे पश्चात्ताप कहते हैं। आत्मोन्नति के लिये पहले पश्चात्ताप के ज्ञान की आवश्यकता है। मनुष्य को चाहिये कि प्रत्येक अनुचित काम करने पर पश्चात्ताप करे! क्योंकि पश्चात्ताप करने वाला मनुष्य दूसरी बार उस अनुचित काम को न करेगा, जिसके ऊपर कि उसने पश्चात्ताप किया है। यदि चोर को चोरी करने पर लज्जा नहीं आती तो वह फिर चोरी करेगा। यदि किसी मनुष्य को झूठ बोलने पर पश्चात्ताप नहीं होता, तो वह सदा झूठ ही बोला करेगा।

जो सदा अपराध करते रहते हैं, उनको भी किसी समय 'हार्दिक-वेदना' अपने अनुचित कार्यों पर होती है। जो मनुष्य अपने किये हुए अपराधों पर पश्चात्ताप प्रकट करता है, वह मानों अपने अपराधों के लिये ईश्वर से क्षमा माँगता है। यदि पश्चात्ताप सच्चा हो, तो वह फिर वैसा काम कभी नहीं करता। जो मनुष्य स्वभाव से ही अपराधी हो उसको सच्चरित्र बनाने का एक ढंग यह भी है कि उससे अनुचित कामों पर पश्चात्ताप कराया जाय; क्योंकि पश्चात्ताप से अपने किये हुये अपराधों पर शोक प्रकट करना ही नहीं प्रत्युत आगे उन अपराधों का न करना भी होता है। पश्चात्ताप मनुष्य तब ही करेगा जब उसे इस बात का निश्चय हो जायगा कि जो काम उसने किया है वह हर तरह से बुरा है। यदि किये हुए काम में उसे कुछ भी भलाई दीखेगी तो उस पर वह पश्चात्ताप न करेगा।

पश्चात्ताप केवल बाहरी ही नहीं, किन्तु हार्दिक होना चाहिये। यदि कोई लड़का सज़ा से बचने के लिये अपने शिक्षक से कोई अपराध न करने की प्रतिज्ञा कर दे तो वह पश्चात्ताप नहीं है। पश्चात्ताप होगा तब, जब वह स्वयं अपना अपराध स्वीकार करे और उसके कारण दंड भी सहने को उद्यत हो। ऐसे समय में

पश्चात्ताप करने वाले को दंड देना उचित नहीं। क्योंकि पश्चात्ताप द्वारा मनुष्य को हार्दिक-वेदना होती है, उसका दु:ख, दंड के दु:ख से भी बढ़ कर होता है।

प्रसन्नता

१—प्रसन्न मनुष्य का चरित्र, २ प्रसन्नता सुख की जड़ है, ३ मनुष्य अस्वस्थ होने पर भी प्रसन्न रह सकता है, ४ प्रसन्न-चित्त-वाला अपना काम अच्छी तरह करता है, ५ स्वास्थ्य-नियम-पालक अपने चित्त को प्रसन्न रख सकता है।

प्रसन्न-चित्त-वाला चाहे जिस दशा में हो—उदास नहीं होता। विपत्तियाँ साधारण मनुष्य को बिल्कुल उदास कर देती हैं; वे प्रसन्न-चित्त-वाले पर कुछ असर नहीं कर सकतीं। वही मनुष्य सुख से रह सकता है जो आपत्तियों का सामना करता है और विचलित नहीं होता। प्रसन्नता ही मनुष्य के सुख की जड़ है; क्योंकि मनुष्य बुरी अवस्था में होकर भी यदि प्रसन्न रहे तो वह सुखी है और अच्छी स्थिति के होने पर भी उदास रहा तो वह दु:खी है। जो मनुष्य धनहीन होने पर भी प्रसन्नचित्त रहता है, वह एक धनिक और उदास मनुष्य से अच्छा है। संपत्ति से वह सुख प्राप्त नहीं हो सकता जो कि प्रसन्नता से होता है।

मनुष्य के सुख और दु:ख का कारण उसका मन होता है, बाहरी वस्तुएँ नहीं। यही कारण है कि जो मनुष्य मन से प्रसन्न है वही सुखी है। प्रसन्न-चित्त-वाला मनुष्य अपना काम भी अच्छी तरह से कर सकता है, क्योंकि कैसा ही काम क्यों न हो, वह उसे करने से नहीं हिचकता और उसे कष्टसाध्य देख कर निराश नहीं होता। उसे प्रत्येक कठिन काम करने में सफलता प्राप्त करने का रहस्य मालूम है और वह प्रसन्नता है। वह उसे संसार के प्रत्येक काम में सहायता देती और सफलता प्राप्त कराती है।

जो मनुष्य दिन भर रोता हुआ काम करके और उसी पर सोचता हुआ उदास रहा आता है, उसे कभी सुख नहीं होता। प्रसन्न-चित्त-वाले मनुष्य को उसी काम के करने में विशेष आनन्द आता है। अपना काम पूरा कर लेता है तो सदा उसी को नहीं सोचता; किन्तु जो काम उसके आगे रहता है उसकी ओर ध्यान देता है और दत्तचित्त हो उसे करने लगता है। इससे उसका काम भी अच्छा होता है और उसे अधिक व्यथा भी नहीं मालूम पड़ती। इसी से कहा है कि प्रसन्नता सफलता का साधन है।

प्रसन्नता ईश्वर की दैन नहीं है, वह प्रत्येक मनुष्य में हो सकती है। प्रसन्न मनुष्य को तो आनन्द सा ही है; परन्तु उसकी प्रसन्नता से उसके साथियों को भी आनन्द होता है। जिस तरह उदास मनुष्य की सूरत सब को बुरी मालूम होती है, उसी तरह प्रसन्न पुरुष का मुख सब को अच्छा मालूम होता है।

मनुष्य को अपना स्वास्थ्य अच्छा रखने के लिये भी प्रसन्नता की आवश्यकता है। जो मनुष्य प्रसन्नचित्त होते हैं वे अच्छे स्वास्थ्य वाले होते हैं और उदास मनुष्यों का स्वास्थ्य सदा बिगड़ा हुआ रहता है। यह वैद्यों का मत है कि उदास रहने से पाचन-शक्ति घट जाती है। जिसके घटने से सब प्रकार के रोग उत्पन्न होते हैं।

मित्रता

मित्रता से सुख बढ़ता है। विपत्ति में दुःख कम होता है। आपत्ति में धीरज बँधाती है। बुरे मित्रों से हानि है।

मित्रता करने से मनुष्य के सुखों की वृद्धि और दुखों का नाश होता है। किसी मनुष्य को किसी काम में सफलता प्राप्त होती है तो उसको और उसके मित्रों को आनन्द होता

है। यदि किसी कारण से उसे दुःख होता है तो उसके मित्र सहानुभूति दिखाते हैं और धैर्य्य दिलाते हैं, जिससे उसे अधिक सुख मालूम होता है। जिस मनुष्य का मित्र नहीं है, उसे सुख के समय में पूरा आनन्द नहीं आता और दुःख के समय दुःख दूना मालूम होता है। मित्रहीन-मनुष्य को धन, वैभव और मान से कोई लाभ नहीं होता; क्योंकि इनका उपभोग मनुष्य अच्छी तरह से तब ही कर सकता है जब उसके मित्र होवें। यदि मनुष्य अपनी संपत्ति द्वारा मित्रों का भी कुछ भला करता है तो उसे विशेष आनन्द होता है।

जब हम कोई नया काम हाथ में लेते हैं, तब हमें मित्रों की आवश्यकता होती है। मित्र-हीन-मनुष्य विना सलाह के नये काम में हाथ लगाने से हिचकता है; परन्तु मित्र-वाला-मनुष्य अपने मित्रों द्वारा उत्साहित होकर साहस से नये काम में हाथ लगाता और उसे उसमें सफलता भी मिलती है। प्रत्येक मनुष्य अपने काम के विषय में यह भी जानना चाहता है कि वह जनसमुदाय को अच्छा मालूम होगा या बुरा। यह बात वह मित्रों द्वारा ही जान सकते हैं, क्योंकि चापलूस झूठी तारीफ़ कर देते हैं और अवसर निकलने पर बड़ी निन्दा करने लगते हैं। मित्रों की सच्ची आलोचना से मनुष्य को अपनी भलाई और बुराई मालूम हो जाती है और वह अपने दुर्गुणों को दूर करने के प्रयत्न में लग जाता है।

मित्रों से, सबसे अधिक लाभ आपत्ति के समय में होता है। जब मनुष्य को बहुत सी आपत्तियाँ आकर घेर लेती हैं और वह हताश हो जाता है, तो आपत्ति से बचाने वाले व धैर्य्य बँधाने वाले मित्र ही हुआ करते हैं। सच्चे मित्र, अपने मित्रों को बड़ी कठिनाइयों से बचा लेते हैं। मित्रहीन-मनुष्य को विपत्ति के समय कोई सहारा नहीं रहता है।

मित्र बनाते समय प्रत्येक मनुष्य को मित्र बना लेना भूल है। ठगनेवाले और मीठे वचन बोलने वाले बहुत मिलते हैं, परन्तु ऐसे मित्रों से मनुष्य को सदा सावधान रहना चाहिये। ऐसे मित्र बड़े स्वार्थी होते हैं और सिवाय लूटने के, मित्र को कोई लाभ नहीं पहुँचाते। मित्र चाहे थोड़े हों, परन्तु सच्चे होने चाहियें। किसी अपरिचित व्यक्ति को कभी एकाएकी मित्र नहीं बना लेना चाहिये। सद्व्यवहार तो सब ही से होना चाहिये, परन्तु मित्र उसी को बनाओ जिसकी परीक्षा करली हो।

काम।

१ भावार्थ, २ काम सुख की जड़ है, ३ बिना काम के उन्नति नहीं होती, ४ काम से सफलता होती है।

किसी अर्थ-साधन के हेतु मानसिक अथवा शारीरिक परिश्रम को काम कहते हैं। आजकल जीवन-निर्वाह के हेतु जो उद्योग किया जाता है, उसे काम कहते हैं। जब कोई काम कठिन होता है और उसमें अधिक परिश्रम की आवश्यकता होती है तो उसे मनुष्य बुरा कहने लगते हैं; परन्तु उसे बुरा नहीं कहना चाहिये। काम कोई भी हो, उसे घृणित नहीं कह सकते, यदि वह ईमानदारी के साथ किया जावे। किसी भी व्यवसाय को नीच कहना भूल है।

मनुष्य को जीवन-निर्वाह के लिये काम अवश्य ही करना चाहिये। जिन मनुष्यों के पास बहुत धन रहता है, वे प्रायः कोई काम नहीं करते। परन्तु ऐसे मनुष्यों की कोई प्रशंसा नहीं करता। प्रत्येक मनुष्य को कोई न कोई काम अवश्य करना चाहिये, जिससे उसका तथा समाज का भला हो। बाल्यावस्था से ही किसी काम के करने का निश्चय कर लेना चाहिये और उसी के अनुसार शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये। जो मनुष्य अपना

जीवन बिना कोई काम किये आलस्य में बिताते हैं; उनकी मानसिक और शारीरिक अवस्था बुरी रहती है और वे अपना जीवन सुख से नहीं व्यतीत कर सकते। जो मनुष्य किसी काम में लगा रहता है और उसी के द्वारा धन कमा कर अपना निर्वाह करता है, वह अपना जीवन सुख से बिताता है।

प्रत्येक मनुष्य को किसी काम के करने में विशेष आनन्द आता है। मनुष्य को वही काम करना चाहिये जो उसको अच्छा लगे; क्योंकि वह मनुष्य उसी काम के करने में अच्छी सफलता पा सकता है। नित्य के काम के सिवाय मनुष्य को चाहिये कि वह ऐसा भी कोई काम चुन ले, जो नित्य के काम से भिन्न प्रकार का हो। जब किसी समय मनुष्य अपना मामूली काम करते २ थक जाता है तब दूसरा काम करना बहुत अच्छा मालूम होता है। कई मनुष्य गाना बजाना इत्यादि सीख लेते हैं, जो दैनिक काम के परिश्रम की व्यथा को दूर कर, उनके चित्त को प्रसन्न कर देता है।

जो मनुष्य अपना निर्वाह मानसिक-परिश्रम द्वारा करते हैं, उन्हें दिन में एक बार शारीरिक-परिश्रम करना बहुत सुखप्रद और लाभकारी होगा। इसी तरह जो मनुष्य सदा शारीरिक परिश्रम करते हैं, उन्हें प्रतिदिन एक या दो घंटे कुछ पढ़ने लिखने में बिताना चाहिये। यदि मनुष्य सदा एक ही काम को करता रहता है तो उसे जीना भी कठिन मालूम होता है। इससे कामों में कुछ भिन्नता होनी चाहिये।

अभ्यास

१—हरएक निबंध को पढ़-कर उन पर स्वतंत्र संकेत वाक्य (सूची) लिखो।

२—हर एक सूची पर एक २ निबंध लिखो।

३—नीचे लिखे हुए विषयों पर सूची तयार करके हरएक पर अलग अलग निबन्ध लिखो।

क्रोध, ईर्षा, द्वेष, ज्ञान, भक्ति, मद, मोह, सत्य, मिथ्या, शिष्टाचार, सदाचार, अत्याचार, दुराचार, दंभ, कपट, छल, प्रेम, व्याकुलता, आत्मबल, तपस्या आदि।

आलोचनात्मक-निबंध।

व्याख्यात्मक-प्रबंधों के प्रकरण में दो एक आलोचनात्मक प्रबंध भी आ गये हैं। कहीं २ व्याख्या करते २ आलोचना की झलक भी आगई है। पर विशेष रूप से आलोचनात्मक प्रबंधों के नमूने इस भाग में नहीं दिये जाते। इस पुस्तक के दूसरे भाग अर्थात् "आदर्श लेखमाला" में दिये जायँगे। सर्वत्र आलोचनात्मक विषय पृथक् नहीं होते। जब किसी वर्णन; चरित्र, घटना, तथा व्याख्या को आलोचमात्मक दृष्टि से देखने लग जाँय तो उसी में आलोचना का भाव आ जायगा। यहाँ पर महाराज तुलसीदास जी के जन्म-समय पर भारतीय-हिन्दु-जाति की परिस्थिति कैसी थी उसकी एक झलक छोटे से निबंध में दिखाई जाती है। दूसरे भाग में आलोचनात्मक प्रबंधों के अतिरिक्त विविध-विषयों पर बहुत ही आवश्यकीय सामयिक और शिक्षाप्रद सिद्धहस्त लेखकों द्वारा लिखे हुए प्रबंध होंगे।

तुलसी-जन्मकालीन-परिस्थिति ।

उस समय संसार की सब से पुरानी सभ्यताभिमानिनी-जाति का जीवन घोर संकट में फँस चुका था। प्रेम, सौहार्द्र और सहानुभूति के पवित्र बन्धन जीर्ण हो चुके थे। ईर्षा, द्वेष, कलह और वाह्याडम्बरों ने आर्ष-कालीन निःश्रेयस और अभ्युदय वाले आदर्शों को एकदम विलुप्त कर दिया था। अहम्मन्यता-जन्य मिथ्या ज्ञान का चारों ओर प्रसार हो रहा था। इन्द्रिय-जन्य-विलासिता ने जीवन की प्रगति ही बदल दी थी। समाज की कुत्सित और घृणित भावनाएँ स्वार्थ-क्षेत्र में ताण्डव-नृत्य कर रही थीं। "गुरु-शिष अन्ध-बधिर कर लेखा, एक न सुनहिं एक नहिं देखा" के चारों ओर ज्वलन्त उदाहरण दिखाई पड़ रहे थे। वैदिक धर्म की मत-विभिन्नता शत्रुता के रूप में परिणत हो चुकी थी। साहित्य में कुत्सित और विलासी भावों ने स्थान पाकर जनता के हृदय और मस्तिष्क को कलुषित कर दिया था। उस समय की आन्तरिक स्थिति तो ऐसी थी ही, वाह्य-परिस्थिति भी नितान्त निरापद नहीं थीं। तीन चार सौ वर्ष पर्य्यन्त क्रमागत-आक्रमणों से भारत के अधिकांश विभागों में यवन-प्राधान्य स्थापित हो चुका था। एक ओर सैनिक-शक्ति का केन्द्र राजा मानसिंह व राजा पृथ्वीसिंह अकबर के दरबारी होने का फ़ख्र करते थे; दूसरी ओर राजा बीरबल और टोडरमल मुग़ल-साम्राज्य के विस्तार का उपाय ढूँढ़ निकालने में तत्पर थे। राष्ट्र के कवि, मुग़ल सम्राट् का यशोगान का, और पण्डित, सम्राट् की विद्वत्परिषद में वाद-प्रतिवाद का अवसर पा जाने को पूर्ण सौभाग्य समझते थे। इस प्रकार जब कि हिन्दू-जाति का भाग्याकाश घोर अनिष्टान्धकार से व्याप्त था, उसी सयय प्रकाशमान पिण्ड के रूप में महाकवि गोस्वामी तुलसीदास का प्रादुर्भाव हुआ।

उपसंहार ।

इस छोटी पुस्तक में अधिक निबंध नहीं दिये जा सकते न देने की आवश्यकता ही है । इसमें रचना के आदर्श और अभ्यास पर अधिक जोर दिया गया है । अनन्त ज्ञान-भंडार, अपरमित भाषा-रहस्य और विविध प्रकार की रचना-शैली के लिये कोई एक पुस्तक 'अलम्' हो सकती है, ऐसा विचार भी करना भूल है । ज्ञानोपार्जन के जितने साधन स्वयं देखना सुनना, अनुभव करना, विचार करना आविष्कार करना, प्राकृतिक और सामाजिक रहस्यों को समझना, दैहिक दैविक और भौतिक विकारों का विश्लेषण करना तथा दूसरों के अनुभूत-ज्ञान को उनसे या उनके पत्रों, लेखों पुस्तकों, ग्रंथों वा विविध-कौशलों द्वारा प्राप्त करके मनुष्य ज्ञानी बनता है । हरएक के लिये न यह आवश्यक ही है न संभव ही कि वह पूर्ण ज्ञानी हो जाय । साधारणतः जितना ज्ञान प्राप्त हो वह अभ्रान्त और परिमार्जित हो । और उस को भाषा की रीति के अनुसार प्रगट करने में समर्थ हो। प्राप्त किये हुए विचारों को ठीक २ रीति से परमार्जित (साधु) भाषा में व्यक्त करने का अभ्यास 'रचना-शिक्षा' है। बिना अभ्यास के अच्छे २ पंडित. विद्वान् तथा ज्ञानी पुरुष जब कुछ लिखने बैठते हैं तो, या तो बिल्कुल लिख ही नहीं सकते अथवा पूर्ण सफल नहीं होते । स्कूलों में जो कुछ उन्हें ज्ञान प्राप्त होता है उसे लिखकर ठीक रीति से प्रगट भी कर सकें इसलिये विद्यार्थियों को रचना-शिक्षा देना आवश्यक हैं । अपनी पाठ्य-पुस्तकों से, साधारण पढ़ने योग्य पुस्तकों से, सामयिक पत्र-पत्रिकाओं के निबन्धों से, भद्रपुरुषों के उपदेश व बातों से, सज्जनों के व्यवहार से, सामाजिक रीति-

नीति—मेला, विवाह, अभिनय तथा विविध प्रकार के खेलों से ज्ञानार्जन करें; वाक्य-विलास का रहस्य समझें। सुलेखक बनकर अपना और अपने देश, समाज तथा धर्म का हित-साधन करें। यह पुस्तक तो केवल ऐसा वनाने के लिये एक छोटासा साधन मात्र है। इसीलिये १००। ५० विषयों पर निबंध लिखने का अर्थ तो यही होता कि रचना के ज्ञान की सीमा इसी पुस्तक के अन्दर मर्य्यादित कर दी जाय। इस पुस्तक में दिये हुए विषय पर विद्यार्थी दुबारा लेख लिखें तो भाषा पुस्तक की नहीं होनी चाहिये। केवल पुस्तक से भाव लेकर अपने वाक्यों में उसे लिखना चाहिये। पुस्तक के वाक्य लिखने में रचना का अभ्यास नहीं हो सकता वरन् अनुकरण का अभ्यास होता है। हाँ इस पुस्तक के दूसरे भाग में ज्ञातव्य-विषयों पर अधिक निबंध देने की चेष्टा करेंगे।

॥ इति शुभम् ॥

शुद्धि-पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२	४	श्रोत	स्रोत
४	१६	,,	,,
६	४	खद्दर	खद्दर
१७	२०	रुग्न	रुग्ण
७०	१२	अर्जुन ने	अर्जुन के
९६	११	हाथ धोना	हाथ होना
९८	७	उसके	उसका
१०३	२५	जो मैं पुस्तकें	जो पुस्तकें
१०५	१६	वहा	वही
१२३	१५	आपेक्षित	अपेक्षित
१३१	८	आनुसंगिक	आनुषङ्गिक
१४२	८	जाहजहाँ	शाहजहाँ

नीति—मेला, विवाह, अभिनय तथा विविध प्रकार के खेलों से ज्ञानार्जन करें; वाक्य-विलास का रहस्य समझें। सुलेखक बनकर अपना और अपने देश, समाज तथा धर्म का हित-